www.rtf-usa.com

वेस्टमिन्स्टर विश्वास के मानक

वेस्टमिन्स्टर विश्वास के अंगीकार-कथन
वेस्टमिन्स्टर विस्तृत मसीही धर्म-प्रश्नोत्तरी
वेस्टमिन्स्टर संक्षिप्त मसीही धर्म-प्रश्नोत्तरी

THE WESTMINSTER STANDARDS:

THE WESTMINSTER CONFESSION OF FAITH
THE WESTMINSTER LARGER CATECHISM
THE WESTMINSTER SHORTER CATECHISM

RTF-USA WESTMINSTER STANDARDS SERIES

वेस्टमिन्स्टर विश्वास के मानक

वेस्टमिन्स्टर विश्वास के अंगीकार-कथन
वेस्टमिन्स्टर विस्तृत मसीही धर्म-प्रश्नोत्तरी
वेस्टमिन्स्टर संक्षिप्त मसीही धर्म-प्रश्नोत्तरी

The Westminster Standards

The Westminster Confession of Faith
The Westminster Larger Catechism
The Westminster Shorter Catechism

Originally published 1647–9 as the *Westminster Confession of Faith* by the Westminster Assembly and the General Assembly of the Church of Scotland.

English Edition Published in London and Edinburgh.

Hindi Edition © 2024 by:

Reformation Translation Fellowship (RTF-USA)
3026 6th Ave.
Beaver Falls, PA 15010
www.rtf-usa.com

Contact Information: rtfdirector@gmail.com

FOR FREE DISTRIBUTION ONLY – NOT FOR SALE

विषय सूची

वेस्टमिन्स्टर विश्वास के अंगीकार-कथन........................ 1
अध्याय 1 – पवित्रशास्त्र (बाइबल) के विषय में........ 1
अध्याय 2 – परमेश्वर, और पवित्र त्रीएक परमेश्वर के विषय में.. 6
अध्याय 3 – परमेश्वर के अनन्त विधान (Decree) के विषय में.. 8
अध्याय 4 – सृष्टि की रचना के विषय में................. 10
अध्याय 5 – परमेश्वर के दिव्य प्रबंधन (Providence) के विषय में... 11
अध्याय 6 – मनुष्य का पाप में गिरने, पाप और इसके परिणामस्वरूप दण्ड के विषय में............................ 14
अध्याय 7 – मनुष्य के साथ परमेश्वर की वाचा के विषय में.. 16
अध्याय 8 – मध्यस्थ यीशु ख्रीष्ट के विषय में............ 18
अध्याय 9 – स्वतंत्र इच्छा के विषय में.................... 21
अध्याय 10 – प्रभावशाली बुलाहट के विषय में......... 23
अध्याय 11 – धर्मी ठहराए जाने (धर्मीकरण) के विषय में.. 25
अध्याय 12 – लेपालकपन के विषय में.................... 27
अध्याय 13 – पवित्रीकरण के विषय में.................... 27
अध्याय 14 – उद्धार वाले विश्वास के विषय में.......... 29
अध्याय 15 – जीवन के लिए पश्चाताप के विषय में..... 30
अध्याय 16 – भले कार्यों के विषय में....................... 32
अध्याय 17 – संतों का अंत तक दृढ़ बने रहने के विषय में.. 34

अध्याय 18 – अनुग्रह एवं उद्धार के आश्वासन के विषय में.. 36
अध्याय 19 – परमेश्वर की व्यवस्था के विषय में...... 38
अध्याय 20 – मसीही स्वतंत्रता, एवं विवेक की स्वतंत्रता के विषय में... 41
अध्याय 21 – मसीही आराधना, एवं सब्त के दिन के विषय में.. 43
अध्याय 22 – वैध शपथ एवं व्रत के विषय में.......... 46
अध्याय 23 – नागरिक मजिस्ट्रेट (न्यायाधीश) के विषय में.. 49
अध्याय 24 – विवाह और तलाक के विषय में......... 51
अध्याय 25 – कलीसिया के विषय में..................... 53
अध्याय 26 – संतों की संगति के विषय में.............. 55
अध्याय 27 – मसीही संस्कारों (Sacraments) के विषय में.. 56
अध्याय 28 – बपतिस्मा के विषय में...................... 57
अध्याय 29 – प्रभु भोज के विषय में....................... 59
अध्याय 30 – कलीसियाई द्वारा निन्दा प्रस्तावों के विषय में.. 62
अध्याय 31 – मसीही धर्म महासभाओं (Synods) एवं मसीही परिषदों (Councils) के विषय में................. 63
अध्याय 32 – मृत्यु के पश्चात मनुष्यों की अवस्था, एवं मृतकों के पुनरुत्थान के विषय में........................... 65
अध्याय 33 – अन्तिम न्याय के विषय में................. 66
वेस्टमिन्स्टर विस्तृत मसीही धर्म-प्रश्नोत्तरी 69
वेस्टमिन्स्टर संक्षिप्त मसीही धर्म-प्रश्नोत्तरी..................... 157

वेस्टमिन्स्टर विश्वास के अंगीकार-कथन

अध्याय 1. पवित्रशास्त्र (बाइबल) के विषय में

1. यद्यपि प्रकृति का ज्ञान, और सृष्टि एवं दिव्य प्रबन्धन के कार्य, अब तक परमेश्वर की भलाई, बुद्धि, और सामर्थ्य को प्रकट करते हैं, जिससे मनुष्य निरुत्तर हो जाते हैं;[क] फिर भी वे परमेश्वर के उस ज्ञान पर कार्य करने में, और उसकी उस इच्छा को पूरा करने में अपर्याप्त हैं, जो कि उद्धार के लिए आवश्यक है;[ख] इसलिए विभिन्न समयों पर, और विविध तरीकों से, कलीसिया के लिए स्वयं को प्रकट करने, और अपनी इच्छा को घोषित करने में प्रभु को प्रसन्नता हुई;[ग] और उसके पश्चात्, सत्य के बेहतर संरक्षण एवं प्रचार के लिए, और शरीर की भ्रष्टता, और शैतान एवं संसार के द्वेष के विरुद्ध, कलीसिया की अधिक पक्की स्थापना एवं शान्ति के लिए, उसे सम्पूर्ण रूप से लेख के रूप में समर्पित किया;[घ] जो पवित्रशास्त्र (बाइबल) को अति आवश्यक बनाता है;[ङ] क्योंकि अपने लोगों के लिए परमेश्वर द्वारा अपनी इच्छा को प्रकट करने के वे पूर्व तरीके अब समाप्त हो गए हैं।[च]

क. *भजन संहिता 19:1 – 3; रोमियों 1:19 – 20; 1:32; के साथ रोमियों 2:1; 2:14 – 15.* ***ख.*** *1 कुरिन्थियों 1:21; 2:13 – 14;* ***ग.*** *इब्रानियों 1:1.* ***घ.*** *नीतिवचन 22:19 – 21; यशायाह 8:19 – 20; मत्ती 4:4, 7, 10; लूका 1:3 – 4; रोमियों 15:4.* ***ङ.*** *2 तीमुथियुस 3:15; 2 पतरस 1:19.* ***च.*** *इब्रानियों 1:1 – 2.*

2. पवित्रशास्त्र (बाइबल), या लिखित परमेश्वर के वचन के नाम के तहत, अब पुराने एवं नए नियम की सभी पुस्तकें सम्मिलित हैं, जो इस प्रकार से हैं:

पुराने नियम की पुस्तकें		
उत्पत्ति.	एज्रा.	होशे.
निर्गमन.	नहेम्याह.	योएल.
लैव्यव्यवस्था.	एस्तेर.	आमोस.

गिनती. व्यवस्थाविवरण. यहोशू. न्यायियों. रूत. 1 शमूएल. 2 शमूएल. 1 राजा. 2 राजा. 1 इतिहास. 2 इतिहास.	अय्यूब. भजन संहिता. नीतिवचन. सभोपदेशक. श्रेष्ठगीत. यशायाह. यिर्मयाह. विलापगीत. यहेजकेल. दानिय्येल.	ओबद्याह. योना. मीका. नहूम. हबक्कूक. सपन्याह. हाग्गै. जकर्याह. मलाकी.
नए नियम की पुस्तकें		
मत्ती के अनुसार सुसमाचार. मरकुस के अनुसार सुसमाचार. लूका के अनुसार सुसमाचार. यूहन्ना के अनुसार सुसमाचार. प्रेरितों के काम. **पौलुस प्रेरित की पत्रियाँ.** रोमियों के नाम. 1 कुरिन्थियों. 2 कुरिन्थियों. गलातियों.	इफिसियों. फिलिप्पियों. कुलुस्सियों. 1 थिस्सलुनीकियों. 2 थिस्सलुनीकियों. 1 तीमुथियुस के नाम. 2 तीमुथियुस के नाम. तीतुस के नाम. फिलेमोन के नाम.	इब्रानियों के लिए पत्री. याकूब की पत्री. पतरस की 1 और 2 पत्रियाँ. यूहन्ना की 1, 2 और 3 पत्रियाँ. यहूदा की पत्री. प्रकाशितवाक्य.

ये सभी, विश्वास एवं जीवन हेतु नियम होने के लिए, परमेश्वर की प्रेरणा से दिए गए हैं।[क]

क. लूका 16:29, 31; इफिसियों 2:20; 2 तीमुथियुस 3:16; प्रकाशितवाक्य 22:18 – 19.

3. वे पुस्तकें जो सामान्य रूप से अपोक्रिफा (Apocrypha) कहलाती हैं, परमेश्वर की प्रेरणा से लिखे नहीं जाने के कारण, पवित्रशास्त्र की आधिकारिक ग्रन्थ-संग्रहण वाली पुस्तकें (Canonical Books) नहीं हैं; और इसलिए अन्य मानवीय लेखन के समान ही, परमेश्वर की कलीसिया में न तो उनका कोई अधिकार है, और न ही किसी अन्य रीति से उनका अनुमोदन किया जाना चाहिए, या उन्हें उपयोग में लाया जाना चाहिए।[क]

क. लूका 24:27, 44; रोमियों 3:2; 2 पतरस 1:21.

4. पवित्रशास्त्र का अधिकार, जिसके कारण उस पर विश्वास और उसका आज्ञापालन किया जाना चाहिए, किसी व्यक्ति या कलीसिया की गवाही पर आश्रित नहीं है, परन्तु पूर्ण रूप से परमेश्वर पर है (जो स्वयं सत्य है), जो उसका कर्ता है; और इस कारण इसको ग्रहण किया जाना चाहिए, क्योंकि यह परमेश्वर का वचन है।[क]

क. 1 थिस्सलुनीकियों 2:13; 2 तीमुथियुस 3:16; 2 पतरस 1:19, 21; 1 यूहन्ना 5:9.

5. पवित्रशास्त्र के प्रति उच्च एवं श्रद्धापूर्ण आदर के लिए हम लोग कलीसिया की गवाही से प्रभावित और प्रेरित हो सकते हैं;[क] और विषयवस्तु की दिव्यता, शिक्षा की प्रभावोत्पादकता, शैली की उत्कृष्टता, सभी भागों की सहमति, सम्पूर्ण पवित्रशास्त्र का विषय क्षेत्र (जो कि परमेश्वर को सारी महिमा देना है), मनुष्य के उद्धार के लिए एकमात्र मार्ग की इसकी पूर्ण खोज, अन्य अनेक अतुलनीय श्रेष्ठताएँ, तथा इसकी सम्पूर्ण सिद्धता, ऐसे तर्क हैं जिनके द्वारा यह स्वयं को परमेश्वर का वचन होने के निमित्त प्रचुर मात्रा में प्रमाण देता है; फिर भी, इसके अचूक सत्य और परमेश्वरीय

अधिकार के विषय में हमारा पूर्ण विश्वास एवं आश्वासन, पवित्र आत्मा के आंतरिक कार्य से है, जो वचन के द्वारा और इसके साथ हमारे हृदयों में गवाही देता है।[ख]

क. 1 तीमुथियुस 3:15. ख. यशायाह 59:21; यूहन्ना 16:13 – 14; 1 कुरिन्थियों 2:10 – 12; 1 यूहन्ना 2:20, 27.

6. परमेश्वर की सम्पूर्ण सम्मति, जो सभी बातों के सम्बन्ध में उसकी अपनी महिमा, मनुष्यों के उद्धार, विश्वास, और जीवन के लिए आवश्यक है, जिन्हें या तो पवित्रशास्त्र में स्पष्ट रूप से निर्धारित किया गया है, या भले एवं अनिवार्य परिणाम के द्वारा पवित्रशास्त्र से निकाला जा सकता है: जिसमें कभी भी कुछ भी जोड़ा नहीं जाना चाहिए, चाहे वह आत्मा के नए प्रकाशनों के द्वारा हो, या मनुष्यों की परम्परा के द्वारा।[क] फिर भी हम मानते हैं कि परमेश्वर के आत्मा का आंतरिक प्रकाशन वचन में प्रकट की गई ऐसी बातों की उद्धार देने वाली समझ के लिए आवश्यक है;[ख] और यह कि परमेश्वर की आराधना, कलीसिया का प्रशासन, जो मानवीय कार्यों एवं समाजों के लिए सामान्य हैं, इन्हें वचन के सामान्य नियमों के अनुसार, प्रकृति के ज्ञान और मसीही विवेक के द्वारा निर्देशित किया जाना चाहिए, और इनका पालन सर्वदा किया जाना चाहिए।[ग]

क. गलातियों 1:8 – 9; 2 थिस्सलुनीकियों 2:2; 2 तीमुथियुस 3:15 – 17; ख. यूहन्ना 6:45; 1 कुरिन्थियों 2:9 – 12. ग. 1 कुरिन्थियों 11:13 – 14; 14:26, 40.

7. पवित्रशास्त्र में सभी बातें अपने आप में एक समान रीति से स्पष्ट नहीं हैं, न ही वे सभी लोगों के लिए एक समान रीति से स्पष्ट हैं;[क] फिर भी उद्धार के लिए जिन बातों को जानना, विश्वास करना और पालन करना आवश्यक है, वे पवित्रशास्त्र में किसी न किसी स्थान पर इतनी स्पष्टता से प्रतिपादित एवं बताई गई हैं, कि न केवल विद्वान, बल्कि अशिक्षित मनुष्य भी सामान्य साधनों के समुचित उपयोग से उनके विषय में पर्याप्त समझ प्राप्त कर सकता है।[ख]

क. 2 पतरस 3:16. ख. भजन संहिता 119:105, 130.

8. इब्रानी भाषा में पुराना नियम (जो कि प्राचीन समय में परमेश्वर के लोगों की मूल भाषा थी), और यूनानी भाषा में नया नियम (जो इसके लेखन समय में अधिकांश जातियों में सामान्य रूप से ज्ञात थी), परमेश्वर द्वारा प्रत्यक्ष रूप से प्रेरित होने के कारण, और उसके अद्वितीय देखभाल और दिव्य प्रबंधन द्वारा सभी युगों में इसे शुद्ध रखे जाने के कारण, ये प्रामाणिक है;[क] इसलिए मसीही विश्वास के सभी विवादों में कलीसिया को अंततः उनसे अपील करनी चाहिए।[ख] परन्तु, चूँकि ये मूल भाषाएँ परमेश्वर के उन सभी लोगों को ज्ञात नहीं हैं, जिन्हें पवित्रशास्त्र पढ़ने का अधिकार एवं रुचि है, और जिन्हें परमेश्वर के भय में उन्हें पढ़ने और खोजने के लिए आज्ञा दी गई है,[ग] इसलिए प्रत्येक जातियों की सामान्य स्थानीय भाषा में उनका अनुवाद किया जाना चाहिए, जिनके पास वे पहुँचाई जाती हैं।[घ] ताकि परमेश्वर का वचन सभी लोगों में भरपूरी के साथ बसने पाए, और वे स्वीकृत रीतियों से उसकी आराधना करें,[ङ] और पवित्रशास्त्र से धीरज और शान्ति के द्वारा, आशा पा सकें।[च]

क. मत्ती 5:18. ख. यशायाह 8:20; यूहन्ना 5:39, 46; प्रेरितों के काम 15:15. ग. यूहन्ना 5:39. घ. 1 कुरिन्थियों 14:6, 9, 11 – 12, 24, 27 – 28. ङ. कुलुस्सियों 3:16. च. रोमियों 15:4.

9. पवित्रशास्त्र की व्याख्या या अर्थानुवाद का अचूक नियम पवित्रशास्त्र स्वयं है; और इसलिए, जब पवित्रशास्त्र के किसी खण्ड के सच्चे एवं पूर्ण अर्थ के विषय में प्रश्न हों, तो उसे उन अन्य स्थानों पर खोजा और समझा जाना चाहिए, जो अधिक स्पष्ट रूप से बात करते हैं।[क]

क. प्रेरितों के काम 15:15; 2 पतरस 1:20 – 21.

10. वह सर्वोच्च न्यायाधीश, जिसके द्वारा मसीही विश्वास के सभी विवादों का निर्णय किया जाना चाहिए, और मसीही महासभाओं के सभी आदेशों, प्राचीन लेखकों के विचारों, मनुष्यों के सिद्धांतों, और निजी आत्माओं की

जाँच की जानी चाहिए, और जिसके निर्णय पर हमें भरोसा करना चाहिए, वह कोई और नहीं हो सकता बल्कि पवित्र आत्मा है जो पवित्रशास्त्र में बातें करता है।[क]

क. *मत्ती 22:29, 31; इफिसियों 2:20 के साथ प्रेरितों के काम 28:25.*

अध्याय 2. परमेश्वर के विषय में, और पवित्र त्रीएक परमेश्वर के विषय में

1. केवल एक[क] ही जीवित और सच्चा परमेश्वर[ख] है, जो अपने अस्तित्व और सिद्धता में असीम[ग] है, सबसे पवित्र आत्मा[घ] है, अदृश्य,[ङ] बिना किसी शरीर के अंगों,[च] या वासनाओं[छ] वाला, अपरिवर्तनीय,[ज] अपार,[झ] अनन्त,[ञ] अबोधगम्य,[ट] सर्वशक्तिमान,[ठ] सबसे बुद्धिमान,[ड] सबसे पवित्र,[ढ] सबसे स्वतंत्र,[ण] सबसे परम है,[त] जो स्वयं अपनी महिमा[द] के लिए, स्वयं अपने अपरिवर्तनीय और सबसे धर्मी इच्छा के मत के अनुसार,[थ] सब कुछ करता है; जो सबसे अधिक प्रेमी,[ध] अनुग्रहकारी, करुणामय, विलम्ब से क्रोध करने वाला, भलाई एवं सत्य से भरपूर, अधर्म, अपराध एवं पाप को क्षमा करने वाला है;[न] वह अपने खोजने वालों को प्रतिफल देने वाला;[प] और अपने न्याय करने में धर्मी और भयानक है;[फ] सब पाप से घृणा करने वाला,[ब] और जो दोषी को किसी भी रीति से निर्दोष नहीं ठहराएगा।[भ]

क. *व्यवस्थाविवरण 6:4; 1 कुरिन्थियों 8:4, 6.* ***ख.*** *यिर्मयाह 10:10; 1 थिस्सलुनीकियों 1:9.* ***ग.*** *अय्यूब 11:7 – 9; 26:14.* ***घ.*** *यूहन्ना 4:24.* ***ङ.*** *1 तीमुथियुस 1:17.* ***च.*** *व्यवस्थाविवरण 4:15 – 16; यूहन्ना 4:24 के साथ लूका 24:39.* ***छ.*** *प्रेरितों के काम 14:11, 15.* ***ज.*** *मलाकी 3:6; याकूब 1:17.* ***झ.*** *1 राजा 8:27; यिर्मयाह 23:23 – 24.* ***ञ.*** *भजन संहिता 90:2; 1 तीमुथियुस 1:17.* ***ट.*** *भजन संहिता 145:3.* ***ठ.*** *उत्पत्ति 17:1; प्रकाशितवाक्य 4:8.* ***ड.*** *रोमियों 16:27.* ***ढ.*** *यशायाह 6:3; प्रकाशितवाक्य 4:8.* ***ण.*** *भजन संहिता 115:3.* ***त.*** *निर्गमन 3:14.* ***थ.*** *इफिसियों 1:11.* ***द.*** *नीतिवचन 16:4; रोमियों 11:36.* ***ध.*** *1 यूहन्ना 4:8, 16.* ***न.*** *निर्गमन 34:6 – 7.* ***प.*** *इब्रानियों 11:6.* ***फ.*** *नहेम्याह 9:32 – 33.* ***ब.*** *भजन संहिता 5:5 – 6.* ***भ.*** *निर्गमन 34:7; नहूम 1:2 – 3.*

2. परमेश्वर के पास स्वयं में और स्वयं के द्वारा सम्पूर्ण जीवन,[क] महिमा,[ख] भलाई,[ग] परमानंद[घ] है; और वह अकेले ही स्वयं में और स्वयं के लिए सर्वथा पर्याप्त है, उसे स्वयं के अस्तित्व के लिए अपने द्वारा रचित किसी भी प्राणी की आवश्यकता नहीं है,[ङ] न ही वह उनसे किसी महिमा को प्राप्त करता है,[च] परन्तु वह उनमें, उनके द्वारा, उनके लिए, और उन पर अपनी स्वयं की महिमा प्रकट करता है: वह समस्त अस्तित्व का एकमात्र स्रोत है, जिसके द्वारा, जिसके माध्यम से, और जिसके लिए सभी वस्तुएँ हैं;[छ] और उनके द्वारा, उनके लिए, या उन पर जो वह चाहता है उस कार्य को करने के लिए, उसका सर्वोच्च सम्प्रभुत्व वाला शासन है।[ज] उसकी दृष्टि में सभी वस्तुएँ दृश्यमान एवं प्रत्यक्ष हैं;[झ] उसका ज्ञान अनन्त, अचूक और प्राणियों पर निर्भर नहीं है;[ञ] इस कारण उसके लिए कुछ भी आकस्मिक या अनिश्चित नहीं है;[ट] वह अपने सभी सम्मति में, अपने सभी कार्यों में, और अपनी सभी आज्ञाओं में परम पवित्र है।[ठ] केवल उसी के लिए स्वर्गदूतों और मनुष्यों, और हर एक प्राणी से, सभी प्रकार की आराधना, सेवा, या आज्ञाकारिता देय है, जिसकी अपेक्षा वह उनसे करता है।[ड]

क. *यूहन्ना 5:26.* ***ख.*** *प्रेरितों के काम 7:2.* ***ग.*** *भजन संहिता 119:68.* ***घ.*** *रोमियों 9:5; 1 तीमुथियुस 6:15.* ***ङ.*** *प्रेरितों के काम 17:24 – 25.* ***च.*** *अय्यूब 22:2 – 3.* ***छ.*** *रोमियों 11:36.* ***ज.*** *दानिय्येल 4:25, 35; 1 तीमुथियुस 6:15; प्रकाशितवाक्य 4:11.* ***झ.*** *इब्रानियों 4:13.* ***ञ.*** *भजन संहिता 147:5; रोमियों 11:33 – 34.* ***ट.*** *यहेजकेल 11:5; प्रेरितों के काम 15:18.* ***ठ.*** *भजन संहिता 145:17; रोमियों 7:12.* ***ड.*** *प्रकाशितवाक्य 5:12 – 14.*

3. परमेश्वरत्व की एकता में एक ही तत्व, सामर्थ्य एवं अनन्तता के तीन व्यक्ति हैं, परमेश्वर पिता, परमेश्वर पुत्र और परमेश्वर पवित्र आत्मा:[क] पिता किसी से नहीं है, न ही वह उत्पन्न और न ही वह अग्रसर है; पुत्र पिता का अनन्तकाल से इकलौता है;[ख] पवित्र आत्मा पिता और पुत्र से अनन्तकाल से अग्रसर है।[ग]

क. *मत्ती 3:16 - 17; 28:19; 2 कुरिन्थियों 13:14; 1 यूहन्ना 5:7.* ***ख.*** *यूहन्ना 1:14, 18.* ***ग.*** *यूहन्ना 15:26; गलातियों 4:6.*

अध्याय 3. परमेश्वर के सनातन विधान (Decree) के विषय में

1. परमेश्वर ने सनातन काल से, अपनी स्वयं की इच्छा के सबसे बुद्धिमत्तापूर्ण एवं पवित्र मत के द्वारा, जो कुछ भी होता है, उसे स्वतंत्र एवं अपरिवर्तनीय रूप से ठहराया है;[क] फिर भी इसके कारण से न तो परमेश्वर पाप का कर्ता है,[ख] और न ही प्राणियों की इच्छा के लिए हिंसा की पेशकश की जाती है, और न ही द्वितीय कारणों की स्वतंत्रता या आकस्मिकता को दूर किया जाता है, बल्कि इन्हें स्थापित किया जाता है।[ग]

__क.__ रोमियों 9:15, 18; 11:33; इफिसियों 1:11; इब्रानियों 6:17. __ख.__ याकूब 1:13, 17; 1 यूहन्ना 1:5. __ग.__ नीतिवचन 16:33; मत्ती 17:12; यूहन्ना 19:11; प्रेरितों के काम 2:23; 4:27 – 28.

2. यद्यपि परमेश्वर उन सभी सम्भावित परिस्थितियों में जो कुछ भी घटित हो सकता है उसे जानता है,[क] फिर भी उसने किसी भी बात को इसलिए नहीं ठहराया क्योंकि उसने उसे भविष्य के रूप, या ऐसी परिस्थितियों में घटित होने वाली बात के रूप में पहले ही से देखा था।[ख]

__क.__ 1 शमूएल 23:11 – 12; मत्ती 11:21, 23; प्रेरितों के काम 15:18. __ख.__ रोमियों 9:11, 13, 16, 18.

3. परमेश्वर के विधान के अनुसार, उसकी महिमा के प्रकटीकरण के लिए, कुछ मनुष्यों एवं स्वर्गदूतों[क] को अनन्त जीवन के लिए पहले ही से निर्धारित किया गया है, और अन्यों को अनन्त मृत्यु के लिए पहले ही से ठहराया गया है।[ख]

__क.__ मत्ती 25:41; 1 तीमुथियुस 5:21. __ख.__ नीतिवचन 16:4; रोमियों 9:22 – 23; इफिसियों 1:5 – 6.

4. इस प्रकार पहले ही से निर्धारित और पहले ही से ठहराए गए ये स्वर्गदूत और मनुष्य, विशेष रूप से और अपरिवर्तनीय रूप से रचे गए हैं; और उनकी संख्या इतनी निश्चित और सुनिश्चित है कि उसे न तो बढ़ाया जा

सकता है और न ही घटाया जा सकता है।[क]

क. *यूहन्ना 13:18; 2 तीमुथियुस 2:19.*

5. परमेश्वर ने जगत की उत्पत्ति से पहले, अपने अनन्त और अपरिवर्तनीय उद्देश्य, और अपनी इच्छा के रहस्यमय मत और भले अभिप्राय के अनुसार, मनुष्य जाति में से जिन लोगों को जीवन के लिए पहले ही से ठहराया है, उन्हें अपने मात्र स्वतंत्र अनुग्रह और प्रेम के द्वारा, अनन्त महिमा के लिए ख्रीष्ट में चुन लिया है,[क] किसी भी विश्वास या भले कार्यों, या उनका किसी में भी विश्वास में दृढ़ बने रहने, या सृष्टि में किसी भी अन्य वस्तु की पूर्व-दृष्टि के बिना, जो शर्तों या कारणों के रूप में उसे प्रेरित करती हो;[ख] और यह सब उसके अपने महिमामय अनुग्रह की स्तुति के लिए है।[ग]

क. *रोमियों 8:30; इफिसियों 1:4, 9, 11; 1 थिस्सलुनीकियों 5:9; 2 तीमुथियुस 1:9.* ***ख.*** *रोमियों 9:11, 13, 16; इफिसियों 1:4, 9.* ***ग.*** *इफिसियों 1:6, 12.*

6. जिस प्रकार परमेश्वर ने चुने हुओं को महिमा के लिए ठहराया है, उसी प्रकार से उसने, अपनी इच्छा के अनन्त और सबसे स्वतंत्र उद्देश्य के द्वारा, उनके लिए सभी साधनों को पहले ही से निर्धारित किया है।[क] जिसके कारण, वे जो चुने हुए हैं, आदम में पाप में गिरे होने पर भी, ख्रीष्ट के द्वारा छुड़ाए गए हैं,[ख] और उचित समय पर उसके आत्मा द्वारा ख्रीष्ट में विश्वास रखने के लिए प्रभावशाली रीति से बुलाए गए हैं; वे धर्मी ठहराए गए, गोद लिए गए और पवित्र किए गए हैं,[ग] और उद्धार के निमित्त विश्वास के माध्यम से उसकी सामर्थ्य के द्वारा सुरक्षित रखे गए हैं।[घ] केवल चुने हुओं को छोड़कर, कोई भी अन्य न तो ख्रीष्ट द्वारा छुड़ाया गया है, न प्रभावशाली रीति से बुलाया गया है, न धर्मी ठहराया गया है, न गोद लिया गया है, न पवित्र किया गया है, और न ही बचाया गया है।[ङ]

क. *इफिसियों 1:4 – 5; इफिसियों 2:10; 2 थिस्सलुनीकियों 2:13; 1 पतरस 1:2.* ***ख.*** *1 थिस्सलुनीकियों 5:9 – 10; तीतुस 2:14.* ***ग.*** *रोमियों 8:30 ; इफिसियों 1:5; 2 थिस्सलुनीकियों*

2:13. ***घ.*** *1 पतरस 1:5.* ***ङ.*** *यूहन्ना 6:64 – 65; 8:47; 10:26; 17:9; रोमियों 8:28 – 39; 1 यूहन्ना 2:19.*

7. परमेश्वर को जैसा ठीक लगा कि शेष मानव जाति को, अपने स्वयं की इच्छा के अथाह मत के अनुसार, जिसके द्वारा उसे जैसा ठीक लगता है वह दया करता या दया नहीं करता है, अपने प्राणियों के ऊपर अपने सम्प्रभुता वाले सामर्थ्य की महिमा के लिए, उनके पापों के कारण लज्जित होने और क्रोध के लिए उन्हें ठहराने हेतु, उन्हें छोड़ देता है, जिससे कि उसके महिमामय न्याय की स्तुति हो।[क]

क. *मत्ती 11:25 – 26; रोमियों 9:17 – 18, 21 – 22; 2 तीमुथियुस 2:19 – 20; 1 पतरस 2:8; यहूदा 1:4.*

8. पूर्व-निर्धारण के इस महान रहस्यमय सिद्धांत को विशेष विवेक एवं सावधानी के साथ संभाला जाना चाहिए,[क] जिससे कि मनुष्य परमेश्वर के वचन में प्रकट की गई उसकी इच्छा पर ध्यान दें, और इसके प्रति आज्ञाकारिता के लिए इच्छुक होते हुए, अपने प्रभावशाली बुलाहट के प्रति निश्चितता से, अपने अनन्त चुनाव के विषय में आश्वस्त हो सकें।[ख] इस प्रकार यह सिद्धांत परमेश्वर की स्तुति, श्रद्धा-भक्ति और आदर-सम्मान का विषय बन जाएगा।[ग] और उन सभी लोगों के लिए विनम्रता, परिश्रम, और भरपूर सांत्वना का विषय बन जाएगा जो विश्वासयोग्यता से सुसमाचार का पालन करते हैं।[घ]

क. *व्यवस्थाविवरण 29:29; रोमियों 9:20.* ***ख.*** *2 पतरस 1:10.* ***ग.*** *रोमियों 11:33 ; इफिसियों 1:6.* ***घ.*** *लूका 10:20; रोमियों 8:33; 11:5 – 6, 20; 2 पतरस 1:10.*

अध्याय 4. सृष्टि की रचना के विषय में

1. परमेश्वर पिता, पुत्र, और पवित्र आत्मा[क] को यह प्रसन्नता हुई, कि अपनी सनातन सामर्थ्य, बुद्धि, और भलाई की महिमा के प्रकटीकरण के लिए,[ख] आदि में, ब्रह्माण्ड और उसमें की सभी वस्तुओं को, कुछ भी नहीं से, चाहे

वे सदृश्य हों या अदृश्य, छः दिन के अन्तराल में, और सभी वस्तुओं को बहुत अच्छा बनाया जाए या उनकी सृष्टि की जाए।[ग]

__क.__ उत्पत्ति 1:2; अय्यूब 26:13; 33:4; यूहन्ना 1:2 – 3; इब्रानियों 1:2.. __ख.__ भजन संहिता 33:5 – 6; 104:24; यिर्मयाह 10:12; रोमियों 1:20. __ग.__ सम्पूर्ण उत्पत्ति 1; प्रेरितों के काम 17:24; कुलुस्सियों 1:16; इब्रानियों 11:3.

2. परमेश्वर ने अन्य सभी प्राणियों को बनाने के पश्चात्, मनुष्य की, नर और नारी करके,[क] बुद्धिमत्तापूर्ण एवं अनश्वर प्राण के साथ,[ख] स्वयं अपने स्वरूप के अनुसार, ज्ञान, धार्मिकता, एवं सच्ची पवित्रता के साथ सम्पन्न-युक्त करके,[ग] उनके हृदयों में परमेश्वर की व्यवस्था को लिख कर,[घ] और उसका पालन करने की शक्ति के साथ;[ङ] और फिर भी उनकी अपनी इच्छा की स्वतंत्रता पर छोड़ दिया जाने पर, जो कि परिवर्तन के अधीन थी, उसका उल्लंघन करने की सम्भावना के साथ सृष्टि की।[च] उनके हृदयों पर लिखी इस व्यवस्था के अतिरिक्त, उन्होंने भले और बुरे के ज्ञान के वृक्ष का फल न खाने की आज्ञा को प्राप्त किया;[छ] जिसका पालन जब तक उन्होंने किया, वे परमेश्वर के साथ संगति में आनन्दित थे, और प्राणियों के ऊपर अधिकार रखते थे।[ज]

__क.__ उत्पत्ति 1:27. __ख.__ उत्पत्ति 2:7 के साथ सभोपदेशक 12:7 और मत्ती 10:28 और लूका 23:43. __ग.__ उत्पत्ति 1:26; इफिसियों 4:24; कुलुस्सियों 3:10. __घ.__ रोमियों 2:14 – 15. __ङ.__ सभोपदेशक 7:29. __च.__ उत्पत्ति 3:6; सभोपदेशक 7:29. __छ.__ उत्पत्ति 2:17; 3:8 – 11, 23. __ज.__ उत्पत्ति 1:26, 28.

अध्याय 5. परमेश्वर के दिव्य प्रबन्धन (Providence) के विषय में

1. परमेश्वर, जो सभी वस्तुओं का महान सृष्टिकर्ता है, सबसे बड़े से लेकर सबसे छोटे तक,[क] सभी प्राणियों, कार्यों और वस्तुओं को,[ख] अपने सबसे बुद्धिमान एवं पवित्र दिव्य प्रबन्धन के द्वारा,[ग] अपने अचूक पूर्व-ज्ञान[घ] और अपने स्वयं की इच्छा के स्वतंत्र एवं अपरिवर्तनीय मत के अनुसार,[ङ] अपनी बुद्धि, सामर्थ्य, न्याय, भलाई एवं करुणा की महिमा के लिए[च] बनाए रखता है,[छ] निर्देशित करता है, व्यवस्थित करता है, शासित करता है।

क. *मत्ती 10:29 – 31.* ***ख.*** *भजन संहिता 135:6; दानिय्येल 4:34 – 35; प्रेरितों के काम 17:25 – 26, 28; अय्यूब 38 – 41 सभी अध्याय.* ***ग.*** *भजन संहिता 104:24; 145:17; नीतिवचन 15:3.* ***घ.*** *भजन संहिता 94:8 – 11; प्रेरितों के काम 15:18.* ***ङ.*** *भजन संहिता 33:10 – 11; इफिसियों 1:11.* ***च.*** *उत्पत्ति 45:7; भजन संहिता 145:7; यशायाह 63:14; रोमियों 9:17; इफिसियों 3:10.* ***छ.*** *इब्रानियों 1:3.*

2. यद्यपि प्रथम कारण, परमेश्वर के पूर्व-ज्ञान और विधान के सम्बन्ध में, सभी बातें अपरिवर्तनीय एवं अचूक रीति से घटित होती हैं,[क] फिर भी उसी दिव्य प्रबन्धन के द्वारा वह उन्हें दूसरे कारणों की प्रकृति के अनुसार, या तो आवश्यक रूप से, स्वतंत्र रूप से या आकस्मिक रूप से घटित होने का आदेश देता है।[ख]

क. *प्रेरितों के काम 2:23.* ***ख.*** *उत्पत्ति 8:22; निर्गमन 21:13 के साथ व्यवस्थाविवरण 19:5; 1 राजा 22:28, 34; यशायाह 10:6 – 7; यिर्मयाह 31:35.*

3. परमेश्वर अपने सामान्य दिव्य प्रबन्धन के अनुसार साधनों का उपयोग करता है,[क] फिर भी वह अपनी इच्छानुसार, उनके बिना,[ख] उनके ऊपर,[ग] और उनके विरुद्ध[घ] कार्य करने के लिए स्वतंत्र है।

क. *यशायाह 55:10 – 11; होशे 2:21 – 22; प्रेरितों के काम 27:31, 44.* ***ख.*** *अय्यूब 34:10; होशे 1:7; मत्ती 4:4.* ***ग.*** *रोमियों 4:19 – 21.* ***घ.*** *2 राजा 6:6; दानिय्येल 3:27.*

4. परमेश्वर की सर्वशक्तिमान सामर्थ्य, अथाह बुद्धि, और असीम भलाई उसके दिव्य प्रबन्धन में स्वयं को इतनी अधिक प्रकट करती है कि यह मनुष्य के पहले पाप में गिरने, और स्वर्गदूतों एवं मनुष्यों के अन्य सभी पापों तक भी फैल जाती है,[क] और यह न केवल अनुमति के द्वारा,[ख] परन्तु उसके साथ सबसे बुद्धिमान और शक्तिशाली बंधन के साथ जुड़ गई है,[ग] और अन्यथा उन्हें अपने स्वयं के पवित्र उद्देश्यों के लिए, अनेक प्रकार से उसने व्यवस्थित एवं शासित किया है;[घ] परन्तु फिर भी, पापमयता केवल प्राणियों से ही निकलती है, न कि परमेश्वर से; जो, परम पवित्र और धर्मी होने के कारण, न तो पाप का रचयिता या अनुमोदक है, और न ही हो

सकता है।[ङ]

क. 2 शमूएल 16:10; 24:1 के साथ 1 इतिहास 21:1; 1 राजा 22:22 – 23; 1 इतिहास 10:4, 13 – 14; प्रेरितों के काम 2:23; 4:27 – 28; रोमियों 11:32 – 34. ख. प्रेरितों के काम 14:16. ग. 2 राजा 19:28; भजन संहिता 76:10. घ. उत्पत्ति 50:20; यशायाह 10:6 – 7, 12. ङ. भजन संहिता 50:21; याकूब 1:13 – 14, 17; 1 यूहन्ना 2:16.

5. सबसे बुद्धिमान, धर्मी, और अनुग्रहकारी परमेश्वर प्रायः अपने स्वयं के बच्चों को कुछ समय के लिए अनेक प्रकार की परीक्षाओं और उनके अपने हृदयों की भ्रष्टता के लिए छोड़ देता है, ताकि उनके पिछले पापों के लिए उनकी ताड़ना करे, या उनके हृदयों के भ्रष्टता और छल-कपट की छिपी हुई शक्ति को उनके सामने प्रकट करे, जिससे कि वे नम्र बन जाएं;[क] और अपने ऊपर उनका सहारा बनाने के लिए अधिक निकट और निरन्तर निर्भरता की ओर ले जाए, और उन्हें भविष्य में पाप के सभी अवसरों के विरुद्ध और विभिन्न प्रकार के धर्मी एवं पवित्र उद्देश्यों के लिए अधिक सतर्क बनाए।[ख]

क. 2 शमूएल 24:1; 2 इतिहास 32:25 – 26, 31. ख. सम्पूर्ण भजन संहिता 73; भजन 77:1 – 10, 12; मरकुस 14:66 – 72 के साथ यूहन्ना 21:15 – 17; 2 कुरिन्थियों 12:7 – 9.

6. जहाँ तक उन दुष्ट एवं अधर्मी लोगों की बात है जिन्हें परमेश्वर ने, धर्मी न्यायाधीश होने के नाते, पिछले पापों के लिए, अन्धा एवं कठोर कर दिया,[क] उनसे न केवल वह अपने अनुग्रह को रोके रखता है, जिसके द्वारा वे अपनी समझ में प्रकाशमान एवं उनके हृदय में उसके कार्य हो सकते थे,[ख] बल्कि कभी-कभी वह उनसे उन वरदानों को भी छीन लेता है जो उन्हें प्राप्त थे,[ग] और उनकी भ्रष्टता के रूप में उनके सामने ऐसे उद्देश्यों को उजागर होने देता है जो पाप का कारण बनते हैं;[घ] और साथ ही, उन्हें उनकी वासनाओं, संसार के प्रलोभनों, एवं शैतान की शक्ति के अधीन छोड़ देता है;[ङ] जिसके द्वारा ऐसा होता है कि वे स्वयं को कठोर बना लेते हैं, यहाँ तक कि उन साधनों के प्रयोग में भी, जिनका उपयोग परमेश्वर अन्य लोगों

को कोमल बनाने के लिए करता है।[च]

क. रोमियों 1:24, 26, 28; 11:7 – 8. ख. व्यवस्थाविवरण 29:4. ग. मत्ती 13:12; 25:29. घ. व्यवस्थाविवरण 2:30; 2 राजा 8:12 – 13. ङ. भजन संहिता 81:11 – 12; 2 थिस्सलुनीकियों 2:10 – 12. च. निर्गमन 7:3 के साथ निर्गमन 8:15; 8:32; यशायाह 6:9 – 10 के साथ प्रेरितों के काम 28:26 – 27; यशायाह 8:14; 2 कुरिन्थियों 2:15 – 16; 1 पतरस 2:7 – 8.

7. जिस प्रकार परमेश्वर का दिव्य प्रबन्धन, सामान्य रूप से, सभी प्राणियों तक पहुँचता है, उसी प्रकार, अत्यन्त विशेष प्रकार से, यह उसकी कलीसिया की देखभाल करता है, और सभी वस्तुओं को उसकी भलाई के लिए व्यवस्थित करता है।[क]

क. यशायाह 43:3 – 5, 14; आमोस 9:8 – 9; रोमियों 8:28; 1 तीमुथियुस 4:10.

अध्याय 6. मनुष्य का पाप में गिरने, पाप, और इसके परिणामस्वरूप दण्ड के विषय में

1. हमारे प्रथम माता-पिता ने, शैतान की धूर्तता और प्रलोभन से बहकाए जाने कारण, निषिद्ध फल को खाकर पाप किया।[क] परमेश्वर को भाया कि अपनी बुद्धिमतापूर्ण एवं पवित्र मनसा के अनुसार, उनके इस पाप को, स्वयं अपनी महिमा के लिए व्यवस्थित करने हेतु प्रयोजन कर, इसकी अनुमति दे।[ख]

क. उत्पत्ति 3:13; 2 कुरिन्थियों 11:3. ख. रोमियों 11:32.

2. इस पाप के द्वारा वे अपनी मूल धार्मिकता और परमेश्वर के साथ संगति से गिर गए,[क] और इस प्रकार पाप में मृतक बन गए,[ख] और प्राण एवं शरीर के सभी क्षमताओं एवं भागों में पूर्ण रूप से दूषित हो गए।[ग]

क. उत्पत्ति 3:6 – 8; सभोपदेशक 7:29; रोमियों 3:23. ख. उत्पत्ति 2:17; इफिसियों 2:1. ग. उत्पत्ति 6:5; यिर्मयाह 17:9; रोमियों 3:10 – 19; तीतुस 1:15.

3. क्योंकि वे सभी मानवजाति के मूल हैं, इसलिए, सामान्य प्रजनन से जन्मे उनके सभी वंशजों पर इस पाप का दोष अभ्यारोपित किया गया,[क] और पाप में वही मृत्यु और भ्रष्ट स्वभाव उनको दिया गया।[ख]

***क.** उत्पत्ति 1:27 – 28 और उत्पत्ति 2:16 – 17 और प्रेरितों के काम 17:26 के साथ रोमियों 5:12, 15 – 19 और 1 कुरिन्थियों 15:21 – 22; 1 कुरिन्थियों 15:45, 49. **ख.** उत्पत्ति 5:3; अय्युब 14:4; 15:14; भजन संहिता 51:5.*

4. इस मूल भ्रष्टता से, जिसके द्वारा हम पूर्णतः अस्वस्थ, अक्षम, और सभी भलाई के विपरीत बना दिए गए हैं,[क] और सभी बुराइयों की ओर पूर्ण रूप से प्रवृत्त है,[ख] सभी वास्तविक पाप उत्पन्न होते हैं।[ग]

***क.** रोमियों 5:6; 7:18; 8:7; कुलुस्सियों 1:21. **ख.** उत्पत्ति 6:5; 8:21; रोमियों 3:10 – 12. **ग.** मत्ती 15:19; इफिसियों 2:2 – 3; याकूब 1:14 – 15.*

5. इस जीवन के दौरान, स्वभाव की यह भ्रष्टता, उन लोगों में बनी रहती है जो नया-जन्म पा चुके हैं,[क] और यद्यपि यह ख्रीष्ट के माध्यम से क्षमा एवं मृतक कर दिया गया है, फिर भी स्वयं से और इसके कारण से सभी क्रियाकलाप वास्तव में और उचित रीति से पाप हैं।[ख]

***क.** नीतिवचन 20:9; सभोपदेशक 7:20; रोमियों 7:14, 17 – 18, 23; याकूब 3:2; 1 यूहन्ना 1:8, 10. **ख.** रोमियों 7:5; 7 – 8, 25; गलातियों 5:17.*

6. प्रत्येक पाप, मूल और वास्तविक दोनों, परमेश्वर की धार्मिक व्यवस्था का उल्लंघन होने, और उसके विपरीत होने के कारण,[क] अपने स्वयं के स्वभाव में, पापी पर दोष लाते हैं,[ख] जिसके कारण मनुष्य परमेश्वर के प्रकोप[ग] और व्यवस्था के अभिशाप[घ] के अधीन हो जाता है, और इस प्रकार सभी आत्मिक,[च] लौकिक[छ] एवं अनन्त[ज] दुःखों के साथ मृत्यु के अधीन कर दिया जाता है।[ङ]

क.** 1 यूहन्ना 3:4. **ख.** रोमियों 2:15; 3:9, 19. **ग.** इफिसियों 2:3. **घ.** गलातियों 3:10. **ङ.

रोमियों 6:23. ***च.*** *इफिसियों 4:18.* ***छ.*** *विलापगीत 3:39; रोमियों 8:20.* ***ज.*** *मत्ती 25:41; 2 थिस्सलुनीकियों 1:9.*

अध्याय 7. मनुष्य के साथ परमेश्वर की वाचा के विषय में

1. परमेश्वर और प्राणी के बीच की दूरी इतनी बड़ी है कि यद्यपि विवेकशील प्राणी अपने सृष्टिकर्ता के रूप में उसके प्रति आज्ञाकारिता के लिए देनदार हैं, फिर भी परमेश्वर की ओर से कुछ स्वैच्छिक कृपालुता के बगैर, वे कभी भी उससे अपनी परम आशीष एवं वरदान के रूप में कोई फल नहीं प्राप्त कर सकते हैं, जिसे उसने वाचा के माध्यम से व्यक्त करने की कृपा की है।[क]

क. *1 शमूएल 2:25; अय्यूब 9:32 – 33; 22:2 – 3; 35:7 – 8; भजन संहिता 100:2 – 3; 113:5 – 6; यशायाह 40:13 – 17; लूका 17:10; प्रेरितों के काम 17:24 – 25.*

2. मनुष्य के साथ बाँधी गई सबसे पहली वाचा, कार्यों की वाचा थी,[क] जिसमें आदम और उसमें उसके वंशजों को जीवन की प्रतिज्ञा की गई थी,[ख] सिद्ध एवं व्यक्तिगत आज्ञाकारिता की शर्त पर।[ग]

क. *गलातियों 3:12.* ***ख.*** *रोमियों 5:12 – 20; 10:5.* ***ग.*** *उत्पत्ति 2:17; गलातियों 3:10.*

3. मनुष्य ने पाप में स्वयं के गिरने के कारण स्वयं को उस वाचा के द्वारा जीवन के लिए अयोग्य बना लिया, इसलिए प्रभु ने दूसरी वाचा बनाने की कृपा की,[क] जिसे सामान्य रूप में अनुग्रह की वाचा कहा जाता है: जिसमें वह यीशु ख्रीष्ट के द्वारा पापियों को सेंतमेंत में जीवन और उद्धार देने की पेशकश करता है, उनसे उस पर विश्वास की मांग करता है ताकि वे बचाए जा सकें,[ख] और उन सभी को जो जीवन के लिए नियुक्त किए गए हैं, अपना पवित्र आत्मा देने की प्रतिज्ञा करता है, ताकि उन्हें विश्वास करने के लिए इच्छुक एवं सक्षम बना सके।[ग]

क. *उत्पत्ति 3:15; यशायाह 42:6; रोमियों 3:20 – 21; 8:3; गलातियों 3:21.* ***ख.*** *मरकुस 16:15*

– 16; यूहन्ना 3:16; रोमियों 10:6, 9; गलातियों 3:11. ***ग.*** *यहेजकेल 36:26 – 27; यूहन्ना 6:44 – 45.*

4. इस अनुग्रह की वाचा को पवित्रशास्त्र में बहुधा वाचा के नाम से प्रस्तुत किया गया है, जो वाचा को बाँधने वाले यीशु ख्रीष्ट की मृत्यु, और उस अनन्त मीरास के सन्दर्भ में है, जिसमें उससे सम्बन्धित सभी मीरास वाली वस्तुएँ सम्मिलित हैं।[क]

क. *लूका 22:20; 1 कुरिन्थियों 11:25; इब्रानियों 7:22; 9:15 – 17.*

5. यह वाचा व्यवस्था के समय पर और सुसमाचार के समय पर भिन्न-भिन्न रीतियों से कार्यान्वित की गई थी:[क] व्यवस्था के अधीन यह यहूदी लोगों को दी गई प्रतिज्ञाओं, भविष्यवाणियों, बलिदानों, खतना, फसह का मेमना, और अन्य प्रतीकों एवं अध्यादेशों द्वारा कार्यान्वित की गई थी, जो कि सभी ख्रीष्ट के आने के पूर्व-संकेत थे,[ख] जो उस समय के लिए, पवित्र आत्मा के कार्य के माध्यम से, प्रतिज्ञा किए गए मसीहा में चुने हुओं को विश्वास में शिक्षा देने एवं निर्मित करने के लिए पर्याप्त एवं प्रभावकारी थे,[ग] जिसके द्वारा उन्हें पापों की पूर्ण क्षमा एवं अनन्त उद्धार मिला था; और इसे पुराना नियम (पुरानी वाचा) कहा जाता है।[घ]

क. *2 कुरिन्थियों 3:6 – 9.* ***ख.*** *रोमियों 4:11; कुलुस्सियों 2:11 – 12; 1 कुरिन्थियों 5:7; सम्पूर्ण इब्रानियों 8 – 10.* ***ग.*** *यूहन्ना 8:56; 1 कुरिन्थियों 10:1 – 4; इब्रानियों 11:13.* ***घ.*** *गलातियों 3:7 – 9, 14.*

6. सुसमाचार के अधीन, जब ख्रीष्ट को, जो कि वास्तविकता है [क] दिखाया गया, तो वे अध्यादेश जिनमें इस वाचा को दिया जाता है, वे हैं वचन का प्रचार करना और बपतिस्मा एवं प्रभु भोज के मसीही संस्कारों का प्रशासन करना;[ख] जो, यद्यपि संख्या में कम हैं, तथा जिनका संचालन अधिक सरलता और कम दिखावटी महिमा के साथ किया जाता है, फिर भी उनमें यह अधिक परिपूर्णता, प्रमाण, एवं आत्मिक प्रभाव के साथ,[ग] सभी

जातियों को, यहूदियों एवं अन्यजातियों, दोनों के लिए प्रस्तुत किया जाता है;[घ] और इसे नया नियम (नई वाचा) कहा जाता है।[ङ] इसलिए, अनुग्रह की दो वाचाएँ नहीं हैं जो सार में भिन्न-भिन्न हैं, बल्कि विभिन्न व्यवस्थाओं के अधीन वे एक और समान ही हैं।[च]

क. *कुलुस्सियों 2:17.* ***ख.*** *मत्ती 28:19 – 20; 1 कुरिन्थियों 11:23 – 25.* ***ग.*** *यिर्मयाह 31:33 – 34; इब्रानियों 12:22 – 28.* ***घ.*** *मत्ती 28:19; इफिसियों 2:15 – 19.* ***ङ.*** *लूका 22:20.* ***च.*** *भजन संहिता 32:1 के साथ रोमियों 4:3; प्रेरितों के काम 15:11; रोमियों 3:21 – 23, 30; 4:6, 16 – 17, 23 – 24; गलातियों 3:14, 16; इब्रानियों 13:8.*

अध्याय 8. मध्यस्थ यीशु ख्रीष्ट के विषय में

1. अपने अनन्त अभिप्राय में, परमेश्वर को यह भला लगा, कि अपने इकलौते पुत्र, प्रभु यीशु को, परमेश्वर और मनुष्य के बीच में मध्यस्थ,[क] अर्थात नबी,[ख] याजक,[ग] और राजा;[घ] अपनी कलीसिया का सिर (प्रधान) एवं उद्धारकर्ता,[ङ] सब वस्तुओं का वारिस,[च] और जगत का न्यायी होने के लिए चुने और नियुक्त करे;[छ] जिसको उसने अनन्त काल से उसका वंश होने के लिए एक लोग दिए हैं,[ज] और ताकि वे उसके द्वारा समय आने पर छुड़ाए जाएं, बुलाएं जाएं, धर्मी ठहराए जाएं, पवित्र बनाए जाएं, और महिमान्वित किए जाएं।[झ]

क. *यशायाह 42:1; यूहन्ना 3:16; 2 तीमुथियुस 2:5; 1 पतरस 1:19 – 20.* ***ख.*** *प्रेरितों के काम 3:22.* ***ग.*** *इब्रानियों 5:5 – 6.* ***घ.*** *भजन संहिता 2:6; लूका 1:33.* ***ङ.*** *इफिसियों 5:23. च. इब्रानियों 1:2.* ***छ.*** *प्रेरितों के काम 17:31.* ***ज.*** *भजन संहिता 22:30; यशायाह 53:10; यूहन्ना 17:6.* ***झ.*** *यशायाह 55:4 – 5; 1 कुरिन्थियों 1:30; 1 तीमुथियुस 2:6.*

2. परमेश्वर का पुत्र, त्रीएक परमेश्वर में दूसरा व्यक्ति, जो परमेश्वर से परमेश्वर और अनन्त परमेश्वर है, जो पिता के साथ एक ही तत्व का, और पिता बराबर है, जब समय पूरा हुआ, तो उसने मानवता का स्वभाव,[क] इसके सभी आवश्यक गुणों एवं सामान्य दुर्बलताओं के साथ धारण किया, फिर भी वह पाप रहित था:[ख] पवित्र आत्मा की सामर्थ्य से कुंवारी मरियम के गर्भ में, उसके तत्व का गर्भधारण किया।[ग] इस प्रकार दो सम्पूर्ण, सिद्ध, एवं

भिन्न स्वभाव, परमेश्वरत्व एवं मनुष्यत्व, एक ही व्यक्ति में अविभाज्य रूप, बिना रूपांतरण, बिना संयोजन, या बिना भ्रम के साथ आपस में जुड़े हुए थे।[घ] वह व्यक्ति पूर्ण रूप से परमेश्वर और पूर्ण रूप से मनुष्य है, फिर भी एक ही ख्रीष्ट है, जो परमेश्वर और मनुष्य के बीच में एकमात्र मध्यस्थ है।[ङ]

क. *यूहन्ना 1:1, 14; गलातियों 4:4; फिलिप्पियों 2:6; 1 यूहन्ना 5:20.* ***ख.*** *इब्रानियों 2:14, 16 – 17; 4:15.* ***ग.*** *लूका 1:27, 31, 35; गलातियों 4:4.* ***घ.*** *लूका 1:35; रोमियों 9:5; कुलुस्सियों 2:9; 1 तीमुथियुस 3:16; 1 पतरस 3:18.* ***ङ.*** *रोमियों 1:3 – 4; 1 तीमुथियुस 2:5.*

3. प्रभु यीशु, अपने मानवीय स्वभाव में परमेश्वरत्व से इस प्रकार जुड़कर, पवित्र आत्मा से अत्यधिक रूप से पवित्र एवं अभिषिक्त किया गया था;[क] उसमें बुद्धि एवं ज्ञान का सम्पूर्ण भण्डार था,[ख] जिसमें पिता की इच्छा यह थी कि सारी परिपूर्णता वास करे;[ग] इस उद्देश्य के साथ कि, पवित्र, निष्कलंक, निर्मल, और अनुग्रह एवं सच्चाई से परिपूर्ण होने के नाते,[घ] वह एक मध्यस्थ और जामिन के पद का कार्य करने के लिए पूर्ण रूप से सुसज्जित हो सके।[ङ] यह पद उसने स्वयं अपने लिए नहीं लिया, परन्तु इस कार्यभार के लिए उसके पिता के द्वारा उसे बुलाया गया था,[च] जिसने सारी सामर्थ्य एवं न्याय उसके हाथ में सौंपकर, उसे इस कार्य को पूरा करने की आज्ञा दी।[छ]

क. *भजन संहिता 45:7; यूहन्ना 3:34.* ***ख.*** *कुलुस्सियों 2:3.* ***ग.*** *कुलुस्सियों 1:19.* ***घ.*** *यूहन्ना 1:14; इब्रानियों 7:26.* ***ङ.*** *प्रेरितों के काम 10:38; इब्रानियों 7:22; 12:24.* ***च.*** *इब्रानियों 5:4 – 5.* ***छ.*** *मत्ती 28:18; यूहन्ना 5:22, 27; प्रेरितों के काम 2:36.*

4. इस पद (कार्यभार) को प्रभु यीशु ने बहुत ही स्वेच्छापूर्वक लिया,[क] जिसे, ताकि वह पूरा कर सके, वह व्यवस्था के अधीन किया गया,[ख] और पूरी सिद्धता के साथ उसने इसे पूरा किया;[ग] उसने तुरन्त ही अपनी आत्मा में बहुत ही दुखदायक यातना को,[घ] और अपने शरीर में सबसे कष्टदायक पीड़ाओं को सहा;[ङ] वह क्रूस पर चढ़ाया गया, मारा गया;[च] गाड़ा गया, और मृत्यु की शक्ति के अधीन रहा, फिर भी उसने कोई सड़न नहीं देखी।[छ] तीसरे

दिन वह मृतकों में से जी उठा,[ज] उसी शरीर के साथ जिसमें उसने दुःख भोगा था;[झ] उसी शरीर के साथ वह स्वर्ग पर चढ़ गया, और वहाँ वह अपने पिता के दाहिने हाथ पर बैठकर,[ञ] मध्यस्थ की प्रार्थना करता है;[ट] और जगत के अन्त में मनुष्यों और स्वर्गदूतों का न्याय करने के लिए वह वापस आएगा।[ठ]

क. *भजन संहिता 40:7 – 8 के साथ इब्रानियों 10:5 – 10; यूहन्ना 10:18; फिलिप्पियों 2:8.* ***ख.*** *गलातियों 4:4.* ***ग.*** *मत्ती 3:15; 5:17.* ***घ.*** *मत्ती 26:37 – 38; 27:46; लूका 22:44.* ***ङ.*** *सम्पूर्ण मत्ती 26 – 27.* ***च.*** *फिलिप्पियों 2:8.* ***छ.*** *प्रेरितों के काम 2:23 – 24, 27; 13:37; रोमियों 6:9.* ***ज.*** *1 कुरिन्थियों 15:3 – 4.* ***झ.*** *यूहन्ना 20:25, 27.* ***ञ.*** *मरकुस 16:19.* ***ट.*** *रोमियों 8:34; इब्रानियों 7:25; 9:24.* ***ठ.*** *मत्ती 13:40 – 42; प्रेरितों के काम 1:11; 10:42; रोमियों 14:9 – 10; 2 पतरस 2:4; यहूदा 1:6.*

5. प्रभु यीशु ने, अपने सिद्ध आज्ञापालन और बलिदान के द्वारा, जिसे उसने सनातन आत्मा के द्वारा एक ही बार परमेश्वर को अर्पित किया, अपने पिता के न्याय को पूर्ण रूप से संतुष्ट किया है,[क] और उन सब लोगों के लिए जिन्हें पिता ने उसे सौंपा है, न केवल मेलमिलाप को, वरन् स्वर्ग के राज्य में अनन्त मीरास को भी मोल लिया है।[ख]

क. *रोमियों 3:25 – 26; 5:19; इफिसियों 5:2; इब्रानियों 9:14, 16; 10:14.* ***ख.*** *दानिय्येल 9:24, 26; यूहन्ना 17:2; इफिसियों 1:11, 14; कुलुस्सियों 1:19 – 20; इब्रानियों 9:12, 15.*

6. यद्यपि उद्धार का कार्य वास्तव में ख्रीष्ट द्वारा उसके देहधारण के बाद से पहले नहीं पूरा किया गया था, फिर भी उसके गुण, प्रभावकारिता और लाभ, संसार के आरम्भ से लेकर उसके बाद के सभी युगों में उन प्रतिज्ञाओं, प्रतीकों, और बलिदानों में और उनके द्वारा, चुने हुए लोगों तक पहुँचाए गए थे, जिनमें वह स्त्री का बीज होने के लिए प्रकट एवं प्रदर्शित किया गया था जो सर्प के सिर को कुचलेगा, और वह मेमना जो जगत की उत्पत्ति से ही वध किया गया है, जो कल, आज और सदा सर्वदा के लिए एक समान है।[क]

क. उत्पत्ति 3:15; गलातियों 4:4 – 5; इब्रानियों 13:8; प्रकाशितवाक्य 13:8.

7. ख्रीष्ट, मध्यस्थता के कार्य में, दोनों स्वभावों के अनुसार कार्य करता है; प्रत्येक स्वभाव के द्वारा वह उस कार्य करता है जो उस स्वभाव के लिए उचित है;[क] फिर भी, व्यक्ति की एकता के तर्क द्वारा, वह जो कभी-कभी एक स्वभाव के लिए उचित है, पवित्रशास्त्र में, ऐसे व्यक्ति के लिए ठहराई गई है जो दूसरे स्वभाव द्वारा निर्दिष्ट है।[ख]

क. इब्रानियों 9:14; 1 पतरस 3:18. ख. यूहन्ना 3:13; प्रेरितों के काम 20:28; 1 यूहन्ना 3:16.

8. उन सभी के लिए जिनके लिए ख्रीष्ट ने छुटकारा मोल लिया है, वह निश्चित रूप से और प्रभावी रूप से इसे लागू करता है और इसे प्रदान करता है;[क] उनके लिए मध्यस्थ की प्रार्थना करता है,[ख] और वचन में और वचन के द्वारा, उद्धार के रहस्यों को उन के लिए प्रकट करता है;[ग] अपने आत्मा के द्वारा उन्हें प्रभावशाली रूप से विश्वास एवं आज्ञापालन के लिए मनाता है; और अपने वचन एवं आत्मा के द्वारा उनके हृदयों पर शासन करता है;[घ] अपने सर्वसामर्थी शक्ति और बुद्धि के द्वारा उनके सभी शत्रुओं पर, इस रीति से और उन तरीकों से विजय प्राप्त करता है जो अद्‌भुत और अगम्य विधान के साथ सबसे अधिक सुसंगत हैं।[ङ]

क. यूहन्ना 6:37, 39; 10:15 – 16. ख. रोमियों 8:34; 1 यूहन्ना 2:1 – 2. ग. यूहन्ना 15:13, 15; 17:6; इफिसियों 1:7 – 9. घ. यूहन्ना 14:16; 17:17; रोमियों 8:9, 14; 15:18 – 19; 2 कुरिन्थियों 4:13; इब्रानियों 12:2. ङ. भजन संहिता 110:1; मलाकी 4:2 – 3; 1 कुरिन्थियों 15:25 – 26; कुलुस्सियों 2:15.

अध्याय 9. स्वतंत्र इच्छा के विषय में

1. परमेश्वर ने मनुष्य की इच्छा को वह स्वाभाविक स्वतंत्रता प्रदान की है, जिसे न तो जबरदस्ती थोपा गया है और न ही किसी परम अनिवार्यता के द्वारा भले या बुरे के लिए निर्धारित किया गया है।[क]

__क.__ व्यवस्थाविवरण 30:19; मत्ती 17:12; याकूब 1:4.

2. मनुष्य के पास, उसकी निर्दोषता की अवस्था में, जो परमेश्वर को अच्छा एवं प्रसन्न करने वाला था, उसकी इच्छा करने एवं उसे करने की स्वतंत्रता एवं शक्ति थी,[क] लेकिन फिर भी वह परिवर्तनशील थी, जिससे कि वह उस अवस्था से गिर सकता था।[ख]

__क.__ उत्पत्ति 1:26; सभोपदेशक 7:29. __ख.__ उत्पत्ति 2:16 – 17; 3:6.

3. मनुष्य ने, पाप की अवस्था में अपने गिरने के द्वारा, उद्धार को प्राप्त करने के लिए किसी भी आत्मिक भलाई की इच्छा करने की क्षमता को पूर्ण रूप से खो दिया है;[क] इस प्रकार एक प्राकृतिक मनुष्य के समान, उस भलाई से पूरी रीति से विमुख,[ख] और पाप में मरा हुआ होकर,[ग] अपनी स्वयं की शक्ति के द्वारा, स्वयं का परिवर्तन करने, या इसके लिए स्वयं को तैयार करने में वह सक्षम नहीं है।[घ]

__क.__ यूहन्ना 15:5; रोमियों 5:6; 8:7. __ख.__ रोमियों 3:10, 12. __ग.__ इफिसियों 2:1, 5; कुलुस्सियों 2:13. __घ.__ यूहन्ना 6:44, 65; 1 कुरिन्थियों 2:14; इफिसियों 2:2 – 5; तीतुस 3:3 – 5.

4. जब परमेश्वर किसी पापी मनुष्य का हृदय परिवर्तन करता है, और उसे अनुग्रह की अवस्था में स्थानांतरित करता है, तो वह उसे पाप के अधीन उसके प्राकृतिक दासत्व से मुक्त करता है,[क] और केवल अपने अनुग्रह के द्वारा उसे स्वतंत्र रूप से उस बात की इच्छा करने एवं वह करने में सक्षम बनाता है, जो आत्मिक रूप से भला है;[ख] फिर भी वह कार्य भी, अपने शेष बची भ्रष्टता के कारण, वह न तो सिद्धता से करता है, और न ही केवल उसकी इच्छा करता है जो भला है, परन्तु उस बात की भी इच्छा करता है जो बुरा है।[ग]

__क.__ यूहन्ना 8:34, 36; कुलुस्सियों 1:13. __ख.__ रोमियों 6:18, 22; फिलिप्पियों 2:13. __ग.__ रोमियों 7:15, 18 – 19, 21, 23; गलातियों 5:17.

5. मनुष्य की इच्छा को सिद्धता से और अपरिवर्तनीय रूप से स्वतंत्र, केवल भलाई करने के लिए, केवल महिमा की अवस्था में ही बनाया जाता है।[क]

__क.__ इफिसियों 4:13; इब्रानियों 12:23; 1 यूहन्ना 3:2; यहूदा 1:24.

अध्याय 10. प्रभावशाली बुलाहट के विषय में

1. वे सभी लोग जिन्हें परमेश्वर ने जीवन के लिए पूर्व-निर्धारित किया है, और केवल उन्हें ही, उसे अच्छा लगा, कि वह अपने नियुक्त और स्वीकृत समय में, अपने वचन एवं आत्मा के द्वारा,[ख] प्रभावशाली रूप से,[क] पाप और मृत्यु की अवस्था में से बाहर निकालकर जिसमें वे अपने स्वभाव के कारण हैं, यीशु ख्रीष्ट के द्वारा अनुग्रह और उद्धार के लिए बुलाए;[ग] परमेश्वर की बातों को समझने के लिए उनकी बुद्धि को आत्मिक रूप से और उद्धारकारी रूप से वह प्रकाशित करता है;[घ] उनके पत्थर रूपी हृदय को निकालकर और उन्हें मांस का हृदय देकर;[ङ] उनकी इच्छाओं को नवीनीकृत करता है, और अपनी सर्वशक्तिमान इच्छा के द्वारा उनसे जो भला है उसे करने को निर्धारित करता है,[च] और उन्हें यीशु ख्रीष्ट की ओर प्रभावशाली रीति से आकर्षित करता है;[छ] फिर भी जब वे सबसे स्वतंत्र रूप से आते हैं, तो उसके अनुग्रह के द्वारा इच्छुक बनाए जाने से आते हैं।[ज]

__क.__ रोमियों 8:30; 11:7; इफिसियों 1:10 – 11. __ख.__ 2 कुरिन्थियों 3:3, 6; 2 थिस्सलुनीकियों 2:13 – 14. __ग.__ रोमियों 8:2; इफिसियों 2:1 – 5; 2 तीमुथियुस 1:9 – 10. __घ.__ प्रेरितों के काम 26:18; 1 कुरिन्थियों 2:10, 12; इफिसियों 1:17 – 18. __ङ.__ यहेजकेल 36:26. __च.__ व्यवस्थाविवरण 30:6; यहेजकेल 11:19; 36:27; फिलिप्पियों 2:13. __छ.__ यूहन्ना 6:44 – 45; इफिसियों 1:19. __ज.__ भजन संहिता 110:3; श्रेष्ठगीत 1:4; यूहन्ना 6:37; रोमियों 6:16 – 18.

2. यह प्रभावशाली बुलाहट केवल परमेश्वर के स्वतंत्र एवं विशेष अनुग्रह से है, न कि मनुष्य में पहले से देखी गई किसी भी वस्तु से;[क] मनुष्य इसमें पूर्ण रूप से निष्क्रिय है, जब तक कि, पवित्र आत्मा के द्वारा उसे जीवित और नया नहीं बनाया जाता है,[ख] जिसके कारण वह इस बुलाहट का उत्तर

देने, और इसमें प्रस्तुत और प्रकट अनुग्रह को स्वीकार करने के लिए सक्षम बनाया जाता है।[ग]

__क.__ रोमियों 9:11; इफिसियों 2:4 – 5, 8 – 9; 2 तीमुथियुस 1:9; तीतुस 3:4 – 5. __ख.__ रोमियों 8:7; 1 कुरिन्थियों 2:14; इफिसियों 2:5. __ग.__ यहेजकेल 36:27; यूहन्ना 5:25; 6:37.

3. चुने हुए शिशु, जो बचपन में मर जाते हैं, ख्रीष्ट के द्वारा आत्मा के माध्यम से नया जीवन पाते एवं बचाए जाते हैं,[क] जो जब, जहाँ, और जिस रीति से वह चाहता है, कार्य करता है।[ख] इसी प्रकार से अन्य वे सभी चुने हुए व्यक्ति भी हैं जो वचन की सेवकाई के द्वारा बाहरी रूप से बुलाए जाने में असमर्थ हैं।[ग]

__क.__ लूका 18:15 – 16 और यूहन्ना 3:3, 5 और प्रेरितों के काम 2:38 – 39 और रोमियों 8:9 और 1 यूहन्ना 5:12 की एक साथ तुलना करने पर. __ख.__ यूहन्ना 3:8. __ग.__ प्रेरितों के काम 4:12; 1 यूहन्ना 5:12.

4. अन्य लोग, जो चुने हुए नहीं हैं, यद्यपि वचन की सेवकाई के द्वारा बुलाए जा सकते हैं,[क] और उनमें आत्मा के कुछ सामान्य कार्य हो सकते हैं,[ख] फिर भी वे कभी भी ख्रीष्ट के पास नहीं आते हैं, और इसलिए बचाए नहीं जा सकते हैं;[ग] और तो और, जो लोग मसीही विश्वास को नहीं मानते हैं, वे किसी भी अन्य तरीके से बचाए नहीं जा सकते हैं, चाहे वे कभी भी प्रकृति के ज्ञान और उस धर्म के नियमों के अनुसार अपने जीवनों को ढालने में बहुत परिश्रमी क्यों न हों, जिसे वे मानते हैं;[घ] और यह दावा करना और निश्चय-पूर्वक कहना कि वे ऐसा कर सकते हैं बहुत ही हानिकारक है, और इसे ठुकरा जाना चाहिए।[ङ]

__क.__ मत्ती 22:14. __ख.__ मत्ती 7:22; 13:20 – 21; इब्रानियों 6:4 – 5. __ग.__ यूहन्ना 6:64 – 65; 8:24. __घ.__ यूहन्ना 4:22; 14:6; 17:3; प्रेरितों के काम 4:12; इफिसियों 2:12. __ङ.__ 1 कुरिन्थियों 16:22; गलातियों 1:6 – 8; 2 यूहन्ना 1:9 – 11.

अध्याय 11. धर्मी ठहराए जाने (धर्मीकरण) के विषय में

1. उन सभी लोगों को जिन्हें परमेश्वर प्रभावशाली रीति से बुलाता है, उन्हें वह सेंतमेंत धर्मी भी ठहराता है;[क] उनमें धार्मिकता को भरकर नहीं, बल्कि उनके पापों को क्षमा करने के द्वारा, और उनके व्यक्ति को धर्मी गिनकर और स्वीकार करने के द्वारा उनमें किए गए किसी भी कार्य या उनके द्वारा किए गए किसी भी कार्य के कारण नहीं, बल्कि केवल ख्रीष्ट के कारण; उनकी धार्मिकता के रूप में न तो स्वयं विश्वास को अभ्यारोपित करने के द्वारा, जो विश्वास करने का कार्य है, और न ही किसी अन्य सुसमाचार से सम्बन्धित आज्ञाकारिता को, उन के लिए अभ्यारोपित करने के द्वारा; परन्तु उन पर ख्रीष्ट की आज्ञाकारिता और प्रायश्चित को अभ्यारोपित करने के द्वारा,[ख] वे विश्वास के द्वारा उसे और उसकी धार्मिकता को प्राप्त करने और उस पर उसकी धार्मिकता पर भरोसा करते हैं; यह विश्वास वे अपनी ओर से नहीं रखते हैं, यह तो परमेश्वर का वरदान है।[ग]

क. *रोमियों 3:24; 8:30.* ***ख.*** *यिर्मयाह 23:6; रोमियों 3:22, 24 – 25, 27 – 28; 4:5 – 8; 5:17 – 19; 1 कुरिन्थियों 1:30 – 31; 2 कुरिन्थियों 5:19, 21; इफिसियों 1:7; तीतुस 3:5, 7.* ***ग.*** *प्रेरितों के काम 10:44; 13:38 – 39; गलातियों 2:16; इफिसियों 2:7 – 8; फिलिप्पियों 3:9.*

2. विश्वास, जो इस रीति से ख्रीष्ट और उसकी धार्मिकता को ग्रहण करता और उस पर भरोसा करता है, धर्मी ठहराए जाने का एकमात्र साधन है;[क] फिर भी यह धर्मी ठहराए गए व्यक्ति में अकेला नहीं है, बल्कि उद्धार वाले अन्य सभी अनुग्रहों के साथ सदैव जुड़ा रहता है, और यह मृत विश्वास नहीं है, बल्कि प्रेम के द्वारा कार्य करता है।[ख]

क. *यूहन्ना 1:12; रोमियों 3:28; 5:1.* ***ख.*** *गलातियों 5:6; याकूब 2:17, 22, 26.*

3. ख्रीष्ट ने अपनी आज्ञाकारिता और मृत्यु के द्वारा, उन सभी लोगों के ऋण को पूरी रीति से चुका दिया है जो इस प्रकार धर्मी ठहराए गए हैं, और उनके लिए अपने पिता के न्याय के निमित्त उचित, वास्तविक एवं पूर्ण प्रायश्चित को प्रदान किया है।[क] फिर भी जितना कि उनके लिए पिता द्वारा

उसे दिया गया था,[ख] और उनकी ओर से उसकी आज्ञाकारिता और प्रायश्चित को स्वीकार किया गया,[ग] और दोनों ही सेंतमेंत रीति से, न कि उनमें किसी वस्तु के होने के कारण है, उनका धर्मी ठहराया जाना केवल सेंतमेंत अनुग्रह से है;[घ] ताकि पापियों के धर्मी ठहराए जाने में परमेश्वर का सच्चा न्याय और भरपूर अनुग्रह महिमान्वित हो सके।[ङ]

क. *यशायाह 53:4 – 6, 10 – 12; दानिय्येल 9:24, 26; रोमियों 5:8 – 10, 19; 1 तीमुथियुस 2:5 – 6; इब्रानियों 10:10, 14.* ***ख.*** *रोमियों 8:32.* ***ग.*** *मत्ती 3:17; 2 कुरिन्थियों 5:21; इफिसियों 5:2.* ***घ.*** *रोमियों 3:24; इफिसियों 1:7.* ***ङ.*** *रोमियों 3:26; इफिसियों 2:7.*

4. परमेश्वर ने अनन्तकाल से, सभी चुने हुए लोगों को धर्मी ठहराने के लिए विधान दिया,[क] और ख्रीष्ट ने, जब समय पूरा हुआ, तो उनके पापों के लिए अपनी जान दी, और उनके धर्मी ठहराए जाने के लिए फिर से जी उठा:[ख] फिर भी, वे तब तक धर्मी नहीं ठहराए जाते हैं जब तक कि पवित्र आत्मा उचित समय पर, वास्तव में ख्रीष्ट को उन पर लागू नहीं करता है।[ग]

क. *रोमियों 8:30; गलातियों 3:8; 1 पतरस 1:2, 19 – 20.* ***ख.*** *रोमियों 4:25; गलातियों 4:4; 1 तीमुथियुस 2:6.* ***ग.*** *गलातियों 2:16; कुलुस्सियों 1:21 – 22; तीतुस 3:4 – 7.*

5. परमेश्वर उन लोगों के पापों को क्षमा करना जारी रखता है जो धर्मी ठहराए गए हैं;[क] और यद्यपि वे कभी भी धर्मी ठहराए जाने की स्थिति से हट नहीं सकते हैं,[ख] फिर भी वे अपने पापों के कारण परमेश्वर के पिता वाले क्रोध के अधीन आ सकते हैं, और परमेश्वर के मुख का प्रकाश उन पर तब तक बहाल नहीं होता है, जब तक वे स्वयं को नम्र नहीं करते, अपने पापों को स्वीकार नहीं करते, क्षमा नहीं माँगते, और अपने विश्वास एवं पश्चाताप को नवीनीकृत नहीं करते हैं।[ग]

क. *मत्ती 6:12; 1 यूहन्ना 1:7, 9; 2:1 – 2.* ***ख.*** *लूका 22:32; यूहन्ना 10:28; इब्रानियों 10:14.* ***ग.*** *भजन संहिता 32:5; 51:7 – 12; 89:31 – 33; मत्ती 26:75; लूका 1:20; 1 कुरिन्थियों 11:30, 32.*

6. पुराने नियम के अन्तर्गत विश्वासियों का धर्मी ठहराया जाना, इन सभी मायनों में, नए नियम के अन्तर्गत विश्वासियों के धर्मी ठहराए जाने के जैसा और एक समान ही था।[क]

***क.** रोमियों 4:22 – 24; गलातियों 3:9, 13 – 14; इब्रानियों 13:8.*

अध्याय 12. लेपालकपन के विषय में

1. सभी धर्मी ठहराए गए लोगों को परमेश्वर, अपने इकलौते पुत्र यीशु ख्रीष्ट में और उसी के लिए, लेपालकपन के अनुग्रह में भागीदार बनाने के लिए कृपापूर्वक उत्तरदायित्व लेता है;[क] जिसके द्वारा, वे परमेश्वर की सन्तानों की संख्या में जोड़े जाते हैं, और परमेश्वर की सन्तानों के सभी लाभों एवं विशेषाधिकारों का आनन्द लेते हैं;[ख] उन पर उसका नाम लिखा जाता है;[ग] लेपालकपन की आत्मा को प्राप्त करते हैं;[घ] साहस के साथ अनुग्रह की सिंहासन तक पहुँच बनाते हैं;[ङ] हे अब्बा, हे पिता पुकारने के लिए समर्थ बनाए जाते हैं;[च] दया के पात्र बनते हैं,[छ] सुरक्षा दी जाती है,[ज] उनकी देखभाल की जाती है,[झ] और एक पिता के समान उसके द्वारा ताड़ना की जाती है;[ञ] फिर भी कभी भी त्यागे नहीं जाते हैं,[ट] परन्तु छुटकारे के दिन के लिए उन पर छाप लगाई जाती है,[ठ] और अनन्त उद्धार की मीरास के रूप में,[ढ] वे प्रतिज्ञाओं के वारिस बनते हैं।[ड]

***क.** गलातियों 4:4 – 5; इफिसियों 1:5. **ख.** यूहन्ना 1:12; रोमियों 8:17. **ग.** यिर्मयाह 14:9; 2 कुरिन्थियों 6:18; प्रकाशितवाक्य 3:12. **घ.** रोमियों 8:15. **ङ.** रोमियों 5:2; इफिसियों 3:12. **च.** गलातियों 4:6. **छ.** भजन संहिता 103:13. **ज.** नीतिवचन 14:26. **झ.** मत्ती 6:30, 32; 1 पतरस 5:7. **ञ.** इब्रानियों 12:6. **ट.** विलापगीत 3:31. **ठ.** इफिसियों 4:30. **ड.** इब्रानियों 6:12. **ढ.** इब्रानियों 1:14; 1 पतरस 1:3 – 4.*

अध्याय 13. पवित्रीकरण के विषय में

1. वे लोग जो प्रभावशाली रीति से बुलाए जाते एवं नया जन्म प्रदान किए जाते हैं, उनमें एक नया हृदय और एक नई आत्मा सृजित होने के कारण, वे ख्रीष्ट की मृत्यु और पुनरुत्थान के आधार पर,[क] उनमें वास करने वाले

उसके वचन एवं आत्मा द्वारा,[ख] वास्तविक एवं व्यक्तिगत रूप से, आगे अधिक पवित्र बनाए जाते हैं; उनमें पाप की सम्पूर्ण देह के प्रभुत्व को नष्ट किया जाता है,[ग] और उसकी कई वासनाओं को अधिक से अधिक कमजोर एवं वश में किया जाता है,[घ] और उन्हें उद्धार वाले सभी अनुग्रहों में, अधिक से अधिक जीवित एवं दृढ़ किया जाता है,[ङ] ताकि वे सच्ची पवित्रता का जीवन जीएं, जिसके बिना कोई भी मनुष्य प्रभु परमेश्वर को देख नहीं पाएगा।[च]

***क.** प्रेरितों के काम 20:32; रोमियों 6:5 – 6; 1 कुरिन्थियों 6:11; फिलिप्पियों 3:10. **ख.** यूहन्ना 17:17; इफिसियों 5:26; 2 थिस्सलुनीकियों 2:13. **ग.** रोमियों 6:6, 14. **घ.** रोमियों 8:13; गलातियों 5:24. **ङ.** इफिसियों 3:16 – 19; कुलुस्सियों 1:11. **च.** 2 कुरिन्थियों 7:1; इब्रानियों 12:14.*

2. यह पवित्रीकरण सम्पूर्ण मनुष्य में पूरे जीवन भर होता है,[क] फिर भी इस जीवन में यह सिद्ध नहीं है; प्रत्येक भागों में भ्रष्टता के कुछ अवशेष फिर भी विद्यमान रहते हैं,[ख] जिसके कारण एक निरन्तर चलने वाला और परस्पर विरोधी युद्ध चलता रहता है, जिसमें शरीर आत्मा के विरुद्ध कामुकता करता है, तथा आत्मा शरीर के विरुद्ध युद्ध करता है।[ग]

***क.** 1 थिस्सलुनीकियों 5:23. **ख.** रोमियों 7:18, 23; फिलिप्पियों 3:12; 1 यूहन्ना 1:10. **ग.** गलातियों 5:17; 1 पतरस 2:11.*

3. इस युद्ध में, यद्यपि बची हुई भ्रष्टता कुछ समय के लिए बहुत प्रबल हो सकती है,[क] फिर भी, ख्रीष्ट के पवित्र करने वाले आत्मा से निरन्तर शक्ति की आपूर्ति के माध्यम से, नया जन्म प्राप्त भाग विजयी अवश्य होता है;[ख] और इस प्रकार संत लोग अनुग्रह में बढ़ते हैं,[ग] एवं परमेश्वर के भय में पवित्रता को सिद्ध बनाते हैं।[घ]

***क.** रोमियों 7:23. **ख.** रोमियों 6:14; इफिसियों 4:15 – 16; 1 यूहन्ना 5:4. **ग.** 2 कुरिन्थियों 3:18; 2 पतरस 3:18. **घ.** 2 कुरिन्थियों 7:1.*

अध्याय 14. उद्धार वाले विश्वास के विषय में

1. विश्वास का अनुग्रह, जिसके द्वारा चुने हुए लोगों को उनके प्राणों के उद्धार के निमित्त विश्वास करने के लिए सक्षम बनाया जाता है,[क] उनके हृदयों में ख्रीष्ट के आत्मा का कार्य है,[ख] और यह सामान्यतः वचन की सेवकाई के द्वारा कार्यान्वित किया जाता है;[ग] जिसके द्वारा, तथा मसीही संस्कारों एवं प्रार्थना के क्रियान्वयन द्वारा, इसे बढ़ाया एवं दृढ़ किया जाता है।[घ]

> ***क.*** *इब्रानियों 10:39.* ***ख.*** *इफिसियों 1:17 – 19; 2:8; 2 कुरिन्थियों 4:13.* ***ग.*** *रोमियों 10:14, 17.* ***घ.*** *लूका 17:5; प्रेरितों के काम 20:32; रोमियों 1:16 – 17; 4:11; 1 पतरस 2:2.*

2. इस विश्वास के द्वारा मसीही व्यक्ति विश्वास करता है कि वे सभी बातें जिन्हें वचन में प्रकट किया गया है, वे सत्य हैं, क्योंकि स्वयं परमेश्वर का अधिकार उसमें बात करता है;[क] और प्रत्येक अंश में जो कुछ पाया जाता है, उसके अनुसार अलग-अलग रीति से कार्य करता है; आज्ञाओं का पालन करने,[ख] चेतावनियों पर काँपने,[ग] और इस जीवन एवं आने वाले जीवन के लिए परमेश्वर की प्रतिज्ञाओं को अपनाने[घ] के लिए मसीही व्यक्ति इच्छुक बनता है। परन्तु उद्धार वाले विश्वास के प्रमुख कार्य अनुग्रह की वाचा के आधार पर धर्मी ठहराया जाने, पवित्रीकरण, और अनन्त जीवन के लिए केवल ख्रीष्ट को स्वीकार करना, ग्रहण करना और उस पर भरोसा करना है।[ङ]

> ***क.*** *यूहन्ना 4:42; प्रेरितों के काम 24:14; 1 थिस्सलुनीकियों 2:13; 1 यूहन्ना 5:10.* ***ख.*** *रोमियों 16:26.* ***ग.*** *यशायाह 66:2.* ***घ.*** *1 तीमुथियुस 4:8; इब्रानियों 11:13.* ***ङ.*** *यूहन्ना 1:12; प्रेरितों के काम 15:11; 16:31; गलातियों 2:20.*

3. यह विश्वास स्तरों में अलग-अलग, कमजोर या दृढ़ होता है;[क] प्रायः और कई तरीकों से इस पर आक्रमण किया और कमजोर किया जा सकता है, परन्तु यह विजय प्राप्त करता है;[ख] कई लोगों में ख्रीष्ट के माध्यम से पूर्ण

आश्वासन की प्राप्ति के लिए बढ़ता है,[ग] जो हमारे विश्वास का कर्ता और सिद्ध करने वाला दोनों है।[घ]

__क.__ मत्ती 6:30; 8:10; रोमियों 4:19 – 20; इब्रानियों 5:13 – 14. __ख.__ लूका 22:31 – 32; इफिसियों 6:16; 1 यूहन्ना 5:4 – 5. __ग.__ कुलुस्सियों 2:2; इब्रानियों 6:11 – 12; 10:22. __घ.__ इब्रानियों 12:2.

अध्याय 15. जीवन के लिए पश्चाताप के विषय में

1. जीवन के लिए पश्चाताप सुसमाचार सम्बन्धित अनुग्रह है,[क] जिसका सिद्धांत, ख्रीष्ट में विश्वास के सिद्धांत के साथ-साथ, सुसमाचार के प्रत्येक प्रचारक व सेवक द्वारा प्रचार किया जाना चाहिए।[ख]

__क.__ जकर्याह 12:10; प्रेरितों के काम 11:18. __ख.__ लूका 24:47; मरकुस 1:15; प्रेरितों के काम 20:21.

2. इसके द्वारा पापी मनुष्य, न केवल खतरे की दृष्टि और बोध के कारण, बल्कि अपने पापों की गंदगी और घिनौनेपन के कारण भी, जो कि परमेश्वर के पवित्र स्वभाव एवं धर्मी व्यवस्था के विपरीत है, और पश्चाताप करने वालों के लिए ख्रीष्ट में परमेश्वर की दया की अनुभूति होने पर, वह अपने पापों के लिए इतना शोकित होता है और अपने पापों से घृणा करता है, कि वह उन सब से विमुख होकर परमेश्वर की ओर मुड़ता है,[क] और उसकी आज्ञाओं के सभी मार्गों में उसके साथ चलने का उद्देश्य बनाता एवं प्रयास करता है।[ख]

__क.__ भजन संहिता 51:4; 119:128; यशायाह 30:22; यिर्मयाह 31:18 – 19; यहेजकेल 18:30 – 31; 36:31; योएल 2:12 – 13; आमोस 5:15; 2 कुरिन्थियों 7:11. __ख.__ 2 राजा 23:25; भजन संहिता 119:6, 59, 106; लूका 1:6.

3. यद्यपि पश्चाताप को पाप के लिए किसी भी प्रकार का प्रायश्चित या क्षमा का कोई कारण नहीं माना जाना चाहिए,[क] जो कि ख्रीष्ट में परमेश्वर के सेंतमेंत अनुग्रह का कार्य है;[ख] फिर भी यह सभी पापियों के लिए इतना

आवश्यक है कि इसके बिना कोई भी व्यक्ति क्षमा की अपेक्षा नहीं कर सकता है।[ग]

क. यहेजकेल 16:61 – 63; 36:31 – 32. ***ख.*** *होशे 14:2, 4; रोमियों 3:24; इफिसियों 1:7.* ***ग.*** *लूका 13:3, 5; प्रेरितों के काम 17:30 – 31.*

4. जिस प्रकार कोई पाप इतना छोटा नहीं होता है परन्तु वह दण्ड के योग्य है,[क] वैसे ही कोई पाप इतना बड़ा नहीं होता कि वह उन लोगों को दण्ड के योग्य बना दे जो सच्चे मन से पश्चाताप करते हैं।[ख]

क. *मत्ती 12:36; रोमियों 5:12; 6:23.* ***ख.*** *यशायाह 1:16, 18; 55:7; रोमियों 8:1.*

5. मनुष्य को सामान्य पश्चाताप से सन्तुष्ट नहीं होना चाहिए, बल्कि प्रत्येक मनुष्य का यह कर्तव्य है कि वह अपने एक-एक पापों के लिए विशेष रूप से पश्चाताप करने का प्रयास करे।[क]

क. *भजन संहिता 19:13; लूका 19:8; 1 तीमुथियुस 1:13, 15.*

6. जिस प्रकार प्रत्येक मनुष्य परमेश्वर समक्ष अपने पापों के विषय में निजी अंगीकार करने, तथा उसके लिए क्षमा की प्रार्थना करने के लिए बाध्य है,[क] जिसके पश्चात, उन्हें त्यागने पर, उसे दया प्राप्त होगी;[ख] वैसे ही जो व्यक्ति अपने भाई, या ख्रीष्ट की कलीसिया को अपमानित करता है, उसे भी चाहिए कि वह निजी एवं सार्वजनिक अंगीकार और अपने पाप के लिए शोक के द्वारा, उन लोगों के समक्ष अपने पश्चाताप की घोषणा करे जो आहत हुए हैं,[ग] तथा इसके पश्चात उन लोगों को उससे मेलमिलाप करना, और प्रेम में उसे ग्रहण करना चाहिए।[घ]

क. *भजन संहिता 32:5 – 6; 51:4 – 5, 7, 9, 14.* ***ख.*** *नीतिवचन 28:13; 1 यूहन्ना 1:9.* ***ग.*** *सम्पूर्ण भजन संहिता 51; यहोशू 7:19; लूका 17:3 – 4; याकूब 5:16.* ***घ.*** *2 कुरिन्थियों 2:8.*

अध्याय 16. भले कार्यों के विषय में

1. भले कार्य केवल वहीं हैं जिनको करने की आज्ञा परमेश्वर ने अपने पवित्र वचन में दिए है,[क] और न कि वे, जो वचन द्वारा बिना किसी अनुमोदन के, अंधे उत्साह से, या किसी भले अभिप्राय के दिखावे के आधार पर मनुष्य द्वारा बनाए जाते हैं।[ख]

क. *मीका 6:8; रोमियों 12:2; इब्रानियों 13:21.* ***ख.*** *1 शमूएल 15:21 – 23; यशायाह 29:13; मत्ती 15:9; यूहन्ना 16:2; रोमियों 10:2; 1 पतरस 1:18.*

2. ये भले कार्य, जो परमेश्वर की आज्ञाओं के पालन में किए जाते हैं, सच्चे एवं जीवित विश्वास के फल एवं प्रमाण हैं;[क] और इनके द्वारा विश्वासी लोग अपनी कृतज्ञता को दिखाते हैं,[ख] अपने आश्वासन को दृढ़ करते हैं,[ग] अपने भाइयों की आत्मिक उन्नति करते हैं,[घ] सुसमाचार के कार्य को सुशोभित करते ह,[ङ] विरोधियों का मुंह बन्द करते हैं,[च] और परमेश्वर की महिमा करते हैं,[छ] इन कार्यों के लिए यीशु ख्रीष्ट में सृजे गए वे उसकी कारीगरी हैं,[ज] ताकि, पवित्रता के निमित्त अपने फल लाकर, वे इसके लक्ष्य अर्थात अनन्त जीवन को पा सके।[झ]

क. *याकूब 2:18, 22.* ***ख.*** *भजन संहिता 116:12 – 13; 1 पतरस 2:9.* ***ग.*** *2 पतरस 1:5 – 10; 1 यूहन्ना 2:3, 5.* ***घ.*** *मत्ती 5:16; 2 कुरिन्थियों 9:2.* ***ङ.*** *1 तीमुथियुस 6:1; तीतुस 2:5, 9 – 12.* ***च.*** *1 पतरस 2:15.* ***छ.*** *यूहन्ना 15:8; फिलिप्पियों 1:11; 1 पतरस 2:12.* ***ज.*** *इफिसियों 2:10.* ***झ.*** *रोमियों 6:22.*

3. भले कार्य करने की उनकी क्षमता उनके अपने आप से नहीं है, बल्कि पूर्ण रूप से ख्रीष्ट के आत्मा से है।[क] और उन्हें भले कार्य करने में सक्षम बनाने हेतु, उन्हें पहले से प्राप्त अनुग्रहों के अतिरिक्त, उनमें इच्छा उत्पन्न करने और परमेश्वर की सुइच्छा निमित्त कार्य करने के लिए उसी पवित्र आत्मा के वास्तविक प्रभाव की आवश्यकता पड़ती है;[ख] फिर भी उन्हें भले कार्य करने में लापरवाह नहीं बनना है, जैसे कि जब तक आत्मा की विशेष प्रेरणा उन्हें न मिले तब तक वे किसी भी कर्तव्य को करने के लिए

बाध्य नहीं हैं; परन्तु उन्हें अपने भीतर विद्यमान परमेश्वर के अनुग्रह को जगाने में परिश्रमी होना चाहिए।[ग]

क. यहेजकेल 36:26 – 27; यूहन्ना 15:4 – 6. ख. फिलिप्पियों 2:13; 4:13; 2 कुरिन्थियों 3:5. ग. यशायाह 64:7; प्रेरितों के काम 26:6 – 7; फिलिप्पियों 2:12; 2 तीमुथियुस 1:6; इब्रानियों 6:11 – 12; 2 पतरस 1:3, 5, 10 – 11; यहूदा 1:20 – 21.

4. वे लोग जो इस जीवन में सम्भव अपने आज्ञापालन में उच्चतम ऊँचाई को प्राप्त करते हैं, वे परमेश्वर की अपेक्षा से अधिक करने और आवश्यकता से अधिक करने के लिए योग्य बनने से उन्हीं लोगों के समान इतने दूर होते हैं, जो बहुत सारे उन कार्यों को करने से चूक जाते हैं जिन्हें करने के कर्तव्य में वे बाध्य होते हैं।[क]

क. नहेम्याह 13:22; अय्युब 9:2 – 3; लूका 17:10; गलातियों 5:17.

5. हम अपने सबसे भले कार्यों के द्वारा, परमेश्वर के हाथों से पापों की क्षमा, या अनन्त जीवन को कमा नहीं सकते हैं, क्योंकि उनके और आने वाली महिमा के बीच बहुत बड़ा अंतर है, और उस असीम दूरी के कारण जो हमारे एवं परमेश्वर के बीच में है, जिनसे उनके द्वारा हम न तो लाभ पा सकते हैं, और न ही अपने पिछले पापों के ऋण के लिए प्रायश्चित कर सकते हैं;[क] परन्तु जब हम उन सभी कार्यों को जिन्हें हम कर सकते हैं पूरा कर लेते हैं, तो हम केवल अपना कर्तव्य पूरा करते हैं, और हम निकम्मे दास हैं;[ख] और क्योंकि वे भले कार्य हैं, वे उसके आत्मा से निकलते हैं;[ग] और जब वे हमारे द्वारा पूरे किए जाते हैं, तो वे दुर्बलता और दोष से इतने अधिक दूषित एवं मिश्रित होते हैं कि वे परमेश्वर के न्याय की गम्भीरता के समक्ष ठहर नहीं सकते हैं।[घ]

क. अय्युब 22:2 – 3; 35:7 – 8; भजन संहिता 16:2; रोमियों 3:20; 4:2, 4, 6; 8:18; इफिसियों 2:8 – 9; तीतुस 3:5 – 7. ख. लूका 17:10. ग. गलातियों 5:22 – 23. घ. भजन संहिता 130:3; 143:2; यशायाह 64:6; रोमियों 7:15, 18; गलातियों 5:17.

6. फिर भी, ख्रीष्ट के द्वारा विश्वासियों के व्यक्ति को स्वीकार किए जाने पर, उनके भले कार्य भी उसमें स्वीकार किए जाते हैं,[क] इसलिए नहीं कि वे इस जीवन में परमेश्वर की दृष्टि में पूर्ण रूप से निष्कलंक एवं ताड़ना योग्य नहीं हैं;[ख] परन्तु यह कि वह, अपने पुत्र में उन पर दृष्टि करने के द्वारा, जो कुछ सच्चे हृदय में से है, उसे स्वीकार करने और पुरस्कृत करने में प्रसन्न होता है, यद्यपि वे कई दुर्बलताएँ एवं दोष के साथ होते हैं।[ग]

क. *उत्पत्ति 4:4 के साथ इब्रानियों 11:4; निर्गमन 28:38; इफिसियों 1:6; 1 पतरस 2:5.* ***ख.*** *अय्यूब 9:20; भजन संहिता 143:2.* ***ग.*** *मत्ती 25:21, 23; 2 कुरिन्थियों 8:12; इब्रानियों 6:10; 13:20 – 21.*

7. नया जन्म रहित मनुष्यों के द्वारा किए गए कार्य, यद्यपि उनका सार ऐसे कार्य हो सकते हैं जिनकी आज्ञा परमेश्वर देता है, और स्वयं उनके और दूसरों के लिए वे लाभदायक हो सकते हैं;[क] फिर भी क्योंकि वे विश्वास के द्वारा पवित्र किए गए हृदय से नहीं निकलते हैं,[ख] और न ही परमेश्वर के वचन के अनुसार, वे सही रीति से किए जाते हैं,[ग] और न ही सही उद्देश्य, अर्थात परमेश्वर की महिमा के लिए किए जाते हैं;[घ] इसलिए वे पापमय हैं, और परमेश्वर को प्रसन्न नहीं कर सकते हैं, और न ही वे मनुष्य को परमेश्वर से अनुग्रह प्राप्त करने के लिए योग्य बनाते हैं।[ङ] और फिर भी उन कार्यों के प्रति उनकी उपेक्षा अधिक पापपूर्ण है तथा परमेश्वर को अप्रसन्न करती है।[च]

क. *1 राजा 21:27, 29; 2 राजा 10:30 – 31; फिलिप्पियों 1:15 – 16, 18.* ***ख.*** *उत्पत्ति 4:3 – 5 के साथ इब्रानियों 11:4, 6.* ***ग.*** *यशायाह 1:12; 1 कुरिन्थियों 13:3.* ***घ.*** *मत्ती 6:2, 5, 16.* ***ङ.*** *आमोस 5:21 – 22; होशे 1:4; हाग्गै 2:14; रोमियों 9:16; तीतुस 1:15; 3:5.* ***च.*** *अय्युब 21:14 – 15; भजन संहिता 14:4; 36:3; मत्ती 23:23; 25:41 – 45.*

अध्याय 17. संतों का अंत तक दृढ़ बने रहने के विषय में

1. वे लोग जिन्हें परमेश्वर ने अपने प्रिय पुत्र में स्वीकार किया है, उसके आत्मा के द्वारा प्रभावशाली रीति से बुलाए गए एवं पवित्र किए गए हैं, वे न तो पूर्ण रूप से और न अंततः अनुग्रह की अवस्था से हटाए जाएंगे परन्तु

निश्चित रूप से अंत तक उसमें दृढ़ता से बने रहेंगे, और सदा के लिए बचा लिए जाएंगे।[क]

क. *यूहन्ना 10:28 – 29; फिलिप्पियों 1:6; 1 पतरस 1:5, 9; 2 पतरस 1:10; 1 यूहन्ना 3:9.*

2. संतों का अंत तक दृढ़ता से बने रहना उनकी स्वयं की स्वतंत्र इच्छा पर नहीं, परन्तु चुनाव के परमेश्वर के विधान की अपरिवर्तनीयता पर निर्भर करता है, जो परमेश्वर पिता के स्वतंत्र एवं अपरिवर्तनीय प्रेम से प्रवाहित होता है;[क] यीशु ख्रीष्ट की योग्यता और मध्यस्थता की प्रभावकारिता पर;[ख] उनमें आत्मा और परमेश्वर के बीज का वास होने पर;[ग] और अनुग्रह की वाचा की प्रकृति पर निर्भर होता है;[घ] इन सबसे उसकी निश्चितता और अचूकता भी उत्पन्न होती है।[ङ]

क. *यिर्मयाह 31:3; 2 तीमुथियुस 2:18 – 19.* ***ख.*** *लूका 22:32; यूहन्ना 17:11, 24; इब्रानियों 7:25; 9:12 – 15; 10:10, 14; 13:20 – 21; रोमियों 8:33 – 39.* ***ग.*** *यूहन्ना 14:16 – 17; 1 यूहन्ना 2:27; 3:9;* ***घ.*** *यिर्मयाह 32:40.* ***ङ.*** *यूहन्ना 10:28; 2 थिस्सलुनीकियों 3:3; 1 यूहन्ना 2:19.*

3. फिर भी वे, शैतान एवं संसार की परीक्षाओं के कारण, उनमें बची हुई व्याप्त भ्रष्टता के कारण, और अपने बचाव के साधनों की उपेक्षा के कारण, भयंकर पापों में पड़ सकते हैं;[क] और कुछ समय के लिए उसमें बने रह सकते हैं:[ख] जिसके कारण वे परमेश्वर की अप्रसन्नता को अपने ऊपर लाते हैं,[ग] और उसके पवित्र आत्मा को दुःखी करते हैं;[घ] कुछ हद तक अपने अनुग्रहों एवं शांति से वंचित हो सकते हैं;[ङ] अपने हृदय को कठोर बना सकते हैं,[च] और उनका विवेक घायल हो सकता है;[छ] दूसरों को चोट पहुँचा एवं उन्हें बदनाम कर सकते हैं,[ज] और स्वयं के ऊपर सांसारिक दण्ड ला सकते हैं।[झ]

क. *मत्ती 26:70, 72, 74.* ***ख.*** *भजन संहिता 51 शीर्षक और भजन संहिता 51:14.* ***ग.*** *2 शमूएल 11:27; यशायाह 64:5, 7, 9.* ***घ.*** *इफिसियों 4:30.* ***ङ.*** *भजन संहिता 51:8, 10, 12; श्रेष्ठगीत*

5:2 – 4, 6; प्रकाशितवाक्य 2:4. ***च.*** *यशायाह 63:17; मरकुस 6:52; 16:14.* ***छ.*** *भजन संहिता 32:3 – 4; 51:8.* ***ज.*** *शमूएल 12:14.* ***झ.*** *भजन संहिता 89:31 – 32; 1 कुरिन्थियों 11:32.*

अध्याय 18. अनुग्रह एवं उद्धार के आश्वासन के विषय में

1. यद्यपि पाखंडी एवं अन्य नया जन्म रहित लोग परमेश्वर की कृपा और उद्धार की अवस्था में होने के विषय में झूठी आशाओं और सांसारिक कल्पनाओं के साथ स्वयं को धोखा दे सकते हैं,[क] परन्तु उनकी यह आशा नष्ट हो जाएगी:[ख] फिर भी जो लोग प्रभु यीशु पर वास्तव में विश्वास करते हैं और विश्वासयोग्यता के साथ उससे प्रेम करते हैं, उसके समक्ष सभी भले विवेक में चलने का प्रयास करते हैं, वे इस जीवन में निश्चित रूप से आश्वस्त हो सकते हैं कि वे अनुग्रह की अवस्था में हैं,[ग] और परमेश्वर की महिमा की आशा में आनन्दित हो सकते हैं, और यह आशा उन्हें कभी भी लज्जित नहीं होने देगी।[घ]

क. *व्यवस्थाविवरण 29:19; अय्यूब 8:13 – 14; मीका 3:11; यूहन्ना 8:41.* ***ख.*** *मत्ती 7:22 – 23.* ***ग.*** *1 यूहन्ना 2:3; 3:14, 18 – 19, 21, 24; 5:13.* ***घ.*** *रोमियों 5:2, 5.*

2. यह निश्चय, मात्र अनुमान और सम्भावित धारणा नहीं है, जो किसी चूकने वाली आशा के ऊपर आधारित हो;[क] परन्तु विश्वास का यह अचूक आश्वासन, उद्धार की प्रतिज्ञाओं के परमेश्वर के सत्य पर,[ख] और उन अनुग्रहों के आन्तरिक साक्षी पर, जिनके लिए इन प्रतिज्ञाओं को किया गया है,[ग] और लेपालकपन के आत्मा की गवाही पर आधारित है, जो हमारी आत्माओं के साथ गवाही देता है कि हम परमेश्वर की सन्तान हैं:[घ] यह आत्मा हमारी विरासत का बयाना है, जिसके द्वारा हम छुटकारे के दिन के लिए मुहरबंद किए गए हैं।[ङ]

क. *इब्रानियों 6:11, 19.* ***ख.*** *इब्रानियों 6:17 – 18.* ***ग.*** *2 कुरिन्थियों 1:12; 2 पतरस 1:4 – 5, 10 – 11; 1 यूहन्ना 2:3; 3:14.* ***घ.*** *रोमियों 8:15 – 16.* ***ङ.*** *इफिसियों 1:13 – 14; 4:30; 2 कुरिन्थियों 1:21 – 22.*

3. यह अचूक आश्वासन विश्वास के सार से सम्बन्धित नहीं है, बल्कि एक सच्चे विश्वासी को लम्बे समय तक प्रतीक्षा करनी पड़ सकती है, और इससे पहले कि वह इसका भागीदार बने, उसे कई कठिनाइयों से संघर्ष करना पड़ सकता है:[क] फिर आत्मा द्वारा उन वस्तुओं को जानने में सक्षम बनाए जाने के कारण जिन्हें परमेश्वर ने उसे सेंतमेंत में दिया है, वह, किसी भी असाधारण प्रकाशन के बिना, अनुग्रह के सामान्य साधनों के सही उपयोग में, उन्हें प्राप्त कर सकता है।[ख] और इसीलिए यह प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है कि वह अपने बुलाए जाने और चुन लिए जाने को सिद्ध करने का भली भाँति यत्न करे;[ग] जिससे इसके कारण उसका हृदय पवित्र आत्मा की शान्ति और आनन्द में, परमेश्वर के लिए प्रेम और कृतज्ञता में, और आज्ञाकारिता के कर्तव्यों में दृढ़ता और प्रसन्नता के साथ,[घ] जो कि इस आश्वासन के उचित फल हैं आगे बढ़ सके: इस रीति से यह मनुष्य को लापरवाही की ओर प्रवृत्त करने से कोसो दूर है।[ङ]

क. *सम्पूर्ण भजन संहिता 88; भजन संहिता 77:1 – 12; यशायाह 50:10; मरकुस 9:24; 1 यूहन्ना 5:13.* ***ख.*** *1 कुरिन्थियों 2:12; इफिसियों 3:17 – 19; इब्रानियों 6:11 – 12; 1 यूहन्ना 4:13.* ***ग.*** *2 पतरस 1:10.* ***घ.*** *रोमियों 5:1 – 2, 5; 14:17; 15:13; इफिसियों 1:3 – 4; भजन संहिता 4:6 – 7; 119:32.* ***ङ.*** *भजन संहिता 130:4; रोमियों 6:1 – 2; 8:1, 12; 2 कुरिन्थियों 7:1; तीतुस 2:11 – 12, 14; 1 यूहन्ना 6 – 7; 2:1 – 2; 3:2 – 3.*

4. सच्चे विश्वासियों के लिए उनके उद्धार का आश्वासन कई रीतियों से डगमगा सकता है, कम हो सकता है, और स्थगित हो सकता है; जैसे कि इसे बनाए रखने में लापरवाही के कारण; किसी विशेष भयंकर पाप में गिरने से, जो विवेक को चोट पहुँचाता है, और आत्मा को दुःखी करता है; किसी अचानक या प्रबल परीक्षा में पड़ने के कारण; परमेश्वर द्वारा अपने मुख का प्रकाश वापस लेने कारण, और यहाँ तक कि दुःख के कारण भी जिससे उनके अन्धकार में चलने और कोई प्रकाश न होने का डर रहता है:[क] फिर भी वे परमेश्वर के उस बीज, और विश्वास के जीवन, ख्रीष्ट और भाइयों के प्रेम, हृदय की उस विश्वासयोग्यता और कर्तव्य के प्रति सचेतन से कभी भी पूरी रीति से वंचित नहीं होते हैं, जिससे आत्मा के कार्य द्वारा,

यह आश्वासन उचित समय में पुनः जागृत हो सकता है,[ख] और जिसके द्वारा, इस बीच समय में, उन्हें घोर निराशा से बचने के लिए सहारा दिया जाता है।[ग]

क. भजन संहिता 31:22; 51:8, 12, 14; 77:1 – 10; सम्पूर्ण भजन संहिता 88; श्रेष्ठगीत 5:2 – 3, 6; यशायाह 50:10; मत्ती 26:69 – 72; इफिसियों 4:30 – 31. ***ख.*** *अय्यूब 13:15; भजन संहिता 51:8, 12; 73:15; यशायाह 50:10; लूका 22:32; 1 यूहन्ना 3:9.* ***ग.*** *भजन संहिता 22:1; सम्पूर्ण भजन संहिता 88; यशायाह 54:7 – 10; यिर्मयाह 32:40; मीका 7:7 – 9.*

अध्याय 19. परमेश्वर की व्यवस्था के विषय में

1. परमेश्वर ने आदम को कार्यों की वाचा के रूप में, एक व्यवस्था दी, जिसके द्वारा उसने उसे और उसकी समस्त सन्तानों को व्यक्तिगत, सम्पूर्ण, सटीक और सतत आज्ञाकारिता के लिए बाँधा; इसका पालन करने पर जीवन की प्रतिज्ञा की, और इसका उल्लंघन करने पर मृत्यु की चेतावनी दी; और इसका पालन करने के लिए उसे सामर्थ्य और योग्यता प्रदान की।[क]

क. *उत्पत्ति 1:26 – 27 के साथ उत्पत्ति 2:17; अय्यूब 28:28; सभोपदेशक 7:29; रोमियों 2:14 – 15; 5:12, 19; 10:5; गलातियों 3:10, 12.*

2. यह व्यवस्था, उसके पाप में पतन के बाद भी, धार्मिकता का एक आदर्श नियम बनी रही; और, इसी प्रकार से परमेश्वर ने इसे सीनै पर्वत पर दस आज्ञाओं के रूप में दिया, और दो पट्टिकाओं पर लिखा;[क] पहली चार आज्ञाओं में परमेश्वर के प्रति हमारा कर्तव्य और बाकी छः में मनुष्य के प्रति हमारा कर्तव्य सम्मिलित है।[ख]

क. *निर्गमन 34:1; व्यवस्थाविवरण 5:32; 10:4; रोमियों 13:8 – 9; याकूब 1:25; 2:8, 10 – 12.* ***ख.*** *मत्ती 22:37 – 40.*

3. इस व्यवस्था के अतिरिक्त, जिसे सामान्यतः नैतिक कहा जाता है, परमेश्वर को अच्छा लगा कि उस युग में कलीसिया के रूप में, इस्राएली लोगों को अनुष्ठानिक व्यवस्था दे, जिनमें कई विशिष्ट अध्यादेश, आंशिक

रूप से आराधना के सम्मिलित थे, जो ख्रीष्ट को, उसके अनुग्रहों, कार्यों, दुःखों, एवं लाभों का पूर्व-चित्रण करते थे;[क] और आंशिक रूप से नैतिक कर्तव्यों के विविध निर्देशों से निहित थे।[ख] ये सभी अनुष्ठानिक व्यवस्थाएँ अब नए नियम के तहत निरस्त कर दिए गए हैं।[ग]

क. *गलातियों 4:1 – 3; कुलुस्सियों 2:17; पूरा इब्रानियों 9; इब्रानियों 10:1.* ***ख.*** *1 कुरिन्थियों 5:7; 2 कुरिन्थियों 6:17; यहूदा 1:23.* ***ग.*** *दानिय्येल 9:27; इफिसियों 2:15 – 16; कुलुस्सियों 2:14, 16 – 17.*

4. उन्हें, एक राजनीतिक निकाय के रूप में, उसने कई न्यायिक व्यवस्थाएँ भी दिए, जो उन लोगों के देश के साथ समाप्त हो गए, और अब एक सामान्य न्याय संगतता की अपेक्षा से अधिक किसी अन्य को बाध्य नहीं करते हैं।[क]

क. *उत्पत्ति 49:10 के साथ 1 पतरस 2:13 – 14; पूरा निर्गमन 21; निर्गमन 22:1 – 29; मत्ती 5:17 के साथ मत्ती 5:38 – 39; 1 कुरिन्थियों 9:8 – 10.*

5. नैतिक व्यवस्था सभी को, जिस रीति से धर्मी ठहराए गए व्यक्तियों को वैसे ही अन्य लोगों को, सदैव इसके पालन के लिए बाँधती है;[क] और यह केवल इसमें निहित विषय के सम्बन्ध में ही नहीं, परन्तु उस सृष्टिकर्ता परमेश्वर के अधिकार के सम्बन्ध में भी है, जिसने इसे दिया है।[ख] सुसमाचार में ख्रीष्ट ने इस दायित्व को किसी भी रीति से समाप्त नहीं किया है, बल्कि इसे अधिक दृढ़ बनाया है।[ग]

क. *रोमियों 13:8 – 10; इफिसियों 6:2; 1 यूहन्ना 2:3 – 4, 7 – 8.* ***ख.*** *याकूब 2:10 – 11.* ***ग.*** *मत्ती 5:17 – 19; रोमियों 3:31; याकूब 2:8.*

6. व्यवस्था के उपर्युक्त उपयोग सुसमाचार के अनुग्रह के विपरीत नहीं हैं, बल्कि वे उसके साथ मधुरता से अनुपालन करते हैं:[क] ख्रीष्ट का आत्मा उस कार्य को स्वतंत्र रूप से और प्रसन्नता से करने के लिए मनुष्य की

इच्छा को वश में करता और सक्षम बनाता है, जिसे कि व्यवस्था में प्रकट, परमेश्वर की इच्छा, का पालन करने की अपेक्षा करता है।[ख]

क. *गलातियों 3:21.* ***ख.*** *यहेजकेल 36:27; इब्रानियों 8:10 के साथ यिर्मयाह 31:33.*

6. यद्यपि सच्चे विश्वासी, कार्यों की वाचा के रूप में व्यवस्था के अधीन नहीं हैं, जिसके कारण उन्हें धर्मी या दोषी ठहराया जा सके;[क] फिर भी यह उनके लिए, और साथ में अन्य लोगों के लिए बहुत उपयोगी है; क्योंकि, जीवन के नियम के रूप में, परमेश्वर की इच्छा और उनके कर्तव्य के विषय में उन्हें सूचित करने के लिए, यह उन्हें इसके अनुसार निर्देशित एवं बाध्य करते हैं;[ख] साथ में उनके स्वभाव, हृदयों, एवं जीवनों के पापमय अशुद्धियों को भी उजागर करता है;[ग] जिससे कि, इसके द्वारा स्वयं की जाँच करने से, वे पाप के प्रति और अधिक दोषानुभूति कर सकें, उसकी निन्दा करें, और उससे घृणा करें;[घ] साथ में उन्हें यह स्पष्ट दृष्टि अधिकता से प्राप्त हो सके, कि ख्रीष्ट, और उसके आज्ञापालन की सिद्धता की उन्हें कितनी अधिक आवश्यकता है।[ङ] इसी रीति से यह नया जन्म प्राप्त लोगों के लिए भी उपयोगी है, क्योंकि यह पाप को रोकता है;[च] और इसके लिए चेतावनियाँ यह दिखाने का कार्य करती हैं कि उनके पाप की मजदूरी क्या है, और इस जीवन में उनके लिए किन कष्टों की अपेक्षा वे कर सकते हैं, भले ही वे उन अभिशापों से स्वतंत्र हैं जिनकी चेतावनी व्यवस्था में दी गई है।[छ] इसी प्रकार से, इसकी प्रतिज्ञाएँ उन्हें दिखाती हैं, आज्ञाकारिता के प्रति परमेश्वर की स्वीकृति, तथा इसके आज्ञापालन से वे किन आशीषों की अपेक्षा कर सकते हैं;[ज] यद्यपि व्यवस्था के द्वारा कार्यों की वाचा के रूप में उनकी कमाई के रूप में नहीं[झ] जैसे कि मनुष्य का भलाई करना, और बुराई से दूर रहना, क्योंकि व्यवस्था एक को प्रोत्साहित करता है और दूसरे को रोकता है, इसका यह प्रमाण नहीं है कि वह व्यवस्था के अधीन है, और अनुग्रह के अधीन नहीं है।[ञ]

क. *प्रेरितों के काम 13:39; रोमियों 6:14; 8:1; गलातियों 2:16; 3:13; 4:4 – 5.* ***ख.*** *भजन*

संहिता 119:4 – 6; रोमियों 7:12, 22, 25; 1 कुरिन्थियों 7:19; गलातियों 5:14, 16, 18 – 23. ***ग.*** *रोमियों 3:20; 7:7.* ***घ.*** *रोमियों 7:9, 14, 24; याकूब 1:23 – 25.* ***ङ.*** *रोमियों 7:24 – 25; 8:3 – 4; गलातियों 3:24.* ***च.*** *भजन संहिता 119:101, 104, 128; याकूब 2:11;* ***छ.*** *एज्रा 9:13 – 14; भजन संहिता 89:30 – 34.* ***ज.*** *लैव्यव्यवस्था 26:1, 10; 26:14 के साथ 2 कुरिन्थियों 6:16; भजन संहिता 19:11; 37:11 के साथ मत्ती 5:5; इफिसियों 6:2 – 3.* ***झ.*** *लूका 17:10; गलातियों 2:16.* ***ञ.*** *रोमियों 6:12, 14; इब्रानियों 12:28 – 29; 1 पतरस 3:8 – 12 के साथ भजन संहिता 34:12 – 16.*

अध्याय 20. मसीही स्वतंत्रता, और विवेक की स्वतंत्रता के विषय में

1. सुसमाचार के तहत ख्रीष्ट ने विश्वासियों के लिए जिस स्वतंत्रता को मोल लिया, उसमें पाप के दोष से, परमेश्वर के दोषी ठहराने वाले क्रोध से, नैतिक व्यवस्था के अभिशाप से उनकी स्वतंत्रता है;[क] और इस वर्तमान दुष्ट संसार से, शैतान के दासत्व से, और पाप के प्रभुत्व से,[ख] कष्टों की दुष्टता से, पाप के डंक से, कब्र की विजय से, और अनन्त दण्ड से उनका छुड़ाया जाना है;[ग] और साथ में परमेश्वर तक उनकी स्वतंत्र पहुँच में,[घ] और उसके प्रति आज्ञाकारिता में उनके इच्छुक बनने में स्वतंत्रता है, दासत्व के भय से नहीं, बल्कि बच्चों – जैसे प्रेम और तत्पर मन से।[ङ] ये सभी बातें व्यवस्था के अधीन विश्वासियों के लिए भी समान थीं;[च] परन्तु नए नियम के तहत उस अनुष्ठानिक व्यवस्था के बन्धन से, जिसके अधीन यहूदी कलीसिया थी;[छ] और अनुग्रह के सिंहासन तक पहुँच के लिए अधिक साहस में,[ज] और परमेश्वर के स्वतंत्र आत्मा के अधिक पूर्णतः से दिए जाने में, मसीही लोगों की स्वतंत्रता को और अधिक बढ़ा दिया गया है, जो कि व्यवस्था के अधीन विश्वासियों को सामान्यतः प्राप्त नहीं थी।[झ]

क. *गलातियों 3:13; 1 थिस्सलुनीकियों 1:10; तीतुस 2:14.* ***ख.*** *प्रेरितों के काम 26:18; रोमियों 6:14; गलातियों 1:4; कुलुस्सियों 1:13.* ***ग.*** *भजन संहिता 119:71; रोमियों 8:1, 28; 1 कुरिन्थियों 15:54 – 57.* ***घ.*** *रोमियों 5:1 – 2.* ***ङ.*** *रोमियों 8:14 – 15; 1 यूहन्ना 4:18.* ***च.*** *गलातियों 3:9, 14.* ***छ.*** *प्रेरितों के काम 15:10 – 11; गलातियों 4:1 – 3, 6 – 7; 5:1.* ***ज.*** *इब्रानियों 4:14, 16; 10:19 – 22.* ***झ.*** *यूहन्ना 7:38 – 39; 2 कुरिन्थियों 3:13, 17 – 18.*

2. केवल परमेश्वर ही विवेक का प्रभु है,[क] और उसने इसे मनुष्यों के उन सिद्धांतों एवं आज्ञाओं से स्वतंत्र रखा है, जो विश्वास या आराधना के विषय

में उसके वचन के विपरीत है, या उससे भिन्न हैं।[ख] इसलिए विवेक के बाहर ऐसे सिद्धांतों पर विश्वास करना, या ऐसी आज्ञाओं का पालन करना, विवेक की सच्ची स्वतंत्रता के साथ विश्वासघात करना है;[ग] और पूर्ण विश्वास, एवं पूर्ण एवं अंध आज्ञाकारिता की अपेक्षा करना, विवेक की स्वतंत्रता के साथ-साथ, तर्क को भी नष्ट करना है।[घ]

क. *रोमियों 14:4; याकूब 4:12.* ***ख.*** *मत्ती 15:9; 23:8 – 10; प्रेरितों के काम 4:19; 5:29; 1 कुरिन्थियों 7:23; 2 कुरिन्थियों 1:24.* ***ग.*** *भजन संहिता 5:1; गलातियों 1:10; 2:4 – 5; 5:1; कुलुस्सियों 2:20 – 23.* ***घ.*** *यशायाह 8:20; यिर्मयाह 8:9; होशे 5:11; यूहन्ना 4:22; प्रेरितों के काम 17:11; रोमियों 10:17; 14:23; प्रकाशितवाक्य 13:12, 16 – 17.*

3. ऐसे लोग जो मसीही स्वतंत्रता का दिखावा करके, कोई भी पाप करते हैं, या किसी भी वासना की कामना करते हैं, वे मसीही स्वतंत्रता के उद्देश्य को नष्ट कर देते हैं; अर्थात, यह कि, शत्रुओं के हाथों से छुड़ाए जाने के नाते, हम जीवन भर प्रभु के सामने उसकी सेवा, बिना किसी भय के, पवित्रता एवं धार्मिकता से कर सकें।[क]

क. *लूका 1:74 – 75; यूहन्ना 8:34; गलातियों 5:13; 1 पतरस 2:16; 2 पतरस 2:19.*

4. और चूंकि वह अधिकार जिसे परमेश्वर ने ठहराया है, और वह स्वतंत्रता जिसे ख्रीष्ट ने मोल लिया है, परमेश्वर द्वारा नष्ट करने के लिए अभिप्रेत नहीं, बल्कि परस्पर एक दूसरे का निर्माण करने एवं सुरक्षित करने के लिए अभिप्रेत की गई है; जो लोग, मसीही स्वतंत्रता के दिखावे पर, किसी भी वैध अधिकार, या उसके वैध प्रयोग का विरोध करते हैं, चाहे वे नागरिक हों या कलीसियाई सम्बन्धी हों, वे परमेश्वर के अध्यादेश का विरोध करते हैं।[क] और अपने ऐसे विचारों को प्रकाशित करना, या ऐसे व्यवहारों को बनाए रखना, प्रकृति के ज्ञान, या मसीही विश्वास के ज्ञात सिद्धांतों के विपरीत हैं, चाहे वे विश्वास, आराधना से सम्बन्धित हैं, या वार्तालाप से सम्बन्धित हैं; या धार्मिकता के अधिकार से सम्बन्धित है; या ऐसे त्रुटिपूर्ण विचार या व्यवहार जो, या तो अपने स्वभाव में, या उनके प्रकाशित करने

या बनाए रखने के तरीकों में, उस बाहरी शांति एवं व्यवस्था के लिए विनाशकारी हैं, जिन्हें ख्रीष्ट ने अपनी कलीसिया में स्थापित किया है; उन्हें कानूनी रूप से उत्तरदायी ठहराया जा सकता है,[ख] और कलीसिया के निन्दा प्रस्तावों एवं नागरिक मजिस्ट्रेट के अधिकार द्वारा उनके विरुद्ध कार्यवाही की जा सकती है।[ग]

क. *मत्ती 12:25; रोमियों 13:1 – 8; इब्रानियों 13:17; 1 पतरस 2:13 – 14, 16.* ***ख.*** *रोमियों 1:32 के साथ 1 कुरिन्थियों 5:1, 5, 11, 13; 2 यूहन्ना 1:10 – 11 और 2 थिस्सलुनीकियों 3:14 और 1 तीमुथियुस 6:3 – 5 और तीतुस 1:10 – 11, 13 और तीतुस 3:10 के साथ मत्ती 18:15 – 17; 1 तीमुथियुस 1:19 – 20; प्रकाशितवाक्य 2:2, 14 – 15, 20; 3:9.* ***ग.*** *व्यवस्थाविवरण 13:6 – 12; 2 राजा 23:5 – 6, 9, 20 – 21; 2 इतिहास 15:12 – 13, 16; 34:33; नहेम्याह 13:15, 17, 21 – 22, 25, 30; यशायाह 49:23; दानिय्येल 3:29; जकर्याह 13:2 – 3; रोमियों 13:3 – 4 के साथ 2 यूहन्ना 1:10 – 11; 1 तीमुथियुस 2:2; प्रकाशितवाक्य 17:12, 16 – 17.*

अध्याय 21. मसीही आराधना, एवं सब्त के दिन के विषय में

1. प्रकृति का ज्ञान यह दिखाता है कि एक परमेश्वर है, जिसका स्वामित्व एवं सम्प्रभुता सभी पर है; वह भला है, और सब लोगों के साथ भलाई करता है; और इसलिए उसका भय माना जाना चाहिए, उससे प्रेम करना चाहिए, उसकी स्तुति करनी चाहिए, उससे प्रार्थना करनी चाहिए, उस पर भरोसा करना चाहिए, और सम्पूर्ण हृदय, सम्पूर्ण प्राण, एवं सम्पूर्ण शक्ति से उसकी सेवा करनी चाहिए।[क] परन्तु सच्चे परमेश्वर की आराधना करने का स्वीकार्य तरीका स्वयं परमेश्वर द्वारा स्थापित किया गया है, और उसकी स्वयं की प्रकट इच्छा तक ही सीमित है, जिसके कारण मनुष्यों की कल्पनाओं और युक्तियों, या शैतान के सुझावों के अनुसार, किसी भी सदृश्य चित्रण या पवित्र शास्त्र में निर्धारित न किए गए अन्य तरीकों से उसकी आराधना नहीं की जा सकती है।[ख]

क. *यहोशू 24:14; भजन संहिता 18:3; 31:23; 62:8; 119:68; यिर्मयाह 10:7; मरकुस 12:33; प्रेरितों के काम 17:24; रोमियों 1:20; 10:12.* ***ख.*** *निर्गमन 20:4 – 6; व्यवस्थाविवरण 4:15 – 20; 12:32; मत्ती 4:9 – 10; 15:9; प्रेरितों के काम 17:25; कुलुस्सियों 2:23.*

2. मसीही आराधना परमेश्वर पिता, परमेश्वर पुत्र और पवित्र आत्मा को दी जानी चाहिए और केवल उसी को;[क] न कि स्वर्गदूतों, संतों या किसी अन्य प्राणी को;[ख] और पाप में पतन के बाद से, बिना किसी मध्यस्थ के नहीं; और न ही किसी अन्य मध्यस्थ में परन्तु केवल ख्रीष्ट के मध्यस्थता में आराधना दी जानी चाहिए।[ग]

__क.__ मत्ती 4:10 के साथ यूहन्ना 5:23 और 2 कुरिन्थियों 13:14. __ख.__ रोमियों 1:25; कुलुस्सियों 2:18; प्रकाशितवाक्य 19:10. __ग.__ यूहन्ना 14:6; इफिसियों 2:18; कुलुस्सियों 3:17; 1 तीमुथियुस 2:5.

3. धन्यवाद के साथ प्रार्थना, मसीही आराधना का एक विशेष भाग होने के कारण,[क] परमेश्वर इसे सभी मनुष्यों से अपेक्षा करता है;[ख] और ताकि इसे स्वीकार किया जा सके, इसके लिए इसे पुत्र के नाम से,[ग] उसके आत्मा की सहायता से,[घ] उसकी इच्छानुसार,[ङ] समझ, श्रद्धा, नम्रता, उत्साह-जोश, विश्वास, प्रेम, और विश्वास में दृढ़ता के साथ किया जाना चाहिए;[च] और यदि यह मुखर ध्वनि में है, तो किसी परिचित भाषा में की जानी चाहिए।[छ]

__क.__ फिलिप्पियों 4:6. __ख.__ भजन संहिता 65:2. __ग.__ यूहन्ना 14:13 – 14; 1 पतरस 2:5. __घ.__ रोमियों 8:26. __ङ.__ 1 यूहन्ना 5:14. __च.__ उत्पत्ति 18:27; भजन संहिता 47:7; सभोपदेशक 5:1 – 2; मत्ती 6:12, 14 – 15; मरकुस 11:24; इफिसियों 6:18; कुलुस्सियों 4:2; इब्रानियों 12:28; याकूब 1:6 – 7; 5:16. __छ.__ 1 कुरिन्थियों 14:14.

4. प्रार्थना वैध बातों के लिए की जानी चाहिए,[क] और सभी प्रकार के मनुष्यों के लिए जो जीवित हैं, या जो लोग भविष्य में रहेंगे;[ख] परन्तु मृतकों के लिए नहीं,[ग] और न ही उन लोगों के लिए जिनके विषय में यह ज्ञात हो कि उन्होंने मृत्यु के दंड वाला पाप किया है।[घ]

क. 1 यूहन्ना 5:14. ख. रूत 4:12; 2 शमूएल 7:29; यूहन्ना 17:20; 1 तीमुथियुस 2:1 – 2. ग. 2 शमूएल 12:21 – 23 के साथ लूका 16:25 – 26; प्रकाशितवाक्य 14:13. घ. 1 यूहन्ना 5:16.

5. ईश्वरीय भय के साथ पवित्रशास्त्र का पढ़ा जाना;[क] उचित संदेश का प्रचार किया जाना;[ख] और समझ, विश्वास, एवं श्रद्धा के साथ परमेश्वर के प्रति आज्ञाकारिता में सचेतन होकर वचन का सुना जाना;[ग] हृदय में अनुग्रह के साथ भजन का गाया जाना;[घ] साथ ही, ख्रीष्ट द्वारा स्थापित संस्कारों को उचित रीति से देना एवं योग्य रीति से ग्रहण किया जाना; ये सभी परमेश्वर की सामान्य मसीही आराधना का भाग हैं:[ङ] इनके अतिरिक्त धार्मिक शपथ,[च] व्रत,[छ] धार्मिक उपवास,[ज] और कई समयों पर धन्यवाद;[झ] जिन्हें उनके विभिन्न समयों एवं ऋतुओं में पवित्र एवं धार्मिक रीति से प्रयोग किया जाना चाहिए।[ञ]

__क.__ प्रेरितों के काम 15:21; प्रकाशितवाक्य 1:3. __ख.__ 2 तीमुथियुस 4:2. __ग.__ यशायाह 66:2; मत्ती 13:19; प्रेरितों के काम 10:33; इब्रानियों 4:2; याकूब 1:22. __घ.__ इफिसियों 5:19; कुलुस्सियों 3:16; याकूब 5:13. __ङ.__ मत्ती 28:19; प्रेरितों के काम 2:42; 1 कुरिन्थियों 11:23 – 29. __च.__ व्यवस्थाविवरण 6:13 के साथ नहेम्याह 10:29. __छ.__ यशायाह 19:21 के साथ सभोपदेशक 5:4 – 5. __ज.__ एस्तेर 4:16; योएल 2:12; मत्ती 9:15; 1 कुरिन्थियों 7:5. __झ.__ एस्तेर 9:22; सम्पूर्ण भजन संहिता 107. __ञ.__ इब्रानियों 12:28.

6. प्रार्थना या मसीही आराधना का कोई भी अन्य भाग, अब सुसमाचार के तहत होने के कारण, किसी भी स्थान में जहाँ यह की जाती है, उससे न तो बंधा हुआ है, और न ही उस स्थान के कारण अधिक स्वीकार्य होता है:[क] परन्तु परमेश्वर की आराधना हर स्थान में[ख] आत्मा एवं सच्चाई से की जानी चाहिए;[ग] जैसे कि निजी परिवारों[घ] में प्रतिदिन,[ङ] और गुप्त रूप से प्रत्येक व्यक्ति द्वारा स्वयं से,[च] वैसे ही सार्वजनिक सभाओं में अधिक गम्भीरता के साथ की जानी चाहिए, जिसे लापरवाही से या जानबूझकर उपेक्षित या त्यागना नहीं चाहिए, जब परमेश्वर, अपने वचन या ईश्वरीय प्रबन्धन के द्वारा आराधना करने के लिए बुलाता है।[छ]

__क.__ यूहन्ना 4:21. __ख.__ मलाकी 1:11; 1 तीमुथियुस 2:8. __ग.__ यूहन्ना 4:23 – 24. __घ.__ व्यवस्थाविवरण 6:6 – 7; 2 शमूएल 6:18, 20; अय्युब 1:5; यिर्मयाह 10:25; प्रेरितों के काम 10:2; 1 पतरस 3:7. __ङ.__ मत्ती 6:11. __च.__ मत्ती 6:6; इफिसियों 6:18. __छ.__ यशायाह 56:6 – 7; नीतिवचन 1:20 – 21, 24; 8:34; लूका 4:16; प्रेरितों के काम 2:42; 13:42; इब्रानियों 10:25.

7. जैसा कि प्रकृति के नियम के अनुसार है कि, सामान्य रूप से, परमेश्वर की आराधना के लिए समय का एक निश्चित अनुपात निर्धारित किया जाना चाहिए; इसलिए, अपने वचन में, एक सकारात्मक, नैतिक और शाश्वत आज्ञा के द्वारा, सभी युगों में सभी मनुष्यों को बाँधते हुए, उसने विशेष रूप से सात दिन में से एक दिन को सब्त के लिए नियुक्त किया है, जिसे उसके लिए पवित्र माना जाना चाहिए:[क] जो कि सृष्टि की उत्पत्ति से ख्रीष्ट के पुनरुत्थान तक, सप्ताह का अन्तिम दिन था; और ख्रीष्ट के पुनरुत्थान से, सप्ताह के पहले दिन में बदल दिया गया,[ख] जिसे पवित्रशास्त्र में प्रभु का दिन कहा जाता है,[ग] और जिसे संसार के अन्त तक मसीही सब्त के रूप में जारी रखा जाना है।[घ]

क. *निर्गमन 20:8, 10 – 11; यशायाह 56:2, 4, 6 – 7.* ***ख.*** *उत्पत्ति 2:2 – 3; प्रेरितों के काम 20:7; 1 कुरिन्थियों 16:1 – 2.* ***ग.*** *प्रकाशितवाक्य 1:10.* ***घ.*** *निर्गमन 20:8, 10 के साथ मत्ती 5:17 – 18.*

8. इस सब्त को तब प्रभु के लिए पवित्र माना जाता है, जब मनुष्य, अपने हृदयों को उचित रूप से तैयार कर, और अपने सामान्य कार्यों को पहले से व्यवस्थित करने के पश्चात, अपने सांसारिक कार्यों एवं मनोरंजन के विषय में, न केवल अपने कार्यों, वचनों, एवं विचारों से एक पूरे दिन का पवित्र विश्राम लेते हैं;[क] बल्कि साथ में वे अपना सम्पूर्ण समय प्रभु की आराधना के सार्वजनिक एवं निजी कार्यों, और आवश्यकता एवं दया के कर्तव्यों में व्यतीत करते हैं।[ख]

क. *निर्गमन 20:8; 16:23, 25 – 26, 29 – 30; 31:15 – 17; यशायाह 58:13; नहेम्याह 13:15 – 22.* ***ख.*** *यशायाह 58:13; मत्ती 12:1 – 13.*

अध्याय 22. वैध शपथ एवं व्रत लेने के विषय में

1. वैध शपथ मसीही धार्मिक आराधना का एक भाग है,[क] जिसमें उचित समय पर, शपथ लेने वाला व्यक्ति जो कुछ वह कहता है या प्रतिज्ञा करता है, उसके लिए गवाह बनने हेतु; और जो वह शपथ लेता है उसके सत्य या

असत्य के अनुसार उसका न्याय करने के लिए,[ख] गम्भीरता से परमेश्वर का आह्वान करता है।

क. व्यवस्थाविवरण 10:20. ख. निर्गमन 20:7; लैव्यव्यवस्था 19:12; 2 इतिहास 2:22 – 23; 2 इतिहास 1:23.

2. केवल परमेश्वर का नाम ही वह है जिसके द्वारा मनुष्यों को शपथ लेनी चाहिए, और उसमें उसका उपयोग पूरे पवित्र भय और श्रद्धा के साथ किया जाना चाहिए;[क] इसलिए उस महिमामय एवं भय-योग्य नाम के द्वारा व्यर्थ या दुस्साहसपूर्वक शपथ लेना, या किसी अन्य वस्तु के द्वारा शपथ लेना, पाप है, और इससे घृणा की जानी चाहिए।[ख] फिर भी, महत्वपूर्ण एवं उचित समय के मामलों में, नए नियम के तहत, साथ ही पुराने नियम के तहत, शपथ को परमेश्वर के वचन के द्वारा न्यायसंगत ठहराया गया है,[ग] वैसे ही कानूनी प्राधिकरण द्वारा ठहराए गए मामलों में वैध शपथ ली जानी चाहिए।[घ]

क. व्यवस्थाविवरण 6:13. ख. निर्गमन 20:7; यिर्मयाह 5:7; मत्ती 5:34, 37; याकूब 5:12. ग. यशायाह 65:16; 2 कुरिन्थियों 1:23; इब्रानियों 6:16. घ. 1 राजा 8:31; एज्रा 10:25; नहेम्याह 13:25.

3. जो भी व्यक्ति शपथ लेता है, उसे उस अत्यंत गम्भीर कार्य की गम्भीरता पर उचित विचार करना चाहिए, और उसमें केवल उसी बात का प्रतिज्ञान करना चाहिए जिसके विषय में उसे पूर्ण विश्वास हो कि वह सत्य है।[क] न ही कोई मनुष्य स्वयं को किसी भी बात के लिए शपथ से बांध सकता है, बल्कि केवल उसी बात के लिए जो भली एवं न्यायपूर्ण है, और जिसके लिए वह ऐसा होने हेतु विश्वास करता है, और जिसको करने के लिए वह सक्षम एवं संकल्पित है।[ख] फिर भी, किसी भी ऐसी बात की शपथ से इनकार करना पाप है, जो भली एवं न्यायपूर्ण है, और जिसे कानूनी प्राधिकरण द्वारा ठहराया गया है।[ग]

क. *निर्गमन 20:7; यिर्मयाह 4:2.* ***ख.*** *उत्पत्ति 24:2 – 3, 5 – 6, 8 – 9.* ***ग.*** *निर्गमन 22:7 – 11; गिनती 5:19, 21; नहेम्याह 5:12.*

4. शपथ को शब्दों के स्पष्ट एवं सामान्य अर्थ में लेनी चाहिए, बिना किसी संदिग्ध अर्थ या मानसिक आरक्षण के।[क] यह पाप करने के लिए बाध्य नहीं कर सकती है; परन्तु किसी भी ऐसी बात में जो पापपूर्ण नहीं है, यह उसका पालन करने के लिए बाध्य करती है, भले ही इससे व्यक्ति को स्वयं की हानि हो:[ख] न ही इसका उल्लंघन किया जाना चाहिए, भले ही इसे विधर्मियों या अविश्वासियों के साथ लिया गया है।[ग]

क. *भजन संहिता 24:4; यिर्मयाह 4:2.* ***ख.*** *1 शमूएल 25:22, 32 – 34; भजन संहिता 15:4.* ***ग.*** *यहेजकेल 17:16, 18 – 19; यहोशू 9:18 – 19 के साथ 2 शमूएल 21:1.*

5. व्रत, एक शपथ-पत्र के समान प्रकृति का होता है, और इसे भी उसी प्रकार की धार्मिक सावधानी के साथ किया जाना चाहिए, और उसी प्रकार की निष्ठा के साथ इसका पालन किया जाना चाहिए।[क]

क. *यशायाह 19:21; भजन संहिता 61:8; 66:13 – 14; सभोपदेशक 5:4 – 6.*

6. यह किसी प्राणी के लिए नहीं, परन्तु केवल परमेश्वर के लिए किया जाना चाहिए:[क] और ताकि इसे स्वीकार किया जा सके, इसे स्वेच्छा से, विश्वास और कर्तव्य के विवेक से, प्राप्त दया के लिए कृतज्ञतापूर्ण रीति से, या जो हम चाहते हैं, उसे प्राप्त करने के लिए किया जाना चाहिए; जिसके द्वारा हम अपने आप को आवश्यक कर्तव्यों, या अन्य बातों के लिए अधिक दृढ़ता से बाँधते हैं, जहाँ तक और जब तक वे उपयुक्त रूप से इसके लिए प्रेरित हो सकते हैं।[ख]

क. *भजन संहिता 76:11; यिर्मयाह 44:25 – 26.* ***ख.*** *उत्पत्ति 28:20 – 22; व्यवस्थाविवरण 23:21, 23; 1 शमूएल 1:11; भजन संहिता 50:14; 66:13 – 14; 132:2 – 5.*

7. कोई भी मनुष्य परमेश्वर के वचन में निषिद्ध किसी भी बात को करने के लिए व्रत नहीं ले सकता है, या जो बात वचन में निर्देशित किसी कर्तव्य में बाधा डालती है, या जो उसकी अपनी शक्ति में नहीं है, और जिसको करने के लिए उसे परमेश्वर की ओर से न तो कोई प्रतिज्ञा या योग्यता मिली है।[क] इस सम्बन्ध में, निरन्तर अकेले जीवन, स्वयं स्वीकार की गई गरीबी, और नियमित आज्ञाकारिता के विषय में पोप की मठवासी शपथ है, जो कि उच्चतर सिद्धता के स्तर की होने से इतनी दूर हैं, कि वे अंधविश्वास बातें एवं पापपूर्ण जाल हैं, जिनमें कोई भी मसीही व्यक्ति स्वयं को फंसा नहीं सकता है।[ख]

क. *गिनती 30:5, 8, 12 – 13; मरकुस 6:26; प्रेरितों के काम 23:12, 14.* ***ख.*** *मत्ती 19:11 – 12; 1 कुरिन्थियों 7:2, 9, 23; इफिसियों 4:28; 1 पतरस 4:2.*

अध्याय 23. नागरिक मजिस्ट्रेट (न्यायाधीश) के विषय में

1. परमेश्वर ने, जो समस्त संसार का सर्वोच्च प्रभु और राजा है, अपनी स्वयं की महिमा एवं सार्वजनिक भलाई के लिए अपने अधीन में, लोगों के ऊपर नागरिक मजिस्ट्रेटों को नियुक्त किया है, और इस उद्देश्य के लिए उसने उन्हें तलवार की शक्ति से सुसज्जित किया है, ताकि जो भले लोग हैं उनकी वे रक्षा और उन्हें प्रोत्साहित करें, और जो बुरा करते हैं उन्हें दण्ड दें।[क]

क. *रोमियों 13:1 – 4; 1 पतरस 2:13 – 14.*

2. मसीही लोगों के लिए यह वैध है कि वे बुलाए जाने पर मजिस्ट्रेट का पद स्वीकार करें एवं उसका कार्यपालन करें;[क] जिसके निष्पादन में, उन्हें प्रत्येक राष्ट्र के हितकारी कानूनों के अनुसार, विशेष रूप से धर्मपरायणता, न्याय, एवं शान्ति बनाए रखनी चाहिए,[ख] अतः, इस उद्देश्य के लिए, वे अब नए नियम के तहत, उचित एवं आवश्यक समय पर कानूनी रूप से युद्ध लड़ सकते हैं।[ग]

क. *नीतिवचन 8:15 – 16; रोमियों 13:1 – 2, 4.* ***ख.*** *2 शमूएल 23:3; भजन संहिता 2:10 –*

12; 82:3 – 4; 1 तीमुथियुस 2:2; 1 पतरस 2:13. ***ग.*** *मत्ती 8:9 – 10; लूका 3:14; प्रेरितों के काम 10:1 – 2; रोमियों 13:4; प्रकाशितवाक्य 17:14, 16.*

3. नागरिक मजिस्ट्रेट, वचन एवं मसीही संस्कारों के प्रशासन; या स्वर्ग के राज्य की कुंजियों के अधिकार को स्वयं अपने ऊपर नहीं ले सकता है:[क] फिर भी उसके पास अधिकार है, और यह उसका कर्तव्य है, कि वह व्यवस्था को बनाए रखे, ताकि कलीसिया में एकता और शान्ति बनी रहे, ताकि परमेश्वर का सत्य पवित्र एवं सम्पूर्ण बना रहे; ताकि सभी ईश-निन्दा और विधर्मी शिक्षा का दमन किया जाए; आराधना और अनुशासन में सभी भ्रष्टता एवं दुरुपयोग को रोका जाए या सुधारा जाए; और परमेश्वर के सभी अध्यादेशों को विधिवत रूप से तय किया जाए, संचालित किया जाए और उनका पालन किया जाए।[ख] इसके बेहतर प्रभाव के लिए, उसके पास धर्म-सभाओं को बुलाने, उनमें उपस्थित रहने का अधिकार है, और यह सुनिश्चित करने का अधिकार है कि उनमें जो कुछ भी सम्पादित होता है वह परमेश्वर की इच्छा के अनुसार हो।[ग]

क. *2 इतिहास 26:18.* ***ख.*** *यशायाह 49:23.* ***ग.*** *2 इतिहास 19:8.*

4. लोगों का यह कर्तव्य है कि वे मजिस्ट्रेटों के लिए प्रार्थना करें,[क] उनके व्यक्तित्व का सम्मान करें,[ख] उन्हें कर एवं अन्य शुल्क अदा करें,[ग] उनके वैध आदेशों का पालन करें और विवेक के कारण उनके अधिकार के अधीन रहें।[घ] मसीही धर्म में अविश्वास या मतभेद मजिस्ट्रेट के न्यायपूर्ण एवं कानूनी अधिकार को निरर्थक नहीं बनाता है, न ही यह लोगों को उनके प्रति उचित आज्ञाकारिता से मुक्त करता है:[ङ] जिससे पादरी वर्ग के लोगों को छूट प्राप्त नहीं है;[च] यहाँ तक कि पोप का भी उनके प्रभुत्व-क्षेत्र में, या उनके अधीन लोगों में से किसी पर भी कोई शक्ति या अधिकार-क्षेत्र बिल्कुल भी नहीं है; और न ही उनके अधिकार-क्षेत्र या जीवन से उन्हें वंचित करने का अधिकार है, यदि वह उन्हें विधर्मी, या किसी भी अन्य बहाने से दोषी ठहराता है।[छ]

क. 1 तीमुथियुस 2:1 – 2. ख. 1 पतरस 2:17. ग. रोमियों 13:6 – 7. घ. रोमियों 13:5; तीतुस 1:3. ङ. 1 पतरस 2:13 – 14, 16. च. 1 राजा 2:35; प्रेरितों के काम 25:9 – 11; रोमियों 13:1; 2 पतरस 2:1, 10 – 11; यहूदा 1:8 – 11. छ. 2 तीमुथियुस 2:4; प्रकाशितवाक्य 13:15 – 17.

अध्याय 24. विवाह और तलाक के विषय में

1. विवाह एक पुरुष और एक स्त्री के बीच होना चाहिए: किसी भी पुरुष के लिए एक से अधिक पत्नियाँ रखना वैध नहीं है, और न ही किसी स्त्री के लिए एक ही समय में एक से अधिक पति रखना वैध है।[क]

क. उत्पत्ति 2:24; नीतिवचन 2:17; मत्ती 19:5 – 6.

2. विवाह को, पति और पत्नी की पारस्परिक सहायता के लिए;[क] वैध सन्तान द्वारा मानवजाति की वृद्धि के लिए, और पवित्र वंश द्वारा कलीसिया की वृद्धि के लिए;[ख] और अपवित्रता को रोकने के लिए नियुक्त किया गया था।[ग]

क. उत्पत्ति 2:18. ख. मलाकी 2:15. ग. 1 कुरिन्थियों 7:2, 9.

3. सभी प्रकार के ऐसे लोगों के लिए विवाह करना वैध है जो विवेक से अपनी सहमति देने में सक्षम हैं।[क] फिर भी, मसीही लोगों का कर्तव्य है कि वे केवल प्रभु में विवाह करें।[ख] और इसलिए, ऐसे लोग जो सच्चे रिफॉर्म्ड मसीही विश्वास को मानते हैं, उन्हें अविश्वासियों, पोप को मानने वालों से, या अन्य मूर्तिपूजकों के साथ विवाह नहीं करना चाहिए: न ही जो लोग विश्वासी हैं, उन्हें उन लोगों के साथ विवाह करके असमान जूए में बंधना चाहिए, जो अपने जीवन में कुख्यात रूप से दुष्ट हैं, या विधर्मी शिक्षा को मानते हैं।[ग]

क. उत्पत्ति 24:57 – 58; 1 कुरिन्थियों 7:36 – 38; इब्रानियों 13:4; 1 तीमुथियुस 4:3. ख. 1 कुरिन्थियों 7:39. ग. उत्पत्ति 34:14; निर्गमन 34:16; व्यवस्थाविवरण 7:3 – 4; 1 राजा 11:4; नहेम्याह 13:25 – 27; मलाकी 2:11 – 12; 2 कुरिन्थियों 6:14.

4. विवाह को पवित्रशास्त्र में निषिद्ध रक्त-सम्बन्धी या आत्मीयता की सीमाओं के भीतर नहीं होना चाहिए;[क] और न ही ऐसे किसी भी अनाचारपूर्ण विवाह को मनुष्य के कानून या पक्षों की सहमति से वैध बनाया जा सकता है, जिससे कि ये व्यक्ति पति व पत्नी के रूप में एक साथ रह सकें।[ख] जिस प्रकार पुरुष अपने स्वयं के रक्त के निकट कुटुम्बी से विवाह नहीं कर सकता, वैसे ही वह अपनी पत्नी के किसी भी कुटुम्बी से विवाह नहीं कर सकता, जो उसके रक्त के समान निकट है, और न ही जैसे स्त्री अपने परिवार के किसी भी कुटुम्बी से विवाह नहीं कर सकती है, वैसे ही वह अपने पति के किसी भी ऐसे कुटुम्बी से विवाह नहीं कर सकती है, जो उसके रक्त के समान निकट है।[ग]

क. *सम्पूर्ण लैव्यव्यवस्था 18; आमोस 2:7; 1 कुरिन्थियों 5:1.* ***ख.*** *लैव्यव्यवस्था 18:24 – 28; मरकुस 6:18.* ***ग.*** *लैव्यव्यवस्था 20:19 – 21.*

5. किसी भी अनुबंध के पश्चात् किया गया व्यभिचार या यौन अपराध, विवाह से पहले पता चल जाने पर, निर्दोष पक्ष को उस अनुबंध को समाप्त करने का उचित मौका प्रदान करता है।[क] विवाह के पश्चात् व्यभिचार के मामले में, निर्दोष पक्ष के लिए तलाक के लिए मुकदमा दायर करना,[ख] और तलाक के पश्चात् दूसरा विवाह करना वैध है, मानो जैसे कि अपराधी पक्ष मर चुका हो।[ग]

क. *मत्ती 1:18 – 20.* ***ख.*** *मत्ती 5:31 – 32.* ***ग.*** *मत्ती 19:9; रोमियों 7:2 – 3.*

6. यद्यपि मनुष्य की भ्रष्टता इतनी अधिक है कि वह वाद-विवाद करने के लिए प्रवृत्त होता है, और उन लोगों को अनावश्यक रूप से अलग कर देता है जिन्हें परमेश्वर ने विवाह में जोड़ा है; फिर भी केवल व्यभिचार, या ऐसा जानबूझकर किया गया परित्याग, जिसका किसी भी रीति से कलीसिया या नागरिक न्यायाधीश द्वारा समाधान नहीं किया जा सकता है, तो यह विवाह के बन्धन को तोड़ने के लिए पर्याप्त कारण है;[क] जिसमें कानूनी

प्रक्रिया को सार्वजनिक एवं व्यवस्थित तरीके को अपनाया जाना चाहिए ;तथा इसमें सम्मिलित व्यक्तियों को, उनके स्वयं के मामले में, उनकी अपनी इच्छा और विवेक पर नहीं छोड़ा जाना चाहिए।[ख]

क. *मत्ती 19:6, 8 – 9; 1 कुरिन्थियों 7:15. ख. व्यवस्थाविवरण 24:1 – 4.*

अध्याय 25. कलीसिया के विषय में

1. सार्वभौमिक या विश्वव्यापी कलीसिया, जो कि अदृश्य है, चुने हुए लोगों की सम्पूर्ण संख्या से मिलकर बनी है, जो ख्रीष्ट इसके सिर (प्रधान) के तहत, एकत्रित किए गए है, एकत्रित किए जा रहे हैं, या एकत्रित किए जाएंगे; और यह उसकी दुल्हन, उसकी देह है, जो सब में सब कुछ पूर्ण करता है।[क]

क. *इफिसियों 1:10, 22 – 23; इफिसियों 5:23, 27, 32; कुलुस्सियों 1:18.*

2. दृश्यमान कलीसिया भी, जो सुसमाचार के तहत सार्वभौमिक या विश्वव्यापी (केवल एक राष्ट्र तक सीमित नहीं है जैसे कि पहले व्यवस्था के तहत थी) संसार भर में, उन सभी लोगों से,[क] और उनके बच्चों से,[ख] मिलकर बनी है, जो सच्चे मसीही विश्वास को मानते हैं; और यह प्रभु यीशु ख्रीष्ट का राज्य है,[ग] परमेश्वर की घर और परिवार है,[घ] जिसके बाहर उद्धार की कोई सामान्य सम्भावना नहीं है।[ङ]

क. *भजन संहिता 2:8; रोमियों 15:9 – 12; 1 कुरिन्थियों 1:2; 12:12 – 13; प्रकाशितवाक्य 7:9.* ***ख.*** *उत्पत्ति 3:15,; 17:7; यहेजकेल 16:20 – 21; प्रेरितों के काम 2:39; रोमियों 11:16; 1 कुरिन्थियों 7:14.* ***ग.*** *यशायाह 9:7; मत्ती 13:47.* ***घ.*** *इफिसियों 2:19; 3:15.* ***ङ.*** *प्रेरितों के काम 2:47.*

3. इस विश्वव्यापी दृश्यमान कलीसिया को ख्रीष्ट ने परमेश्वर की सेवकाई, वचन, एवं अध्यादेश दिए हैं, ताकि इस जीवन में, संसार के अन्त तक संतों को एकत्रित एवं सिद्ध किया जाए: और वह ऐसा अपनी उपस्थिति

और आत्मा के द्वारा, अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार, उन्हें इसके लिए प्रभावशाली बनाता है।[क]

क. यशायाह 59:21; मत्ती 28:19 – 20; 1 कुरिन्थियों 12:28; इफिसियों 4:11 – 13.

4. यह विश्वव्यापी कलीसिया कभी अधिक, और कभी कम दृश्यमान रही है।[क] और विशिष्ट कलीसियाएँ, जो इसके सदस्य हैं, वे अधिक या कम पवित्र है, जो सुसमाचार के सिद्धांत के पढ़ाए जाने और अपनाए जाने, अध्यादेशों के प्रशासन के अनुसार है, और उनमें की जाने वाली सार्वजनिक आराधना अधिक या कम पवित्र है।[ख]

क. रोमियों 11:3 – 4; प्रकाशितवाक्य 12:6, 14. ख. 1 कुरिन्थियों 5:6 – 7; सम्पूर्ण प्रकाशितवाक्य 2 – 3.

5. स्वर्ग के नीचे सबसे शुद्ध कलीसियाएँ मिश्रण एवं त्रुटि दोनों के अधीन हैं;[क] और कुछ तो इतने पतित हैं जैसे कि वे ख्रीष्ट की कलीसिया नहीं, बल्कि शैतान के आराधनालय बन गए हैं।[ख] फिर भी, पृथ्वी पर हमेशा एक कलीसिया होगी जो परमेश्वर की इच्छा के अनुसार उसकी आराधना करेगी।[ग]

क. मत्ती 13:24 – 30, 47; 1 कुरिन्थियों 13:12; सम्पूर्ण प्रकाशितवाक्य 2 – 3. ख. रोमियों 11:18 – 22; प्रकाशितवाक्य 18:2. ग. भजन संहिता 72:17; 102:28; मत्ती 16:18; 28:19 – 20.

6. प्रभु यीशु ख्रीष्ट के अतिरिक्त कलीसिया कोई सिर (प्रधान) नहीं है:[क] और न ही रोम का पोप किसी भी मायने में इसका मुखिया हो सकता है; बल्कि वह ख्रीष्ट विरोधी, पाप का पुरुष और विनाश का पुत्र है, जो ख्रीष्ट और हर एक से जो ईश्वर या पूज्य कहलाता है, उसके विरुद्ध स्वयं को बड़ा ठहराता है।[ख]

क. इफिसियों 1:22; कुलुस्सियों 1:18. ख. मत्ती 23:8 – 10; 2 थिस्सलुनीकियों 2:3 – 4, 8 – 9; प्रकाशितवाक्य 13:6.

अध्याय 26. संतों की संगति के विषय में

1. सभी संत जो अपने सिर (प्रधान) यीशु ख्रीष्ट के साथ उसके आत्मा के द्वारा और विश्वास के द्वारा जुड़े हुए हैं, उसके अनुग्रहों, दुःखों, मृत्यु, पुनरुत्थान, और महिमा में उसके साथ संगति रखते हैं:[क] और प्रेम में एक दूसरे के साथ जुड़े होने के कारण, वे एक दूसरे के वरदानों एवं अनुग्रहों में सहभागिता रखते हैं,[ख] और वे उन सार्वजनिक एवं निजी कर्तव्यों का पालन करने के लिए बाध्य हैं, जो उनके आन्तरिक एवं बाहरी मनुष्यत्व दोनों में, पारस्परिक भलाई के लिए अनुकूल हैं।[ग]

क. यूहन्ना 1:16; रोमियों 6:5 – 6; इफिसियों 2:5 – 6; 3:16 – 19; फिलिप्पियों 3:10; 2 तीमुथियुस 2:12; 1 यूहन्ना 1:3. ख. 1 कुरिन्थियों 3:21 – 23; 12:7; इफिसियों 4:15 – 16; कुलुस्सियों 2:19. ग. रोमियों 1:11 – 12, 14; गलातियों 6:10; 1 थिस्सलुनीकियों 5:11, 14; 1 यूहन्ना 3:16 – 18.

2. संत लोग, अपने दृढ़-अंगीकार के द्वारा, परमेश्वर की आराधना में पवित्र सहभागिता एवं संगति बनाए रखने, और ऐसी अन्य आत्मिक सेवाओं को करने के लिए के लिए बंधे हुए हैं, जो उनकी पारस्परिक आत्मिक उन्नति की ओर प्रवृत्त हैं;[क] साथ में अपनी कई योग्यताओं एवं आवश्यकताओं के अनुसार, सांसारिक बातों में भी एक दूसरे की सहायता करने के लिए बंधे हुए हैं। यह संगति, जैसा कि परमेश्वर मौके प्रदान करता है, उन सभी लोगों तक विस्तारित की जानी चाहिए, जो प्रभु यीशु के नाम को पुकारते हैं।[ख]

क. यशायाह 2:3; प्रेरितों के काम 2:42, 46; 1 कुरिन्थियों 11:20; इब्रानियों 10:24 – 25. ख. प्रेरितों के काम 2:44 – 45; 11:29 – 30; सम्पूर्ण 2 कुरिन्थियों 8 – 9; 1 यूहन्ना 3:17.

3. यह संगति, जो कि संतों की ख्रीष्ट के साथ है, उन्हें किसी भी रीति से उसके परमेश्वरत्व के तत्व का भागी नहीं बनाती है, ना ही उन्हें किसी भी रीति से ख्रीष्ट के बराबर बनाती है: इनमें से किसी की भी पुष्टि करना

अपवित्र एवं निन्दात्मक है।[क] और संतों के रूप में एक दूसरे के साथ उनकी संगति, प्रत्येक व्यक्ति के पास उसकी वस्तुओं एवं सम्पत्तियों में, जो उसकी उपाधि या मर्यादा है, उसको न तो छीनती है और ना ही उसका उल्लंघन करती है।[ख]

> ***क.*** *भजन संहिता 45:7 के साथ इब्रानियों 1:8 – 9; यशायाह 42:8; 1 कुरिन्थियों 8:6; कुलुस्सियों 1:18 – 19; 1 तीमुथियुस 6:15 – 16.* ***ख.*** *निर्गमन 20:15; प्रेरितों के काम 5:4; इफिसियों 4:28.*

अध्याय 27. मसीही संस्कारों के विषय में

1. मसीही संस्कार अनुग्रह की वाचा के पवित्र चिह्न और छाप हैं,[क] जिन्हें परमेश्वर ने स्वयं अपने द्वारा,[ख] ख्रीष्ट और उसके लाभों को दिखाने के लिए, तथा उसमें हमारी रुचि की पुष्टि करने के लिए:[ग] साथ में कलीसिया से सम्बन्धित लोगों और शेष संसार के लोगों के बीच एक स्पष्ट अन्तर स्थापित करने के लिए;[घ] और ख्रीष्ट में उन लोगों को परमेश्वर की सेवा में, उसके वचन के अनुसार, गम्भीरता से संलग्न करने के लिए स्थापित किए हैं।[ङ]

> ***क.*** *उत्पत्ति 17:7, 10; रोमियों 4:11.* ***ख.*** *मत्ती 28:19; 1 कुरिन्थियों 11:23.* ***ग.*** *1 कुरिन्थियों 10:16; 11:25 – 26; गलातियों 3:27.* ***घ.*** *उत्पत्ति 34:14; निर्गमन 12:48; रोमियों 15:8.* ***ङ.*** *रोमियों 6:3 – 4; 1 कुरिन्थियों 10:16, 21.*

2. प्रत्येक मसीही संस्कार में, चिह्न और चिह्नित की गई वस्तु के बीच एक आध्यात्मिक सम्बन्ध या सांस्कारिक सम्बन्ध होता है; जिसके कारण एक संस्कार के नाम और प्रभाव दूसरे संस्कार के लिए प्रयुक्त किए जाते हैं।[क]

> ***क.*** *उत्पत्ति 17:10; मत्ती 26:27 – 28; तीतुस 3:5.*

3. वह अनुग्रह, जो मसीही संस्कारों में या उनके द्वारा दर्शाया जाता है, यदि सही रीति से उपयोग किया जाए, तो उनमें किसी शक्ति द्वारा प्रदान नहीं

किया जाता है; और ना ही किसी भी संस्कार की प्रभावकारिता उसे देने वाले की धर्मपरायणता या अभिप्राय पर निर्भर करती है,[क] परन्तु यह आत्मा के कार्य पर,[ख] और वचन के संस्थापन पर निर्भर करती है, जिसमें इसके उपयोग को अधिकृत करने वाली आज्ञा के साथ-साथ, योग्य प्राप्तकर्ताओं को लाभ पहुँचाने की प्रतिज्ञा भी सम्मिलित है।[ग]

क. *रोमियों 2:28 – 29; 1 पतरस 3:21.* ***ख.*** *मत्ती 3:11; 1 कुरिन्थियों 12:13.* ***ग.*** *मत्ती 26:27 – 28.*

4. सुसमाचार में हमारे प्रभु यीशु ख्रीष्ट द्वारा केवल दो संस्कार नियुक्त किए गए हैं, अर्थात, बपतिस्मा और प्रभु भोज: इनमें से किसी को भी किसी भी व्यक्ति द्वारा नहीं दिया जा सकता है, परन्तु केवल विधिपूर्वक अभिषिक्त, वचन के सेवक द्वारा दिया जा सकता है।[क]

क. *मत्ती 28:19 – 20; 19; 1 कुरिन्थियों 4:1; 11:20, 23; इब्रानियों 5:4.*

5. पुराने नियम के संस्कार, उनके द्वारा चिह्नित किए गए और दर्शाए गए आध्यात्मिक बातों के सम्बन्ध में, मूलतः नए नियम के संस्कारों के समान ही थे।[क]

क. *1 कुरिन्थियों 10:1 – 4.*

अध्याय 28. बपतिस्मा के विषय में

1. बपतिस्मा, यीशु ख्रीष्ट द्वारा नियुक्त,[क] नए नियम का एक मसीही संस्कार है, जो न केवल बपतिस्मा प्राप्त करने वाले व्यक्ति के दृश्यमान कलीसिया में औपचारिक प्रवेश के लिए है,[ख] बल्कि उसके लिए अनुग्रह की वाचा में होने,[ग] ख्रीष्ट में उसके अभ्यारोपित होने,[घ] नए जन्म का,[ङ] पापों की क्षमा का,[च] और यीशु ख्रीष्ट के माध्यम से, जीवन की नवीनता में चलने के लिए, उसके द्वारा स्वयं को परमेश्वर को सौंप दिए जाने हेतु उसके लिए चिह्न और

छाप है:[छ] यह मसीही संस्कार, स्वयं ख्रीष्ट की नियुक्ति के द्वारा, संसार के अन्त तक उसकी कलीसिया में जारी रहना है।[ज]

क. *मत्ती 28:19.* ***ख.*** *1 कुरिन्थियों 12:13.* ***ग.*** *रोमियों 4:11 के साथ कुलुस्सियों 2:11 – 12.* ***घ.*** *रोमियों 6:5; गलातियों 3:27.* ***ङ.*** *तीतुस 3:5.* ***च.*** *मरकुस 1:4.* ***छ.*** *रोमियों 6:3 – 4.* ***ज.*** *मत्ती 28:19 – 20.*

2. इस संस्कार में उपयोग किया जाने वाला बाहरी तत्व जल है, जिसके द्वारा व्यक्ति को पिता, और पुत्र और पवित्र आत्मा के नाम में, विधिपूर्वक बुलाए गए सुसमाचार के अभिषिक्त सेवक द्वारा, बपतिस्मा दिया जाना चाहिए।[क]

क. *मत्ती 3:11; 28:19 – 20; 1 यूहन्ना 1:33.*

3. व्यक्ति को जल में डुबाना आवश्यक नहीं है; बल्कि बपतिस्मा सही रीति से व्यक्ति पर जल उण्डेल कर या छिड़काव द्वारा दिया जाता है।[क]

क. *मरकुस 7:4; प्रेरितों के काम 2:41; 16:33; इब्रानियों 9:10, 19 – 22.*

4. न केवल उन लोगों को बपतिस्मा दिया जाना चाहिए जो वास्तव में ख्रीष्ट में विश्वास और आज्ञाकारिता को अंगीकार करते हैं,[क] बल्कि एक या दोनों विश्वासी माता-पिता के शिशुओं को भी बपतिस्मा दिया जाना चाहिए।[ख]

क. *मरकुस 16:15 – 16; प्रेरितों के काम 8:37 – 38.* ***ख.*** *उत्पत्ति 17:7, 9 के साथ गलातियों 3:9, 14 और कुलुस्सियों 2:11 – 12 और प्रेरितों के काम 2:38 – 39 और रोमियों 4:11 – 12; मत्ती 28:19; मरकुस 10:13 – 16; लूका 18:15; 1 कुरिन्थियों 7:14.*

5. यद्यपि इस अध्यादेश का तिरस्कार या उपेक्षा करना एक बहुत बड़ा पाप है,[क] फिर भी अनुग्रह और उद्धार इससे इतने अभिन्न रीति से जुड़े हुए नहीं हैं, कि इसके बिना कोई भी व्यक्ति नया जन्म या उद्धार नहीं पा सकता

है,[ख] या यह कि बपतिस्मा लेने वाले सभी लोग निस्संदेह नया जन्म प्राप्त लोग हैं।[ग]

__क.__ लूका 7:30 के साथ निर्गमन 4:24 – 26. __ख.__ प्रेरितों के काम 10:2, 4, 22, 31, 45, 47; रोमियों 4:11. __ग.__ प्रेरितों के काम 8:13, 23.

6. बपतिस्मा की प्रभावशीलता उस समय के क्षण से बंधी हुई नहीं है जिसमें इसे दिया जाता है;[क] फिर भी, इस अध्यादेश के सही उपयोग के द्वारा, न केवल प्रतिज्ञा किया हुआ अनुग्रह प्रदान किया जाता है, बल्कि परमेश्वर की स्वयं की इच्छा के मत के अनुसार, उसके नियुक्त समय में, उन लोगों के लिए (चाहे वे वयस्क हों या शिशु), वास्तव में पवित्र आत्मा के द्वारा दर्शाया एवं प्रदान किया जाता है, जिनके लिए वह अनुग्रह है।[ख]

__क.__ यूहन्ना 3:5, 8. __ख.__ प्रेरितों के काम 2:38, 41; गलातियों 3:27; इफिसियों 5:25 – 26; तीतुस 3:5.

7. किसी भी व्यक्ति को बपतिस्मा का संस्कार केवल एक बार ही दिया जाना चाहिए।[क]

__क.__ तीतुस 3:5.

अध्याय 29. प्रभु भोज के विषय में

1. हमारे प्रभु यीशु ने, जिस रात वह पकड़वाया गया, संसार के अन्त तक, अपनी कलीसिया में मनाए जाने के लिए, अपनी देह और लहू के संस्कार की स्थापना की, जिसे प्रभु भोज कहा जाता है; यह उसकी मृत्यु में उसके बलिदान की चिरस्थायी स्मरण के लिए, इसके द्वारा सच्चे विश्वासियों को दिए गए सभी लाभों पर मुहर लगाने के लिए, उसमें उनके आत्मिक पोषण एवं उन्नति के लिए, उनके द्वारा उसके प्रति सभी कर्तव्यों में उनकी भागीदारी के लिए और उसकी रहस्यमयी देह के सदस्य के रूप में, उसके

साथ, और एक दूसरे के साथ, उनकी संगति का बन्धन एवं प्रतिज्ञा बनने के लिए है।[क]

क. 1 कुरिन्थियों 10:16 – 17, 21; 11:23 – 26; 12:13.

2. इस मसीही संस्कार में ख्रीष्ट को उसके पिता को अर्पित नहीं किया जाता है, और ना ही जीवित या मृतक लोगों के पापों की क्षमा के लिए कोई वास्तविक बलिदान चढ़ाया जाता है,[क] परन्तु केवल एक ही बार, क्रूस पर, अपने आप को, उस एक बलिदान को चढ़ाने की यह केवल स्मृति है, और उसी के लिए परमेश्वर को सभी संभावित स्तुति का आत्मिक बलिदान है;[ख] जिससे कि मिस्सा (Mass) का पोप वाला बलिदान, जैसा कि वे इसे कहते हैं, ख्रीष्ट के एकमात्र बलिदान के लिए, जो उसके चुने हुए लोगों के सभी पापों के लिए एकमात्र प्रायश्चित है, सबसे अधिक घृणित अपमान है।[ग]

क. इब्रानियों 9:22, 25 – 26, 28. ख. मत्ती 26:26 – 27; 1 कुरिन्थियों 11:24 – 26. ग. इब्रानियों 7:23 – 24, 27; 10:11 – 12, 14, 18.

3. प्रभु यीशु ने, इस अध्यादेश में, अपने सेवकों को नियुक्त किया है कि लोगों को इसके संस्थापन के वचन की घोषणा करें, रोटी एवं दाखरस के तत्वों के लिए प्रार्थना करें, और उन्हें आशीषित करें, और इस प्रकार उन्हें सामान्य उपयोग से पवित्र उपयोग के लिए अलग करे और रोटी को लें और उसे तोड़ें, प्याले को लें, और (वे भी स्वयं उन्हें खाएं और पीएं) दोनों तत्वों को प्रभु भोज में भाग लेने वाले सदस्यों को दें;[क] परन्तु किसी भी ऐसे जन को न दें जो उस समय मण्डली में उपस्थित नहीं है।[ख]

क. मत्ती 26:26 – 28 और मरकुस 14:22 – 24 और लूका 22:19 – 20 के साथ 1 कुरिन्थियों 11:23 – 27. ख. प्रेरितों के काम 20:7; 1 कुरिन्थियों 11:20.

4. निजी रूप से मिस्सा (Mass) मनाना, या अकेले में किसी पुरोहित, या किसी अन्य व्यक्ति से इस संस्कार को ग्रहण करना;[क] इसी के साथ ही

लोगों को प्याला देने से इनकार करना;[ख] तत्वों की पूजा करना, उन्हें ऊपर उठाना, या आराधना के लिए उन्हें इधर-उधर ले जाना, तथा उन्हें किसी दिखावटी धार्मिक उपयोग के लिए संभाल कर रखना, ये सभी इस संस्कार की प्रकृति, एवं ख्रीष्ट के संस्थापन के विपरीत हैं।[ग]

क. *1 कुरिन्थियों 10:6.* ***ख.*** *मरकुस 4:23; 1 कुरिन्थियों 11:25 – 29.* ***ग.*** *मत्ती 15:9.*

5. इस मसीही संस्कार में भौतिक तत्व, जिन्हें ख्रीष्ट द्वारा निर्धारित उपयोगों के लिए विधिवत् रूप से अलग किया गया है, उसके क्रूस पर चढ़ाए जाने के साथ ऐसा सम्बन्ध रखते हैं, कि वास्तव में, यद्यपि सांस्कारिक रूप से ही, उन्हें कभी-कभी उन नामों से पुकारा जाता है जिनको वे चित्रित करते हैं, अर्थात, ख्रीष्ट की देह और लहू;[क] यद्यपि सार और प्रकृति में, वे अभी भी वास्तव में, रोटी और दाखरस ही हैं, जैसे कि वे पहले थे।[ख]

क. *मत्ती 26:26 – 28.* ***ख.*** *मत्ती 26:29; 1 कुरिन्थियों 11:26 – 28.*

6. वह सिद्धांत, जो पुरोहित के अभिषेक के द्वारा या किसी अन्य रीति से रोटी और दाखरस के तत्व को ख्रीष्ट की देह और लहू के तत्व में परिवर्तित करने (जिसे सामान्यतः तत्त्वांतरण (transubstantiation) कहा जाता है) का समर्थन करता है, वह न केवल पवित्रशास्त्र के लिए बल्कि सामान्य विवेक एवं तर्क के विरुद्ध है; यह संस्कार की प्रकृति को उलट देता है; और यह अनेक अंध-विश्वासों, हाँ, घोर मूर्तिपूजा का कारण रहा है।[क]

क. *लूका 24:6, 39; प्रेरितों के काम 3:21 के साथ 1 कुरिन्थियों 11:24 – 26.*

7. योग्य ग्रहणकर्ता, इस संस्कार के दृश्यमान तत्वों को बाहरी रूप से लेते हुए,[क] इसे विश्वास द्वारा, सच्चे रूप से, और वास्तव में, फिर भी शारीरिक और दैहिक रूप से नहीं, बल्कि आत्मिक रूप से, क्रूस पर चढ़ाए गए ख्रीष्ट और उसकी मृत्यु के सभी लाभों को प्राप्त करते हैं और उनसे पोषण प्राप्त करते हैं: तो फिर ख्रीष्ट की देह और उसका लहू, रोटी और दाखरस में,

उनके साथ, या उनके नीचे शारीरिक रूप से या दैहिक रूप से नहीं होता है; फिर भी जैसा कि वास्तव में, परन्तु आत्मिक रूप से, उस अध्यादेश में विश्वासियों के विश्वास के लिए उपस्थित होता है, जैसा कि तत्व स्वयं उनके बाहरी इंद्रियों के लिए होते हैं।[ख]

__क.__ 1 कुरिन्थियों 11:28. __ख.__ 1 कुरिन्थियों 10:16.

8. यद्यपि अज्ञानी एवं दुष्ट लोग इस संस्कार में भौतिक तत्वों को प्राप्त करते हैं, फिर भी वे इसके द्वारा चिह्नित वस्तु को प्राप्त नहीं करते हैं; परन्तु अपने अयोग्य रूप से इसमें भाग लेने से वे प्रभु की देह और लहू के दोषी हैं, जो उनके स्वयं के दण्ड का कारण है। इसलिए सभी अज्ञानी एवं दुष्ट लोग, क्योंकि वे ख्रीष्ट के साथ सहभागिता का आनन्द लेने के लिए अयोग्य हैं, इसलिए वे प्रभु की मेज़ के अयोग्य हैं, और जब तक वे ऐसे ही रहते हैं, ख्रीष्ट के विरुद्ध भयंकर पाप के कारण, इन पवित्र रहस्यों में भाग नहीं ले सकते हैं,[क] या इसमें प्रवेश नहीं पा सकते हैं।[ख]

__क.__ 1 कुरिन्थियों 11:27 – 29; 2 कुरिन्थियों 6:14 – 16. __ख.__ मत्ती 7:6; 1 कुरिन्थियों 5:6 – 7, 13; 2 थिस्सलुनीकियों 3:6, 14 – 15.

अध्याय 30. कलीसिया द्वारा निन्दा प्रस्तावों के विषय में

1. प्रभु यीशु ने, अपनी कलीसिया के राजा एवं सिर (प्रधान) होने के रूप में, उसमें कलीसिया के अधिकारियों के हाथों में एक सरकार नियुक्त की है, जो नागरिक मजिस्ट्रेट से भिन्न है।[क]

__क.__ यशायाह 9:6 – 7; मत्ती 28:18 – 20; प्रेरितों के काम 20:17, 28; 1 कुरिन्थियों 12:28; 1 थिस्सलुनीकियों 5:12; 1 तीमुथियुस 5:17; इब्रानियों 13:7, 17, 24.

2. इन अधिकारियों को स्वर्ग के राज्य की कुंजियाँ सौंपी गई हैं, जिसके परिणामस्वरूप उन्हें क्रमशः पापों को बनाए रखने और क्षमा करने, दोनों वचन एवं निन्दा-प्रस्ताव के द्वारा उस राज्य को पश्चाताप न करने वालों के

लिए बंद करने; और सुसमाचार की सेवकाई के द्वारा, और आवश्यकता अनुसार निन्दा-प्रस्ताव से मुक्ति देकर, पश्चाताप करने वाले पापियों के लिए उसे खोलने का अधिकार है।[क]

क. *मत्ती 16:19; 18:17 – 18; यूहन्ना 20:21 – 23; 2 कुरिन्थियों 2:6 – 8.*

3. कलीसिया के निन्दा-प्रस्ताव, अपराधी भाइयों को पुनः सुधारने और उन्हें पुनः प्राप्त करने; दूसरों को भी ऐसे ही अपराधों से रोकने; उस खमीर को दूर करने के लिए जो पूरे आटे को संक्रमित कर सकता है; ख्रीष्ट के सम्मान और सुसमाचार के पवित्र अंगीकार को सही साबित करने; और परमेश्वर के उस क्रोध को रोकने के लिए आवश्यक है, जो कलीसिया पर उचित रूप से पड़ सकता है, यदि वे कुख्यात और हठी अपराधियों द्वारा उसकी वाचा और उसकी मुहरों को अपवित्र होने देते हैं।[क]

क. *मत्ती 7:6; सम्पूर्ण 1 कुरिन्थियों 5; 1 कुरिन्थियों 11:27 – 34 के साथ यहूदा 1:23; 1 तीमुथियुस 1:20; 5:20.*

4. इन उद्देश्यों की बेहतर प्राप्ति के लिए, कलीसिया के अधिकारियों को व्यक्ति के अपराध एवं अवगुण की प्रकृति के अनुसार ताड़ना देने के द्वारा, कुछ समय के लिए प्रभु भोज के संस्कार से निलंबित करने के द्वारा, और कलीसिया से बहिष्कार करने के द्वारा आगे बढ़ना चाहिए।[क]

क. *मत्ती 18:17; 1 कुरिन्थियों 5:4 – 5, 13; 1 थिस्सलुनीकियों 5:12; 2 थिस्सलुनीकियों 3:6, 14 – 15; तीतुस 3:10.*

अध्याय 31. मसीही धर्म महासभाओं (Synods) एवं मसीही परिषदों (Councils) के विषय में

1. कलीसिया के बेहतर प्रशासन एवं आगे की आत्मिक उन्नति के लिए, ऐसी सभाओं का होना अवश्य हैं जिन्हें सामान्य तौर पर धर्म महासभा या धर्म परिषद कहा जाता है।[क]

क. प्रेरितों के काम 15:2, 4, 6.

2. चूंकि मजिस्ट्रेट विधिपूर्वक धर्म के मामलों में परामर्श एवं विचार-विमर्श करने के लिए पादरियों और अन्य योग्य व्यक्तियों की धर्मसभा बुला सकते हैं;[क] इसलिए, यदि मजिस्ट्रेट कलीसिया के स्पष्ट शत्रु हैं, तो ख्रीष्ट के सेवक लोग (पादरी), अपने पद के आधार पर, या वे, अन्य योग्य व्यक्तियों के साथ, अपनी कलीसियाओं से प्रतिनिधिमंडल लेकर, ऐसी सभाओं में एक साथ मिल सकते हैं।[ख]

क. यशायाह 49:23; 2 इतिहास 19:8 – 11; सम्पूर्ण 2 इतिहास 29 – 30; नीतिवचन 11:14; मत्ती 2:4 – 5; 1 तीमुथियुस 2:1 – 2. ख. प्रेरितों के काम 15:2, 4, 22 – 23, 25.

3. सेवा के रूप में, यह धर्म महासभाओं एवं धर्म-परिषदों का कार्य है कि वे विश्वास के विवादों, एवं विवेक के मामलों का निर्णय करें; परमेश्वर की सार्वजनिक आराधना, और उसकी कलीसिया के प्रशासन के विषय में बेहतर व्यवस्था बनाने के लिए नियमों एवं मार्गदर्शकों को निर्धारित करें; कुप्रशासन के मामलों में शिकायतों को प्राप्त करें, और अधिकारपूर्वक उनका निवारण करें: जो आदेश एवं निर्धारण, यदि परमेश्वर के वचन के अनुरूप हैं, तो न केवल वचन के साथ उनके अनुरूप होने के कारण, बल्कि उस अधिकार के लिए भी जिसके द्वारा उन्हें बनाया जाता है, परमेश्वर के अध्यादेश होने के रूप में, जो उसके वचन में ठहराए गए हैं, उन्हें श्रद्धा एवं समर्पण के साथ ग्रहण किया जाना चाहिए।[क]

क. मत्ती 18:17 – 20; प्रेरितों के काम 15:15, 19, 24, 27 – 31; 16:4.

4. प्रेरितों के समय से लेकर अब तक की सभी धर्म महासभाएँ या धर्म-परिषद, चाहे वे सामान्य हों या विशेष, गलत हो सकती हैं, और बहुतों ने गलती की है; इसलिए उन्हें विश्वास या जीवन व्यवहार का नियम नहीं बनाया जाना चाहिए, बल्कि दोनों में सहायता के रूप में उनका उपयोग किया जाना चाहिए।[क]

क. प्रेरितों के काम 17:11; 1 कुरिन्थियों 2:5; 2 कुरिन्थियों 1:24; इफिसियों 2:20.

5.धर्म महासभाओं एवं धर्म परिषदों को केवल उन्हीं मामलों का निपटारा या निष्कर्ष निकालना चाहिए जो कलीसिया से सम्बन्धित हैं: तथा उन्हें राष्ट्र से सम्बन्धित नागरिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए, जब तक कि असाधारण मामलों में विनम्र याचिका के माध्यम से, या नागरिक मजिस्ट्रेट द्वारा माँगे जाने पर, अंतःकरण की सन्तुष्टि के लिए, परामर्श के माध्यम से ऐसा न किया जाए।[क]

क. लूका 12:13 – 14; यूहन्ना 18:36.

अध्याय 32. मृत्यु के पश्चात् मनुष्यों अवस्था के विषय में और मृतकों के पुनरुत्थान के विषय में

1. मृत्यु के पश्चात्, मनुष्यों के शरीर मिट्टी में मिल जाते हैं, और सड़ जाते हैं;[क] परन्तु उनकी आत्माएँ (जो न तो मरती हैं और न ही सो जाती हैं), अमर अस्तित्व होने के कारण,[ख] परमेश्वर के पास लौट जाती हैं, जिसने उन्हें दिया था। धर्मी लोगों की आत्माएँ, फिर पवित्रता में सिद्ध बनाए जाने के कारण, सर्वोच्च स्वर्ग में ग्रहण किए जाते हैं, जहाँ वे अपने शरीरों के पूर्ण छुटकारे की प्रतीक्षा करते हुए, प्रकाश एवं महिमा में परमेश्वर के मुख को देखते हैं:[ग] और दुष्टों की आत्माएँ नरक में डाल दी जाती है, जहाँ वे न्याय के महान दिन तक के लिए, पीड़ा और घोर अन्धकार में लज्जाशील अवस्था में रहते हैं।[घ] अपने शरीरों से अलग की गई आत्माओं के लिए इन दो स्थानों के अलावा, पवित्रशास्त्र किसी और बात को नहीं मानता है।

***क.** उत्पत्ति 3:19; प्रेरितों के काम 13:36. **ख.** सभोपदेशक 12:7; लूका 23:43. **ग.** फिलिप्पियों 1:23 के साथ प्रेरितों के काम 3:21 और इफिसियों 4:10; 2 कुरिन्थियों 5:1, 6, 8; इब्रानियों 12:23. **घ.** लूका 16:23 – 24; प्रेरितों के काम 1:25; 1 पतरस 3:19; यहूदा 1:6 – 7.*

2. अन्तिम दिन पर, जो लोग जीवित पाए जाएंगे वे मरेंगे नहीं, परन्तु बदल जाएंगे;[क] और सभी मृतक उन्हीं शरीरों के साथ और कोई दूसरा नहीं, यद्यपि

भिन्न गुणों के साथ जिलाए जाएंगे, जो कि उनकी आत्माओं के साथ सदा के लिए मिल जाएंगे।[ख]

क. 1 कुरिन्थियों 15:51 – 52; 1 थिस्सलुनीकियों 4:17. ख. अय्यूब 19:26 – 27; 1 कुरिन्थियों 15:42 – 44.

3. दुष्टों के शरीर, ख्रीष्ट की सामर्थ्य से अनादर के लिए जिलाए जाएंगे; धर्मियों के शरीर, उसके आत्मा के द्वारा, आदर के लिए जिलाए जाएंगे, और स्वयं ख्रीष्ट के महिमामय शरीर के अनुरूप बनाए जाएँगे।[क]

क. यूहन्ना 5:28 – 29; प्रेरितों के काम 24:15; 1 कुरिन्थियों 15:42; फिलिप्पियों 3:21.

अध्याय 33. अन्तिम न्याय के विषय में

1. परमेश्वर ने एक दिन ठहराया है, जिसमें वह यीशु ख्रीष्ट के द्वारा धार्मिकता में जगत का न्याय करेगा,[क] जिसे पिता की ओर से सारी सामर्थ्य एवं न्याय दिया गया है।[ख] उस दिन में, न केवल धर्म-त्यागी व विश्वासघाती स्वर्गदूतों का न्याय किया जाएगा,[ग] बल्कि पृथ्वी पर रहने वाले सभी लोगों को भी ख्रीष्ट के न्यायाधिकरण के सामने उपस्थित होना पड़ेगा, ताकि वे अपने विचारों, शब्दों एवं कार्यों का लेखा-जोखा दें; और अपने शारीरिक जीवन में किए गए भले या बुरे कार्यों के अनुसार दण्ड प्राप्त करें।[घ]

क. प्रेरितों के काम 17:31. ख. यूहन्ना 5:22, 27. ग. 1 कुरिन्थियों 6:3; 2 पतरस 2:4; यहूदा 1:6. घ. सभोपदेशक 12:14; मत्ती 12:36 – 37; रोमियों 2:16; 14:10, 12; 2 कुरिन्थियों 5:10.

2. परमेश्वर द्वारा इस दिन को नियुक्त करने का उद्देश्य, चुने हुए लोगों के अनन्त उद्धार में अपनी दया की महिमा को प्रकट करना है;[क] और उन दुष्ट लोगों के नरक-दण्ड देने में अपने न्याय को प्रकट करना है, जो दुष्ट एवं अवज्ञाकारी है।[ख] क्योंकि तब धर्मी लोग अनन्त जीवन में प्रवेश करेंगे, और आनन्द एवं जीवन से उस परिपूर्णता को प्राप्त करेंगे, जो प्रभु की उपस्थिति से आएगा:[ग] परन्तु दुष्ट, जो परमेश्वर को नहीं जानते हैं, और यीशु ख्रीष्ट के

सुसमाचार को नहीं मानते हैं, उन्हें प्रभु की उपस्थिति से, और उसकी सामर्थ्य की महिमा से दूर, अनन्त पीड़ा में डाल दिया जाएगा, और अनन्त विनाश से दण्डित किया जाएगा।[घ]

क. *मत्ती 25:21; रोमियों 9:23.* ***ख.*** *रोमियों 2:5 – 6; 9:22; 2 थिस्सलुनीकियों 1:7 – 8.* ***ग.*** *मत्ती 25:31 – 34; प्रेरितों के काम 3:19; 2 थिस्सलुनीकियों 1:7.* ***घ.*** *मत्ती 25:41, 46; 2 थिस्सलुनीकियों 1:9.*

3. जैसे कि ख्रीष्ट चाहते हैं कि हम निश्चित रूप से आश्वस्त रहें कि न्याय का दिन अवश्य आएगा, ताकि सभी मनुष्य पाप से दूर रहें, और धर्मी लोगों को उनकी विपत्ति में अधिक सांत्वना मिले:[क] उसी रीति से वह चाहता है कि वह दिन मनुष्य के लिए अज्ञात रहे, ताकि वे सभी सांसारिक आश्रय को दूर कर सकें, और सदा जागते रहें, क्योंकि वे नहीं जानते हैं कि प्रभु किस समय आएगा; और कि वे सदा यह कहने के लिए तत्पर रहें, हे, प्रभु यीशु, शीघ्र आ। आमीन।[ख]

क. *लूका 21:27 – 28; रोमियों 8:23 – 25; 2 कुरिन्थियों 5:10 – 11; 2 थिस्सलुनीकियों 1:5 – 7; 2 पतरस 3:11, 14.* ***ख.*** *मत्ती 24:36, 42 – 44; मरकुस 13:35 – 37; लूका 12:35 – 36; प्रकाशितवाक्य 22:20.*

वेस्टमिन्स्टर विस्तृत मसीही धर्म-प्रश्नोत्तरी

प्रश्न 1: मनुष्य का सबसे प्रमुख एवं सर्वोच्च उद्देश्य क्या है?
उत्तर: मनुष्य का सबसे प्रमुख एवं सर्वोच्च उद्देश्य सदा सर्वदा के लिए परमेश्वर की महिमा करना, और उसमें पूर्ण रूप से आनन्दित रहना है।

रोमियों 11:36; 1 कुरिन्थियों 10:31; भजन संहिता 73:25 – 28; यूहन्ना 17:21 – 23.

प्रश्न 2: यह कैसे प्रतीत होता है कि कोई परमेश्वर है?
उत्तर: मनुष्य में प्रकृति की ज्ञान, और परमेश्वर के कार्य, स्पष्ट रूप से घोषणा करते हैं कि परमेश्वर है; परन्तु केवल उसका वचन एवं आत्मा ही, मनुष्य को उनके उद्धार हेतु, पर्याप्त रूप से और प्रभावशाली रूप से उसे प्रकट करते हैं।

रोमियों 1:19 – 20; भजन संहिता 19:1 – 3; प्रेरितों के काम 17:28; 1 कुरिन्थियों 2:9 – 10; 2 तीमुथियुस 3:15 – 17; यशायाह 59:21.

प्रश्न 3: परमेश्वर का वचन क्या है?
उत्तर: पुराने एवं नए नियम का पवित्रशास्त्र (बाइबल) परमेश्वर का वचन है, जो विश्वास एवं आज्ञाकारिता का एकमात्र नियम है।

2 तीमुथियुस 3:16; 2 पतरस 1:19 – 21; इफिसियों 2:20; प्रकाशितवाक्य 22:18 – 19; यशायाह 8:20; लूका 16:29, 31; गलातियों 1:8 – 9; 2 तीमुथियुस 3:15 – 16.

प्रश्न 4: यह कैसे प्रकट होता है कि पवित्रशास्त्र (बाइबल) परमेश्वर के वचन हैं?
उत्तर: अपने ऐश्वर्य एवं पवित्रता के द्वारा; सभी भागों की सम्मति, और सम्पूर्ण के प्रयोजन के द्वारा, जो कि परमेश्वर को सारी महिमा देना है; पापियों

को कायल करने और मन-फिराने के लिए, उद्धार के निमित्त विश्वासियों को सांत्वना देने एवं उनका निर्माण करने के लिए, पवित्रशास्त्र स्वयं को परमेश्वर का वचन प्रकट करते हैं; परन्तु केवल परमेश्वर का आत्मा ही, मनुष्य के हृदय में पवित्रशास्त्र के द्वारा और उसके साथ गवाही देता है, वही अकेले पूर्ण रूप से उसे विश्वास दिलाने में सक्षम है, कि ये ही परमेश्वर के सत्य वचन हैं।

होशे 8:12; 1 कुरिन्थियों 2:6 – 7, 13; भजन संहिता 119:18, 129; भजन संहिता 12:6; भजन संहिता 119:140; प्रेरितों के काम 10:43; प्रेरितों के काम 26:22; रोमियों 3:19, 27; प्रेरितों के काम 18:28; इब्रानियों 4:12; याकूब 1:18; भजन संहिता 19:7 – 9; रोमियों 15:4; प्रेरितों के काम 20:32; यूहन्ना 16:13 – 14; 1 यूहन्ना 2:20, 27; यूहन्ना 20:31.

प्रश्न 5: पवित्रशास्त्र (बाइबल) मुख्य रूप से क्या सिखाते हैं?

उत्तर: पवित्रशास्त्र (बाइबल) मुख्य रूप से यह सिखाते हैं, कि मनुष्य को परमेश्वर के विषय में क्या विश्वास करना है, और परमेश्वर मनुष्य से कौन से कर्तव्य चाहता है।

2 तीमुथियुस 1:13.

मनुष्य को परमेश्वर के सम्बन्ध में क्या विश्वास करना चाहिए

प्रश्न 6: पवित्रशास्त्र (बाइबल) परमेश्वर के विषय में क्या प्रकट करते हैं?

उत्तर: पवित्रशास्त्र प्रकट करते हैं कि परमेश्वर क्या है, परमेश्वरत्व में व्यक्ति, उसके विधान, और उसके विधानों का क्रियान्वयन क्या है।

इब्रानियों 11:6; 1 यूहन्ना 5:7; प्रेरितों के काम 15:14 – 15, 18; प्रेरितों के काम 4:27 – 28.

प्रश्न 7: परमेश्वर क्या है?

उत्तर: परमेश्वर एक आत्मा है, जो अपने में और अपने से, अस्तित्व, महिमा,

धन्यता, और सिद्धता में अनन्त है; सर्व-पर्याप्त, शाश्वत, अपरिवर्तनीय, अबोधगम्य, सर्वव्यापी, सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञानी, सबसे बुद्धिमान, सबसे पवित्र, सबसे धर्मी, सबसे दयालु और अनुग्रहकारी, चिर-सहिष्णु, और भलाई एवं सत्य से भरा हुआ है।

यूहन्ना 4:24; निर्गमन 3:14; अय्यूब 11:7 – 9; प्रेरितों के काम 7:2; 1 तीमुथियुस 6:15; मत्ती 5:48; उत्पत्ति 17:1; भजन संहिता 90:2; मलाकी 3:6; याकूब 1:17; 1 राजा 8:27; भजन संहिता 139:1 – 13; प्रकाशितवाक्य 4:8; इब्रानियों 4:13; भजन संहिता 147:5; रोमियों 16:27; यशायाह 6:3; प्रकाशितवाक्य 15:4; व्यवस्थाविवरण 32:4; निर्गमन 34:6.

प्रश्न 8: क्या एक से अधिक परमेश्वर हैं?
उत्तर: नहीं, केवल एक ही जीवित एवं सच्चा परमेश्वर है।

व्यवस्थाविवरण 6:4; 1 कुरिन्थियों 8:4, 6; यिर्मयाह 10:10.

प्रश्न 9: परमेश्वरत्व में कितने व्यक्ति हैं?
उत्तर: परमेश्वरत्व में तीन व्यक्ति हैं, पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा: और ये तीनों एक ही सत्य एवं शाश्वत परमेश्वर हैं, जो तत्व में एक हैं, शक्ति एवं महिमा में समान हैं; यद्यपि अपने व्यक्तिगत गुणों के द्वारा पहचाने जाते हैं।

1 यूहन्ना 5:7; मत्ती 3:16 – 17; मत्ती 28:19; 2 कुरिन्थियों 13:14; यूहन्ना 10:30.

प्रश्न 10: परमेश्वरत्व में तीनों व्यक्तियों के व्यक्तिगत गुण क्या हैं?
उत्तर: अनन्त काल से पिता के लिए यह उचित है कि वह पुत्र का पिता हो, और पुत्र के लिए यह उचित है कि वह पिता का एकलौता पुत्र हो, और पवित्र आत्मा के लिए कि वह पिता और पुत्र से अग्रसर हो।
इब्रानियों 1:5 – 6, 8; यूहन्ना 1:14, 18; यूहन्ना 15:26; गलातियों 4:6.

प्रश्न 11: यह कैसे प्रकट होता है कि पुत्र और पवित्र आत्मा, पिता के समान परमेश्वर हैं?

उत्तर: पवित्रशास्त्र (बाइबल) पुत्र और पवित्र आत्मा को ऐसे नाम, गुण, कार्य, एवं आराधना प्रदान करके, जो केवल परमेश्वर के लिए उचित हैं, यह प्रकट करता है, कि वे पिता के समान परमेश्वर हैं।

यशायाह 6:3, 5, 8; यूहन्ना 12:41; प्रेरितों के काम 28:25; 1 यूहन्ना 5:20; प्रेरितों के काम 5:3 – 4; यूहन्ना 1:1; यशायाह 9:6; यूहन्ना 2:24 – 25; 1 कुरिन्थियों 2:10 – 11; कुलुस्सियों 1:16; उत्पत्ति 1:2; मत्ती 28:19; 2 कुरिन्थियों 13:14.

प्रश्न 12: परमेश्वर के विधान (decrees) क्या हैं?

उत्तर: परमेश्वर के विधान (decrees), उसकी अपनी इच्छा के मत के बुद्धिमत्तापूर्ण, स्वतंत्र एवं पवित्र कार्य हैं, जिसके अनुसार सनातन काल से, उस ने, जो भी कुछ समय अन्तराल में घटित होता है, विशेष रूप से स्वर्गदूतों और मनुष्यों के सम्बन्ध में, उसे अपरिवर्तनीय रूप से, अपनी महिमा के लिए पहले ही से ठहराया है।

इफिसियों 1:11; रोमियों 11:33; रोमियों 9:14 – 15, 18; इफिसियों 1:4, 11; रोमियों 9:22 – 23; भजन संहिता 33:11.

प्रश्न 13: परमेश्वर ने विशेष रूप से स्वर्गदूतों और मनुष्यों के सम्बन्ध में क्या विधान ठहराया है?

उत्तर: परमेश्वर ने, एक अनन्त एवं अपरिवर्तनीय विधान के द्वारा, अपने मात्र प्रेम से, अपनी महिमामय अनुग्रह की स्तुति के लिए, उचित समय पर प्रकट होने के लिए, कुछ स्वर्गदूतों को महिमा के लिए चुना है; और ख्रीष्ट में कुछ मनुष्यों को अनन्त जीवन, और उसके साधनों के लिए चुना है: और साथ में अपनी सम्प्रभु शक्ति, और अपनी इच्छा के रहस्यमय मत के अनुसार, (जिसके द्वारा वह अपनी इच्छानुसार अनुग्रह करता है या रोकता है), अपने न्याय की महिमा की स्तुति के लिए, बाकियों को उनके पाप का दण्ड भोगने हेतु, अपमान एवं क्रोध के लिए ठहराया है।

1 तीमुथियुस 5:21; इफिसियों 1:4 – 6; 2 थिस्सलुनीकियों 2:13 – 14; रोमियों 9:17 – 18, 21 – 22; मत्ती 11:25 –26; 2 तीमुथियुस 2:20; यहूदा 1:4; 1 पतरस 2:8.

प्रश्न 14: परमेश्वर अपने विधानों (decrees) को कैसे पूरा करता है?
उत्तर: परमेश्वर अपने विधानों को सृष्टि के कार्यों और अपने देख-रेख के प्रबन्धन (Providence) वाले कार्यों में, अपने अचूक पूर्व-ज्ञान, और स्वयं अपनी इच्छा के स्वतंत्र एवं अपरिवर्तनीय मत के अनुसार पूरा करता है।

इफिसियों 1:11.

प्रश्न 15: सृष्टि के रचने का कार्य क्या है?
उत्तर: सृष्टि के रचने का कार्य यह है, जिसमें परमेश्वर ने आदि में, अपने सामर्थ्य के वचन के द्वारा, संसार, और उसमें जो कुछ है, उसे बिना किसी वस्तु के, अपने लिए, छः दिन के अन्तराल में, और सब कुछ बहुत ही अच्छा बनाया।

उत्पत्ति 1; इब्रानियों 11:3; नीतिवचन 16:4.

प्रश्न 16: परमेश्वर ने स्वर्गदूतों की रचना कैसे की?
उत्तर: परमेश्वर ने सभी स्वर्गदूतों को, उसकी आज्ञाओं का पालन करने के लिए, और उसके नाम की स्तुति करने के लिए, आत्मा, अमर, पवित्र, ज्ञान में उत्कृष्ट, शक्ति में बलशाली बनाया, जो फिर भी परिवर्तन के अधीन थे।

कुलुस्सियों 1:16; भजन संहिता 104:4; मत्ती 22:30; मत्ती 25:31; 2 शमूएल 14:17; मत्ती 24:36; 2 थिस्सलुनीकियों 1:7; भजन संहिता 103:20 – 21; 2 पतरस 2:4.

प्रश्न 17: परमेश्वर ने मनुष्य की रचना कैसे की?
उत्तर: परमेश्वर ने अन्य सभी प्राणियों को बनाने के पश्चात्, मनुष्य को नर और नारी करके; पुरुष के शरीर को भूमि की मिट्टी से, और स्त्री को पुरुष की पसली से बनाया; उन्हें जीवित, बुद्धि-सम्पन्न, और अमर आत्माएँ प्रदान

की; उन्हें स्वयं अपने स्वरूप में, ज्ञान, धार्मिकता एवं पवित्रता में, और उनके हृदयों में परमेश्वर की व्यवस्था के लिखे होने और उसे पूरा करने हेतु शक्ति, सभी प्राणियों पर प्रभुता करने के साथ रचा; फिर भी वे पाप में पतन के अधीन थे।

उत्पत्ति 1:27; उत्पत्ति 2:7; उत्पत्ति 2:22; उत्पत्ति 2:7; अय्यूब 35:11; सभोपदेशक 12:7; मत्ती 10:28; लूका 23:43; उत्पत्ति 1:27; कुलुस्सियों 3:10; इफिसियों 4:24; रोमियों 2:14 – 15; सभोपदेशक 7:29; उत्पत्ति 1:28; उत्पत्ति 3:6; सभोपदेशक 7:29.

प्रश्न 18: परमेश्वर के दिव्य प्रबंधन (Providence) के कार्य क्या हैं?
उत्तर: परमेश्वर के दिव्य प्रबंधन (Providence) के कार्य उस की परम पवित्रता, बुद्धि और शक्ति से अपने सभी प्राणियों को संरक्षित, और संचालित करना है; स्वयं अपनी महिमा के लिए, उन्हें, एवं उनके सभी कार्यों को आदेशित करना है।

भजन संहिता 145:17; भजन संहिता 104:24; यशायाह 28:29; इब्रानियों 1:3; भजन संहिता 103:19; मत्ती 10:29 – 31; उत्पत्ति 45:7; रोमियों 11:36; यशायाह 63:14.

प्रश्न 19: स्वर्गदूतों के सम्बन्ध में परमेश्वर का दिव्य प्रबंधन (Providence) का कार्य क्या है?
उत्तर: परमेश्वर ने अपने दिव्य प्रबंधन के द्वारा कुछ स्वर्गदूतों को, उनकी इच्छानुसार एवं अपरिवर्तनीय रूप से, पाप व नरक-दण्ड में पतन की अनुमति दी, उन्हें, और उनके सभी पापों को, अपनी महिमा के लिए सीमित किया एवं आदेशित दिया; और बाकियों को पवित्रता एवं आनन्द में स्थापित किया; उन सभी को, वह अपनी इच्छा के अनुसार, अपनी शक्ति, दया एवं न्याय के प्रशासन-प्रबन्ध में नियोजित करता है।

यहूदा 1:6; 2 पतरस 2:4; इब्रानियों 2:16; यूहन्ना 8:44; अय्यूब 1:12; मत्ती 8:31; 1 तीमुथियुस 5:21; मरकुस 8:38; इब्रानियों 12:22; भजन संहिता 104:4; 2 राजा 19:35; इब्रानियों 1:14.

प्रश्न 20: मनुष्य के सम्बन्ध में, परमेश्वर का दिव्य प्रबंधन (Providence) का कार्य क्या है, जिस अवस्था में मनुष्य की सृष्टि हुई थी?

उत्तर: मनुष्य के सम्बन्ध में, परमेश्वर का दिव्य प्रबंधन (Providence) का कार्य, जिस अवस्था में मनुष्य की सृष्टि हुई थी, वह था, उसे अदन की वाटिका में रखना, उसकी देखभाल करने के लिए उसे नियुक्त करना, उसे पृथ्वी के फल खाने की स्वतंत्रता देना था; उसकी प्रभुता के अधीन प्राणियों को रखना, और उसकी सहायता के लिए विवाह का प्रबन्ध करना; अपने साथ सहभागिता उसे प्रदान करना; सब्त की स्थापना करना; व्यक्तिगत, सिद्ध, एवं सतत आज्ञाकारिता की शर्त पर उसके साथ जीवन की वाचा बाँधना, जिसमें जीवन का वृक्ष एक प्रतिज्ञा थी; और मृत्यु की पीड़ा के दण्ड पर, भले और बुरे के ज्ञान के वृक्ष का फल खाने से मना करना था।

उत्पत्ति 2:8, 15 – 16; उत्पत्ति 1:28; उत्पत्ति 2:18; उत्पत्ति 1:26 – 29; उत्पत्ति 3:8; उत्पत्ति 2:3; गलातियों 3:12; रोमियों 10:5; उत्पत्ति 2:9, 17.

प्रश्न 21: क्या मनुष्य, उस अवस्था में बना रहा, जिसमें परमेश्वर ने सबसे पहले उनकी सृष्टि की थी?

उत्तर: हमारे प्रथम माता-पिता ने, अपनी स्वयं की इच्छा की स्वतंत्रता पर छोड़े जाने के कारण, शैतान की परीक्षा के द्वारा, निषिद्ध फल को खाकर, परमेश्वर की आज्ञा का उल्लंघन किया, और इस प्रकार निर्दोषता की अपनी उस पहली अवस्था से गिर गये, जिसमें उनकी सृष्टि हुई थी।

उत्पत्ति 3:6 – 8; सभोपदेशक 7:29; 2 कुरिन्थियों 11:3.

प्रश्न 22: क्या सम्पूर्ण मानव जाति उस प्रथम आज्ञा-उल्लंघन में गिर गई?

उत्तर: एक जन-प्रतिनिधि व्यक्ति के रूप में, आदम के साथ बाँधी गई वाचा, न केवल उसके लिए, बल्कि उसकी भावी पीढ़ी के लिए भी थी; सम्पूर्ण मानव जाति ने जो उससे सामान्य प्रजनन के द्वारा पैदा हुई, उसमें पाप

किया, और उस प्रथम आज्ञा-उल्लंघन में उसके साथ गिर गई।

प्रेरितों के काम 17:26; उत्पत्ति 2:16 – 17; रोमियों 5:12 – 20; 1 कुरिन्थियों 15:21 – 22.

प्रश्न 23: पाप में गिरावट मानव जाति को किस अवस्था में ले आया?
उत्तर: पाप में गिरावट मानव जाति को पाप और दुःख-दर्द की अवस्था में ले आया।

रोमियों 5:12; रोमियों 3:23.

प्रश्न 24: पाप क्या है?
उत्तर: बुद्धि-सम्पन्न प्राणी को दिए गए एक नियम के रूप में परमेश्वर की किसी भी व्यवस्था के अनुरूप न होना, या उसका उल्लंघन करना, दोनों ही बातें पाप हैं।

1 यूहन्ना 3:4; गलातियों 3:10, 12.

प्रश्न 25: जिस अवस्था में मनुष्य गिर गया, उसकी पापमयता किन बातों में निहित है??
उत्तर: जिस अवस्था में मनुष्य गिर गया, उसकी पापमयता इन बातों में निहित है: आदम के प्रथम पाप का दोष, पहले वाली धार्मिकता से जिसमें उसे रचा गया था उससे रहित होना, एवं उसके सम्पूर्ण स्वभाव का भ्रष्ट हो जाना, जिसके द्वारा वह पूर्ण रूप से बीमार, अशक्त, और उन सब बातों के प्रति विपरीत बना दिया गया जो आत्मिक रूप से भली हैं, और सम्पूर्णता से सभी बुराई की ओर प्रवृत्त होना, और यह निरन्तर जारी है; जिसको सामान्य रूप से मूल पाप कहा जाता है; तथा वे सभी पाप कर्म जो इससे उत्पन्न होते हैं।

रोमियों 5:12, 19; रोमियों 3:10 – 19; इफिसियों 2:1 – 3; रोमियों 5:6; रोमियों 8:7 – 8; उत्पत्ति 6:5;याकूब 1:14 – 15; मत्ती 15:19.

प्रश्न 26: मूल पाप हमारे प्रथम माता-पिता से उनकी भावी पीढ़ी तक कैसे पहुँचता है?

उत्तर: मूल पाप हमारे प्रथम माता-पिता से लेकर उनकी भावी पीढ़ी तक प्राकृतिक प्रजनन द्वारा पहुँचता है, इसलिए वे सब भी जो उनसे इस प्रकार उत्पन्न होते हैं, पाप में गर्भ में पड़ते एवं जन्म लेते हैं।

भजन संहिता 51:5; अय्यूब 14:4;अय्यूब 15:14; यूहन्ना 3:6.

प्रश्न 27: पाप में गिरावट मानव जाति पर कौन सा दुःख-दर्द लेकर आया?

उत्तर: पाप में गिरावट समस्त मानव जाति पर परमेश्वर की संगति से रहित होना, उसके क्रोध व श्राप को लाया; और इस प्रकार स्वभाव ही से क्रोध की सन्तान, शैतान के बंधुआ दास होने के कारण, हम इस संसार में और आने वाले संसार के सभी पाप-दण्ड के लिए न्यायपूर्वक रूप से उत्तरदायी हैं।

उत्पत्ति 3:8, 10, 24; इफिसियों 2:2 – 3; 2 तीमुथियुस 2:26; उत्पत्ति 2:17; विलापगीत 3:39; रोमियों 6:23; मत्ती 25:41, 46;यहूदा 1:7.

प्रश्न 28: इस संसार में पाप के दण्ड क्या हैं?

उत्तर: इस संसार में पाप के दण्ड, या तो आंतरिक हैं, जैसे कि मन का अंधापन, एक दोषपूर्ण भावना, अत्यधिक भ्रम, हृदय की कठोरता, विवेक का डर, और घृणित अनुराग; या बाहरी है, जैसे हमारे कारण जीवों पर परमेश्वर का अभिशाप; और हमारे शरीर, नाम, सम्पत्ति, सम्बन्धों, और कार्यों पर पड़ने वाले सभी अन्य बुराइयाँ; इन सब के साथ स्वयं मृत्यु।

इफिसियों 4:18; रोमियों 1:28; 2 थिस्सलुनीकियों 2:11; रोमियों 2:5; यशायाह 33:14; उत्पत्ति 4:13; मत्ती 27:4;रोमियों 1:26;उत्पत्ति 3:17; व्यवस्थाविवरण 28:15 – 68; रोमियों 6:21, 23.

प्रश्न 29: आने वाले संसार में पाप के दण्ड क्या हैं?
उत्तर: आने वाले संसार में पाप के दण्ड हैं, परमेश्वर की सुखदायी उपस्थिति से सर्वदा के लिए अलगाव, और बिना रुकावट के, सर्वदा के लिए नरक की आग में, प्राण एवं शरीर में सबसे गम्भीर दुखदायी पीड़ाएँ।

2 थिस्सलुनीकियों 1:9; मरकुस 9:43 – 44, 46, 48; लूका 16:24.

प्रश्न 30: क्या परमेश्वर ने समस्त मानव जाति को पाप और दुःख-दर्द की अवस्था में नष्ट होने के लिए छोड़ दिया है?
उत्तर: परमेश्वर ने सभी मनुष्यों को पाप और दुःख की उस अवस्था में नष्ट होने के लिए नहीं छोड़ा है, जिसमें वे पहली वाचा के उल्लंघन के कारण गिर गए थे, जिसे सामान्य रूप से कार्यों की वाचा कहा जाता है; परन्तु अपने मात्र प्रेम एवं दया के कारण वह अपने चुने हुए लोगों को इससे छुड़ा कर बाहर निकाल लाता है, और उन्हें दूसरी वाचा के द्वारा उद्धार की अवस्था में लाता है, जिसे सामान्य रूप से अनुग्रह की वाचा कहा जाता है।

1 थिस्सलुनीकियों 5:9; गलातियों 3:10, 12; तीतुस 3:4 – 7; गलातियों 3:21; रोमियों 3:20 – 22.

प्रश्न 31: अनुग्रह की वाचा किसके साथ बाँधी गई थी?
उत्तर: दूसरे आदम के रूप में, अनुग्रह की वाचा ख्रीष्ट के साथ, और उसमें उसकी सन्तान के रूप में सभी चुने हुए लोगों के साथ बाँधी गई थी।

गलातियों 3:16; रोमियों 5:15 – 21; यशायाह 53:10 – 11.

प्रश्न 32: दूसरी वाचा में परमेश्वर का अनुग्रह किस प्रकार प्रकट होता है?
उत्तर: दूसरी वाचा में परमेश्वर का अनुग्रह इसमें प्रकट होता है, कि वह पापियों को एक बिचवई, और उसके द्वारा जीवन और उद्धार सेंतमेंत प्रदान एवं पेश करता है; और उसमें उन्हें मिलाने की शर्त के रूप में विश्वास की

माँग करने, अपने सभी चुने हुओं में उद्धार के अन्य सभी अनुग्रहों के साथ, उस विश्वास को क्रियान्वित करने के लिए; और उन्हें, परमेश्वर के प्रति उनके विश्वास एवं कृतज्ञता की सत्यता के प्रमाण के रूप में, और उस मार्ग के रूप में जिसमें उसने उन्हें उद्धार के लिए ठहराया है, उन सभी पवित्र आज्ञाकारिता हेतु सक्षम बनाने के लिए पवित्र आत्मा की प्रतिज्ञा करता एवं देता है।

उत्पत्ति 3:15; यशायाह 42:6; यूहन्ना 6:27; 1 यूहन्ना 5:11 – 12; यूहन्ना 3:16; यूहन्ना 1:12; नीतिवचन 1:23; 2 कुरिन्थियों 4:13;गलातियों 5:22 – 23; यहेजकेल 36:27; याकूब 2:18, 22; 2 कुरिन्थियों 5:14 – 15; इफिसियों 2:10.

प्रश्न 33: क्या अनुग्रह की वाचा सदैव एक ही और समान रीति से क्रियान्वित की गई?

उत्तर: अनुग्रह की वाचा को सदैव समान रीति से क्रियान्वित नहीं किया गया, लेकिन पुराने नियम में इसके क्रियान्वयन नए नियम के तहत लोगों से अलग थे।

2 कुरिन्थियों 3:6 – 9.

प्रश्न 34: पुराने नियम के तहत अनुग्रह की वाचा का क्रियान्वयन किस प्रकार किया गया था?

उत्तर: पुराने नियम के तहत अनुग्रह की वाचा का क्रियान्वयन, प्रतिज्ञाओं, भविष्यवाणियों, बलिदानों, खतना, फसह का पर्व, और अन्य प्रकारों एवं अध्यादेशों के द्वारा किया गया, जिन्होंने उस समय पर ख्रीष्ट के आने का पूर्व-संकेत दिया था, और जो उस समय प्रतिज्ञा किए हुए मसीहा में चुने गए लोगों के विश्वास का निर्माण करने के लिए पर्याप्त थे, जिसके द्वारा उस समय उन्हें पापों से पूर्ण क्षमा, और अनन्त उद्धार प्राप्त हुआ।

रोमियों 15:8; प्रेरितों के काम 3:20, 24; इब्रानियों 10:1; रोमियों 4:11; 1 कुरिन्थियों 5:7; इब्रानियों 8 – 10, 11:13; गलातियों 3:7 – 9, 14.

प्रश्न 35: नए नियम के तहत अनुग्रह की वाचा का क्रियान्वयन किस प्रकार किया जाता है?

उत्तर: नए नियम के तहत, जब ख्रीष्ट जो सार है प्रकट किया गया था, तो अनुग्रह की उसी वाचा को वचन के प्रचार में, बपतिस्मा और प्रभु भोज के मसीही संस्कारों को देने में क्रियान्वित किया गया था और आज भी किया जाता है; जिसमें सभी राष्ट्रों के लिए, अनुग्रह और उद्धार को अधिक परिपूर्णता, प्रमाण, एवं प्रभावकारिता में प्रस्तुत किया जाता है।

मरकुस 16:15; मत्ती 28:19 – 20; 1 कुरिन्थियों 11:23 – 25; 2 कुरिन्थियों 3:6 – 18; इब्रानियों 8:6, 10, 11; मत्ती 28:19.

प्रश्न 36: अनुग्रह की वाचा का बिचवई कौन है?

उत्तर: अनुग्रह की वाचा का एकमात्र बिचवई प्रभु यीशु ख्रीष्ट है, जिसका, अस्तित्व परमेश्वर का शाश्वत पुत्र, पिता के साथ एक तत्व और पिता के बराबर है, जब समय पूरा हुआ तो मनुष्य बना, और जो इसी प्रकार सदैव, एक व्यक्ति, दो सम्पूर्ण भिन्न स्वभावों में, परमेश्वर और मनुष्य था और सदा रहेगा।

1 तीमुथियुस 2:5;यूहन्ना 1:1, 14; यूहन्ना 10:30; फिलिप्पियों 2:6; गलातियों 4:4; लूका 1:35; रोमियों 9:5; कुलुस्सियों 2:9; इब्रानियों 7:24 – 25.

प्रश्न 37: ख्रीष्ट, परमेश्वर का पुत्र होते हुए, किस रीति से मनुष्य बना?

उत्तर: परमेश्वर का पुत्र, ख्रीष्ट, वास्तविक शरीर व यथार्थ विवेकी आत्मा को धारण करके, पवित्र आत्मा की सामर्थ्य से कुंवारी मरियम की कोख में गर्भधारण होकर, उसके तत्व से, और उससे जन्म लेकर मनुष्य बना, फिर भी वह निष्पाप है।

यूहन्ना 1:14; मत्ती 26:38; लूका 1:27, 31, 35, 42; गलातियों 4:4; इब्रानियों 4:15; इब्रानियों 7:26.

प्रश्न 38: यह क्यों आवश्यक था कि बिचवई को परमेश्वर होना चाहिए?
उत्तर: यह आवश्यक था कि बिचवई को परमेश्वर होना चाहिए, ताकि वह मानव स्वभाव को परमेश्वर के असीमित क्रोध, और मृत्यु की शक्ति को सहन कर सके और उनके तले डूबने से बचा सके; अपनी पीड़ाओं, आज्ञाकारिता और मध्यस्थता को योग्य एवं प्रभावकारिता प्रदान करे; और परमेश्वर के न्याय को सन्तुष्ट करे, उसकी कृपादृष्टि प्राप्त करे, एक विशिष्ट लोगों को मोल ले, अपना आत्मा उन्हें दे, उनके सभी शत्रुओं पर विजय प्राप्त करे, और उन्हें अनन्त उद्धार तक ले जाए।

प्रेरितों के काम 2:24 – 25; रोमियों 1:4; रोमियों 4:25; इब्रानियों 9:14; प्रेरितों के काम 20:28; इब्रानियों 9:14; इब्रानियों 7:25 – 28; रोमियों 3:24 – 26; इफिसियों 1:6; मत्ती 3:17; तीतुस 2:13 – 14; गलातियों 4:6; लूका 1:68 – 69, 71, 74; इब्रानियों 5:8 – 9; इब्रानियों 9:11 – 15.

प्रश्न 39: यह क्यों आवश्यक था कि बिचवई को मनुष्य होना चाहिए??
उत्तर: यह आवश्यक था कि बिचवई को मनुष्य होना चाहिए, ताकि वह हमारे स्वभाव को आगे बढ़ा सके, व्यवस्था का आज्ञापालन करे, हमारे स्वभाव में दुःख उठाए और मध्यस्थता वाली प्रार्थना करे, हमारी दुर्बलताओं के प्रति साथी के समान सहानुभूति रखे, ताकि हम को लेपालक होने का पद मिले, और हम को अनुग्रह के सिंहासन के निकट आने का साहस और सांत्वना प्राप्त हो।

इब्रानियों 2:16; गलातियों 4:4; इब्रानियों 2:14; इब्रानियों 7:24 – 25; इब्रानियों 4:15; गलातियों 4:5; इब्रानियों 4:16.

प्रश्न 40: यह क्यों आवश्यक था कि बिचवई को एक ही व्यक्ति में परमेश्वर और मनुष्य होना चाहिए?
उत्तर: यह आवश्यक था कि बिचवई, जिसे परमेश्वर और मनुष्य का मेल कराना था, स्वयं परमेश्वर एवं मनुष्य दोनों होना चाहिए, और यह एक ही व्यक्ति में, ताकि प्रत्येक स्वभाव के उचित कार्यों को हमारे पक्ष में परमेश्वर

द्वारा स्वीकार किया जा सके, और एक सम्पूर्ण व्यक्ति के कार्यों के रूप में हमारे द्वारा उस पर भरोसा किया जा सके।

मत्ती 1:21, 23; मत्ती 3:17; इब्रानियों 9:14; 1 पतरस 2:6.

प्रश्न 41: हमारे बिचवई को यीशु क्यों कहा गया?

उत्तर: हमारे बिचवई को यीशु कहा गया, क्योंकि वह अपने लोगों को उनके पापों से बचाता है।

मत्ती 1:21.

प्रश्न 42: हमारे बिचवई को ख्रीष्ट क्यों कहा गया?

उत्तर: हमारे बिचवई को ख्रीष्ट कहा गया, क्योंकि पवित्र आत्मा के बहुतायत से उसका अभिषेक किया गया था; और अपने अपमान एवं महिमा की दोनों ही अवस्था में, अपनी कलीसिया के नबी, याजक एवं राजा के पदों को क्रियान्वित करने के लिए. उसे अलग किया गया, और सभी अधिकार एवं योग्यता के साथ पूर्ण रूप से सुसज्जित किया गया था।

यूहन्ना 3:34; भजन संहिता 45:7; यूहन्ना 6:27; मत्ती 28:18 – 20; प्रेरितों के काम 3:21 – 22; लूका 4:18, 21; इब्रानियों 5:5 – 7; इब्रानियों 4:14 – 15; भजन संहिता 2:6; मत्ती 21:5; यशायाह 9:6 – 7; फिलिप्पियों 2:8 – 11.

प्रश्न 43: ख्रीष्ट एक नबी के पद के कार्यभार को किस रीति से पूरा करता है?

उत्तर: ख्रीष्ट, अपने वचन एवं आत्मा के द्वारा, प्रशासन के विभिन्न माध्यमों से, सभी बातों में हमारी आत्मिक उन्नति एवं हमारे उद्धार से सम्बन्धित, परमेश्वर की सम्पूर्ण इच्छा को सभी युगों में कलीसिया के लिए प्रकट करके, नबी के पद के कार्यभार को पूरा करता है।

यूहन्ना 1:18; 1 पतरस 1:10 – 12; इब्रानियों 1:1 – 2; यूहन्ना 15:15; प्रेरितों के काम 20:32;

इफिसियों 4:11 – 13; यूहन्ना 20:31.

प्रश्न 44: ख्रीष्ट एक याजक के पद के कार्यभार को किस रीति से पूरा करता है?

उत्तर: परमेश्वर से अपने लोगों का मेल मिलाप कराने हेतु, उनके पापों के लिए एक ही बार स्वयं का बलिदान करके चढ़ाने; और हमारे लिए निरंतर सदा विनती करने के द्वारा, ख्रीष्ट, याजक के पद के कार्यभार को पूरा करता है।

इब्रानियों 9:14, 28; इब्रानियों 2:17; इब्रानियों 7:25.

प्रश्न 45: ख्रीष्ट एक राजा के पद के कार्यभार को किस रीति से पूरा करता है?

उत्तर: संसार में से अपने लिए एक विशेष लोग बुलाने में, उन्हें, और उन्हें अधिकारियों, व्यवस्था, एवं न्यायिक अधिकार देने में, जिसके द्वारा वह दृश्यमान रूप से उन पर शासन करता है; अपने चुने हुओं पर उद्धार वाला अनुग्रह प्रदान करने में, उनकी आज्ञाकारिता को पुरस्कृत करने में, और उनके पापों के लिए उन्हें सुधारने में, उनकी सभी परीक्षाओं एवं दुःखों के तहत उनका संरक्षण करने एवं सहारा देने और उनके सभी शत्रुओं को पराजित करने में, और अपनी महिमा एवं उनकी भलाई के लिए सभी बातों को शक्तिशाली रीति से व्यवस्थित करने में, और बाकियों से बदला लेने में भी, जो परमेश्वर को नहीं जानते, और सुसमाचार को नहीं मानते हैं, ख्रीष्ट राजा के पद के कार्यभार को पूरा करता है।

प्रेरितों के काम 15:14 – 16; यशायाह 55:4 – 5; उत्पत्ति 49:10; भजन संहिता 110:3; इफिसियों 4:11 – 12; 1 कुरिन्थियों 12:28; यशायाह 33:22; मत्ती 18:17 – 18; 1 कुरिन्थियों 5:4 – 5; प्रेरितों के काम 5:31; प्रकाशितवाक्य 22:12; प्रकाशितवाक्य 2:10; प्रकाशितवाक्य 3:19; यशायाह 63:9; 1 कुरिन्थियों 15:25; भजन संहिता 110:1 – 7; रोमियों 14:10 – 11; रोमियों 8:28; 2 थिस्सलुनीकियों 1:8 – 9; भजन संहिता 2:8 – 9.

प्रश्न 46: ख्रीष्ट के अपमान की अवस्था क्या थी?
उत्तर: ख्रीष्ट के अपमान की अवस्था वह निम्न दशा थी, जिसमें, उसने हमारे निमित्त, अपने गर्भाधान एवं जन्म में, जीवन, मृत्यु, और अपनी मृत्यु के पश्चात्, अपने पुनरुत्थान तक, अपनी महिमा से स्वयं को शून्य कर दिया, और दास का स्वरूप धारण किया।

फिलिप्पियों 2:6 – 8; लूका 1:31; 2 कुरिन्थियों 8:9; प्रेरितों के काम 2:24.

प्रश्न 47: ख्रीष्ट ने अपने गर्भाधान एवं जन्म में स्वयं को दीन किस प्रकार बनाया?
उत्तर: ख्रीष्ट ने अपने गर्भाधान एवं जन्म में स्वयं को इस प्रकार दीन बनाया, कि, अनन्त काल से परमेश्वर का पुत्र, पिता की गोद में होते हुए भी, समय के पूरा होने पर वह मनुष्य का पुत्र बनने, सामान्य से अधिक अपमान की विविध परिस्थितियों के साथ; दरिद्र अवस्था की एक स्त्री से बनाए जाने, और उसके द्वारा पैदा होने के लिए प्रसन्न हुआ।

यूहन्ना 1:14, 18; गलातियों 4:4; लूका 2:7.

प्रश्न 48: ख्रीष्ट ने अपने जीवन में स्वयं को किस प्रकार दीन बनाया?
उत्तर: ख्रीष्ट ने अपने जीवन में स्वयं को व्यवस्था के अधीन करने के द्वारा, जिसे उसने सिद्धता से पूरा किया; और संसार के अपमान, शैतान की परीक्षाओं, और अपने शरीर में दुर्बलताओं के साथ संघर्ष करने के द्वारा दीन बनाया, चाहे वे मनुष्यों के स्वभाव के लिए सामान्य थी, या विशेष रूप से उसकी दरिद्र अवस्था के साथ थीं।

गलातियों 4:4; मत्ती 5:17; रोमियों 5:19; भजन संहिता 22:6; इब्रानियों 12:2 – 3; मत्ती 4:1 – 12; लूका 4:13; इब्रानियों 2:17 – 18; इब्रानियों 4:15; यशायाह 52:13 – 14.

प्रश्न 49: ख्रीष्ट ने अपनी मृत्यु में स्वयं को किस प्रकार दीन बनाया?
उत्तर: ख्रीष्ट ने अपनी मृत्यु में स्वयं को दीन इस प्रकार बनाया, कि वह

यहूदा के द्वारा धोखा दिया गया, अपने शिष्यों द्वारा त्याग दिया गया, संसार द्वारा उसका ठट्ठा एवं तिरस्कार किया गया, पिलातुस द्वारा उसे दोषी ठहराया गया, और अपने सताने वालों के द्वारा वह पीड़ित किया गया; साथ में मृत्यु के आतंक, और अन्धकार की शक्तियों से, संघर्ष करते हुए, परमेश्वर के क्रोध के बोझ को उसने महसूस किया एवं उसे उठाया, उसने क्रूस की दर्दनाक, शर्मनाक एवं शापित मृत्यु को सहन करते हुए, पाप के लिए अपना जीवन बलिदान कर दिया।

मत्ती 27:4; मत्ती 26:56; यशायाह 53:2 – 3; मत्ती 27:26 – 50; यूहन्ना 19:34; लूका 22:44; मत्ती 27:46; यशायाह 53:10; फिलिप्पियों 2:8; इब्रानियों 12:2; गलातियों 3:13.

प्रश्न 50: ख्रीष्ट की मृत्यु के पश्चात् उसका अपमान किन बातों में निहित था?

उत्तर: ख्रीष्ट की मृत्यु के पश्चात् उसका अपमान उसके दफनाए जाने और तीसरे दिन तक मृत अवस्था में और मृत्यु की शक्ति के अधीन रहने में निहित था, जिसे अन्यथा इन वचनों में व्यक्त किया गया है कि, वह अधोलोक में गया।

1 कुरिन्थियों 15:3 – 4; भजन संहिता 16:10; प्रेरितों के काम 2:24 – 27, 31; रोमियों 6:9; मत्ती 12:40.

प्रश्न 51: ख्रीष्ट के महिमान्वित होने की अवस्था क्या थी?

उत्तर: ख्रीष्ट के महिमान्वित होने की अवस्था में उसका पुनरुत्थान, स्वर्गारोहण, पिता के दाहिने हाथ पर बैठना, और संसार का न्याय करने के लिए उसका फिर से आना सम्मिलित है।

1 कुरिन्थियों 15:4; मरकुस 16:19; इफिसियों 1:20; प्रेरितों के काम 1:11; प्रेरितों के काम 17:31.

प्रश्न 52: ख्रीष्ट को उसके पुनरुत्थान में किस प्रकार महिमान्वित किया गया था?

उत्तर: ख्रीष्ट को उसके पुनरुत्थान में महिमान्वित इस प्रकार किया गया, कि, मृत्यु में उसने क्षय (सड़ना) नहीं देखा (जिसके अधीन उसको रखना सम्भव नहीं था) और वही शरीर उसके आवश्यक गुणों के साथ उसके पास था जिसमें उसने दुःख सहा (लेकिन मृत्यु और इस जीवन से सम्बन्धित अन्य आम दुर्बलताओं के बिना), जो वास्तव में उसके प्राण के साथ जोड़ी गई, वह अपनी शक्ति के द्वारा तीसरे दिन मृतकों में फिर से जी उठा; जिसके द्वारा उसने स्वयं को परमेश्वर का पुत्र होने, परमेश्वर के न्याय को संतुष्ट किए जाने, मृत्यु और जिसके पास उसकी सामर्थ्य थी उस पर विजय पाने, और जीवित एवं मृतकों का प्रभु परमेश्वर होने की घोषणा की। उसने एक प्रतिनिधि व्यक्ति व अपनी कलीसिया के प्रधान (सिर) के रूप में, उनके धर्मी ठहराए जाने, अनुग्रह में जीवन दिए जाने, शत्रुओं के विरुद्ध सहायता देने, और अन्तिम दिन में मृतकों में से उनके पुनरुत्थान का आश्वासन देने के लिए यह सब किया।

प्रेरितों के काम 2:24, 27; लूका 24:39; रोमियों 6:9; प्रकाशितवाक्य 1:18; यूहन्ना 10:18; रोमियों 1:4; रोमियों 8:34; इब्रानियों 2:14; रोमियों 14:9; 1 कुरिन्थियों 15:21 – 22; इफिसियों 1:20, 22 – 23; कुलुस्सियों 1:18; रोमियों 4:25; इफिसियों 2:1, 5 – 6; कुलुस्सियों 2:12; 1 कुरिन्थियों 15:25 – 27; 1 कुरिन्थियों 15:20.

प्रश्न 53: ख्रीष्ट को उसके स्वर्गारोहण में किस प्रकार महिमान्वित किया गया था?

उत्तर ख्रीष्ट को उसके स्वर्गारोहण में इस प्रकार महिमान्वित किया गया, कि पुनरुत्थान के पश्चात् वह प्रायः अपने प्रेरितों को दिखाई देते, और उनसे बातचीत करते थे, उनसे परमेश्वर के राज्य से सम्बन्धित बातों के विषय में बातें की, और सभी राष्ट्रों को सुसमाचार प्रचार करने के लिए उन्हें आदेश दिया, अपने पुनरुत्थान के चालीस दिनों के पश्चात्, वह, हमारे स्वभाव में और हमारा प्रधान होकर, शत्रुओं पर विजय पा कर, सर्वोच्च स्वर्ग में दृश्यमान रूप से ऊपर चला गया, वहाँ मनुष्यों के लिए उपहार प्राप्त करने

के लिए, वहाँ पर हमारे लिए प्रेम को बढ़ाने के लिए, और हमारे लिए जगह तैयार करने के लिए, जहाँ वह अभी है और संसार के अन्त तक अपने दूसरे आगमन तक रहेगा।

प्रेरितों के काम 1:2 – 3; मत्ती 28:19 – 20; इब्रानियों 6:20; इफिसियों 4:8; प्रेरितों के काम 1:9 – 11; इफिसियों 4:10; भजन संहिता 68:18; कुलुस्सियों 3:1 – 2; यूहन्ना 14:3; प्रेरितों के काम 3:21.

प्रश्न 54: ख्रीष्ट को परमेश्वर पिता के दाहिने हाथ पर बैठने में किस प्रकार महिमान्वित किया गया?

उत्तर: ख्रीष्ट को पिता के दाहिने हाथ पर उसके बैठने में इस प्रकार महिमान्वित किया गया, कि, परमेश्वर-मनुष्य के रूप में वह स्वर्ग एवं पृथ्वी की सभी वस्तुओं पर आनन्द, महिमा, और सामर्थ्य की सभी परिपूर्णता के साथ परमेश्वर पिता से सर्वोच्च समर्थन के लिए ऊँचा किया गया; और अपनी कलीसिया को इकट्ठा करता एवं उसकी रक्षा करता है, और उनके शत्रुओं को पराजित करता है; अपने सेवकों एवं लोगों को वरदानों एवं अनुग्रह के साथ सुसज्जित करता है, और उनके लिए बिचवई वाली प्रार्थना करता है।

फिलिप्पियों 2:9; प्रेरितों के काम 2:28; भजन संहिता 16:11; यूहन्ना 17:5; इफिसियों 1:22; 1 पतरस 3:22; इफिसियों 4:10 – 12; भजन संहिता 110:1; रोमियों 8:34.

प्रश्न 55: ख्रीष्ट बिचवई वाली प्रार्थना कैसे करते हैं?

उत्तर: स्वर्ग में पिता के सामने निरन्तर हमारे स्वभाव में प्रकट होने के द्वारा, पृथ्वी पर अपनी आज्ञाकारिता एवं बलिदान की श्रेष्ठ योग्यता के आधार पर, सभी विश्वासियों के लिए अपनी इच्छा के लागू होने की घोषणा करके; विश्वासियों के विरुद्ध लगाए गए सभी दोषों का प्रत्युत्तर देते हुए, और उनके दैनिक पाप में गिरने के बावजूद, उनके लिए शान्त विवेक को प्राप्त करने, साहस के साथ अनुग्रह के सिंहासन तक पहुँचने, और उनके व्यक्तित्व एवं सेवाओं को ग्रहण करने के द्वारा, ख्रीष्ट बिचवई वाली प्रार्थना करता है।

इब्रानियों 9:12, 24; इब्रानियों 1:3; यूहन्ना 3:16; यूहन्ना 17:9, 20, 24; रोमियों 8:33 – 34; रोमियों 5:1 – 2; 1 यूहन्ना 2:1 – 2; इब्रानियों 4:16; इफिसियों 1:6; 1 पतरस 2:5.

प्रश्न 56: संसार का न्याय करने के लिए उसके पुनः आगमन में ख्रीष्ट को किस प्रकार महिमान्वित किया जाएगा?

उत्तरः संसार का न्याय करने के लिए उसके पुनः आगमन में ख्रीष्ट को इस प्रकार महिमान्वित किया जाएगा, कि वह, जिसका दुष्ट मनुष्यों द्वारा अन्यायपूर्ण न्याय किया गया और दोषी ठहराया गया, वह अन्तिम दिन में महान सामर्थ्य में, और स्वयं अपनी एवं अपने पिता की महिमा के पूर्ण प्रकटीकरण में, अपने सभी पवित्र स्वर्गदूतों के साथ, प्रधान स्वर्गदूत के स्वर के साथ, और परमेश्वर की तुरही की ऊँची पुकार के साथ, धार्मिकता के साथ संसार का न्याय करने के लिए पुनः वापस आएगा।

प्रेरितों के काम 3:14 – 15; मत्ती 24:30; लूका 9:26; मत्ती 25:31; 1 थिस्सलुनीकियों 4:16; प्रेरितों के काम 17:31.

प्रश्न 57: स्वयं बिचवई होकर ख्रीष्ट ने क्या लाभ प्राप्त किए?

उत्तरः स्वयं बिचवई होकर ख्रीष्ट ने अनुग्रह की वाचा के सभी अन्य लाभों के साथ, छुटकारे (उद्धार) को प्राप्त किया।

इब्रानियों 9:12; 2 कुरिन्थियों 1:20.

प्रश्न 58: हम उन लाभों के भागीदार कैसे बनाए जाते हैं, जिन्हें ख्रीष्ट ने प्राप्त किया है?

उत्तरः   ख्रीष्ट द्वारा प्राप्त लाभों के भागीदार उन लाभों के हम पर लागू किए जाने के द्वारा बनाए जाते हैं, जो कि विशेष रूप से परमेश्वर पवित्र आत्मा का कार्य है।

यूहन्ना 1:11 – 12; तीतुस 3:5 – 6.

प्रश्न 59: किन लोगों को ख्रीष्ट के द्वारा छुटकारे (उद्धार) का भागीदार बनाया जाता है?

उत्तर: उन लोगों के लिए छुटकारा (उद्धार) निश्चित रूप से लागू किया जाता है, और प्रभावशाली रीति से दिया जाता, जिनके लिए ख्रीष्ट ने इसकी कीमत चुकाई है; जिन्हें कि उचित समय पर पवित्र आत्मा के द्वारा ख्रीष्ट पर विश्वास लाने के लिए सुसमाचार के अनुसार योग्य बनाया जाता है।

इफिसियों 1:13 – 14; यूहन्ना 6:37, 39; यूहन्ना 10:15 – 16; इफिसियों 2:8; 2 कुरिन्थियों 4:13.

प्रश्न 60: जिन लोगों ने कभी भी सुसमाचार को नहीं सुना है, और इसलिए वे यीशु ख्रीष्ट को न तो जानते हैं, और न ही उस पर विश्वास करते हैं, क्या वे प्रकृति के प्रकाशन के अनुसार जीवन जीने से बचाए जा सकते हैं?

उत्तर: जिन लोगों ने कभी भी सुसमाचार को नहीं सुना, यीशु ख्रीष्ट को नहीं जाना, और उस पर विश्वास नहीं किया, वे बच नहीं सकते, चाहे वे अपने जीवन को प्रकृति के प्रकाशन के अनुसार, या उस धर्म के नियमों के अनुसार ढालने का कितना भी प्रयास करें, जिसे वे मानते हैं; ख्रीष्ट को छोड़कर, जो अपनी देह कलीसिया का एकमात्र उद्धारकर्ता है, किसी भी अन्य में उद्धार नहीं है।

रोमियों 10:14; 2 थिस्सलुनीकियों 1:8 – 9; इफिसियों 2:12; यूहन्ना 1:10 – 12; यूहन्ना 8:24; मरकुस 16:16; 1 कुरिन्थियों 1:20 – 24; यूहन्ना 4:22; रोमियों 9:31 – 32; फिलिप्पियों 3:4 – 9; प्रेरितों के काम 4:12; इफिसियों 5:23.

प्रश्न 61: क्या वे सभी बचाए गए हैं जो सुसमाचार को सुनते हैं और कलीसिया में सदस्य हैं?

उत्तर: वे सभी जो सुसमाचार सुनते हैं, और दृश्यमान कलीसिया के सदस्य हैं, बचाए नहीं गए हैं; बल्कि केवल वे बचाए गए हैं, जो अदृश्य कलीसिया के सच्चे सदस्य हैं।

यूहन्ना 12:38 – 40; रोमियों 9:6; मत्ती 22:14; मत्ती 7:21; रोमियों 11:7.

प्रश्न 62: दृश्यमान कलीसिया क्या है?

उत्तर: दृश्यमान कलीसिया एक ऐसा समुदाय है जो संसार के सभी युगों और स्थानों में रहने वाले ऐसे सभी लोगों से, और उनके बच्चों से मिलकर बना है जो सच्चे मसीही विश्वास का पालन करते हैं।

1 कुरिन्थियों 1:2; 1 कुरिन्थियों 12:13; रोमियों 15:9 – 12; प्रकाशितवाक्य 7:9; भजन संहिता 2:8; भजन संहिता 22:27 – 31; भजन संहिता 45:17; मत्ती 28:19 – 20; यशायाह 59:21; 1 कुरिन्थियों 7:14; प्रेरितों के काम 2:39; रोमियों 11:16; उत्पत्ति 17:7.

प्रश्न 63: दृश्यमान कलीसिया के विशेषाधिकार क्या हैं?

उत्तर: दृश्यमान कलीसिया के पास परमेश्वर के विशेष देखभाल और प्रशासन के अधीन होने का, सभी शत्रुओं के विरोध के बावजूद, सभी युगों में सुरक्षित एवं संरक्षित होने का, और संतो की संगति का आनन्द लेने का, उद्धार के सामान्य साधनों का, और सुसमाचार की सेवकाई में इसके सभी सदस्यों के लिए ख्रीष्ट द्वारा अनुग्रह की पेशकश का विशेषाधिकार हैं, जो इस बात की गवाही देते हैं, कि जो कोई उसके पास आता है, और उस पर विश्वास करता है, उनमें से किसी को भी छोड़ा नहीं जाएगा, बल्कि वे सब बचाए जाएँगे।

यशायाह 4:5 – 6; 1 तीमुथियुस 4:10; भजन संहिता 115:1 – 18; यशायाह 31:4 – 5; जकर्याह 12: 2 – 4, 8 – 9; प्रेरितों के काम 2:39, 42; भजन संहिता 147:19 – 20; रोमियों 9:4; इफिसियों 4:11 – 12; मरकुस 16:15 – 16; यूहन्ना 6:37.

प्रश्न 64: अदृश्य कलीसिया क्या है?

उत्तर: अदृश्य कलीसिया चुने हुए लोगों की पूर्ण संख्या है, जिन्हें प्रधान सिर ख्रीष्ट की अधीनता में एकत्रित किया गया है, एकत्रित किए जा रहे हैं, या एकत्रित किए जाएँगे।

इफिसियों 1:10, 22 – 23; यूहन्ना 10:16; यूहन्ना 11:52.

प्रश्न 65: अदृश्य कलीसिया के सदस्य ख्रीष्ट के द्वारा किन विशेष लाभों का आनन्द लेते हैं?
उत्तर: अदृश्य कलीसिया के सदस्य, ख्रीष्ट के द्वारा, अनुग्रह और महिमा में उसके साथ मेल और संगति का आनन्द लेते हैं।

यूहन्ना 17:21; इफिसियों 2:5 – 6; यूहन्ना 17:24.

प्रश्न 66: वह मिलन (union) क्या है जो चुने हुए लोगों का ख्रीष्ट के साथ है?
उत्तर: चुने हुए लोगों का ख्रीष्ट के साथ मिलन परमेश्वर के अनुग्रह का वह कार्य है, जिसके द्वारा वे आत्मिक और रहस्यमय रूप से, फिर भी वास्तव में और अविभाज्य रूप से, ख्रीष्ट के साथ अपने सिर और पति के रूप में जोड़े गए हैं; जिसको उनके प्रभावशाली बुलाहट (effectual calling) में कार्यान्वित किया जाता है।

इफिसियों 1:22; इफिसियों 2:6 – 8; 1 कुरिन्थियों 6:17; यूहन्ना 10:28; इफिसियों 5:23, 30; 1 पतरस 5:10; 1 कुरिन्थियों 1:9.

प्रश्न 67: प्रभावशाली बुलाहट क्या है?
उत्तर: प्रभावशाली बुलाहट परमेश्वर की सर्वशक्तिमान सामर्थ्य और अनुग्रह का वह कार्य है, जिसके द्वारा (अपने चुने हुए लोगों के प्रति अपने स्वतंत्र एवं विशेष प्रेम के कारण, और उनमें ऐसी किसी भी बात के कारण नहीं जो उसे उनकी ओर ले जाती है) वह, अपने स्वीकृत समय में, अपने वचन एवं आत्मा के द्वारा, उन्हें यीशु ख्रीष्ट के लिए आमंत्रित करता एवं उसकी ओर आकर्षित करता है; उन्हें उद्धार देते हुए उनके मनों को प्रबुद्ध करता है, उनकी इच्छाओं को नवीनीकृत और शक्तिशाली रूप से निर्धारित करता है, जिससे कि वे (भले ही वे स्वयं पाप में मृत हैं) इसके द्वारा स्वतंत्र रूप से उसकी बुलाहट का प्रत्युत्तर देने के लिए, और उसमें बताए गए और

प्रदान किए गए अनुग्रह को स्वीकार एवं अपनाने के लिए इच्छुक एवं योग्य बनाए जाते हैं।

यूहन्ना 5:25; इफिसियों 1:18 – 20; 2 तीमुथियुस 1:8 – 9; तीतुस 3:4 – 5; इफिसियों 2: 4 – 5, 7 – 9; रोमियों 9:11; 2 कुरिन्थियों 5:20; 2 कुरिन्थियों 6:1 – 2; यूहन्ना 6:44; 2 थिस्सलुनीकियों 2:13 – 14; प्रेरितों के काम 26:18; 1 कुरिन्थियों 2:10, 12; यहेजकेल 11:19; यहेजकेल 36:26 – 27; यूहन्ना 6:45; इफिसियों 2:5; फिलिप्पियों 2:13; व्यवस्थाविवरण 30:6.

प्रश्न 68: क्या केवल चुने हुए लोगों को प्रभावशाली रीति से बुलाया जाता है?

उत्तरः हाँ सभी चुने हुए लोगों को, और केवल उन्हें ही, प्रभावशाली रीति से बुलाया जाता है; हालाँकि, अन्य लोगों को, और प्रायः, वचन की सेवकाई के द्वारा बाहरी रीति से बुलाया जा सकता है, और उन पर पवित्र आत्मा के कुछ सामान्य कार्य हो सकते हैं; जो उन्हें प्रदान किए गए अनुग्रह के प्रति उनकी इच्छानुरूप उपेक्षा और अवमानना के कारण, उचित रूप से उनके अविश्वास में छोड़ दिए जाने के कारण, कभी भी वास्तव में यीशु ख्रीष्ट के पास नहीं आते हैं।

प्रेरितों के काम 13:48; मत्ती 22:14; मत्ती 7:22; मत्ती 13:20 – 21; इब्रानियों 6:4 – 6; यूहन्ना 12:38 – 40; प्रेरितों के काम 28:25 – 27; यूहन्ना 6:64 – 65; भजन संहिता 81:11 – 12.

प्रश्न 69: अदृश्य कलीसिया के सदस्यों का ख्रीष्ट के साथ अनुग्रह में सहभागिता क्या है?

उत्तरः अनुग्रह में सहभागिता, जो ख्रीष्ट के साथ अदृश्य कलीसिया के सदस्य के पास है, वह उसकी मध्यस्था के आधार पर उनके धर्मी ठहराए जाने, लेपालकपन में, पवित्रीकरण में, और उसके साथ उनके मिलन में, जो भी कुछ इस जीवन में प्रकट होता है, उसमें उनका भाग लेना है।

रोमियों 8:30; इफिसियों 1:5; 1 कुरिन्थियों 1:30.

प्रश्न 70: धर्मी ठहराया जाना (justification) क्या है?

उत्तर: धर्मी ठहराया जाना पापी मनुष्यों के लिए परमेश्वर के मुफ्त अनुग्रह का एक कार्य है, जिसमें वह उनके सभी पापों को क्षमा करता है, उनके व्यक्तित्व को अपनी दृष्टि में धर्मी स्वीकार करता एवं धर्मी ठहराता है। उनमें किए गए किसी भी कार्य, या उनके द्वारा किए गए किसी भी कार्य के लिए नहीं, बल्कि केवल ख्रीष्ट की सिद्ध आज्ञाकारिता एवं न्याय की पूर्ण संतुष्टि के कारण, जिसे परमेश्वर द्वारा उन पर अध्यारोपित (imputed) किया जाता है, और जिसे केवल विश्वास के द्वारा ग्रहण किया जाता है।

रोमियों 3:22, 24 – 25; रोमियों 4:5; 2 कुरिन्थियों 5:19, 21; रोमियों 3:22, 24 – 25, 27 – 28; तीतुस 3:5, 7; इफिसियों 1:7; रोमियों 5:17 – 19; रोमियों 4:6 – 8; प्रेरितों के काम 10:43; गलातियों 2:16; फिलिप्पियों 3:9.

प्रश्न 71: धर्मी ठहराया जाना किस प्रकार से परमेश्वर के सेंतमेंत अनुग्रह का एक कार्य है?

उत्तर: यद्यपि ख्रीष्ट ने, अपनी आज्ञाकारिता एवं मृत्यु के द्वारा, धर्मी ठहराए गए लोगों की ओर से परमेश्वर के न्याय हेतु औचित्यपूर्ण, वास्तविक और पूर्ण संतुष्टि प्रदान की है; फिर भी परमेश्वर जितनी भी जमानत को संतुष्टि से स्वीकार करता, जो वह उन लोगों से माँग सकता था, और उसने स्वयं यह जमानत प्रदान की है, जो कि उसका एकलौता पुत्र है, उसकी धार्मिकता को उन पर अध्यारोपित करके, और उनके धर्मी ठहराए जाने के लिए, उनसे विश्वास के अतिरिक्त कुछ भी नहीं माँगा, यह विश्वास भी उसका वरदान है, उनका धर्मी ठहराया जाना उनके लिए सेंतमेंत अनुग्रह का एक कार्य है।

रोमियों 5:8 – 10, 19; 1 तीमुथियुस 2:5 – 6; इब्रानियों 10:10; मत्ती 20:28; दानिय्येल 9:24, 26; यशायाह 53:4 – 6, 10 – 12; इब्रानियों 7:22; रोमियों 8:32; 1 पतरस 1:18 – 19; 2 कुरिन्थियों 5 :21; रोमियों 3:24 – 25; इफिसियों 2:8; इफिसियों 1:7,

प्रश्न 72: धर्मी ठहराने वाला विश्वास क्या है?

उत्तर: धर्मी ठहराने वाला विश्वास उद्धार देने वाला अनुग्रह है, जिसे परमेश्वर का आत्मा एवं उसका वचन, पापी मनुष्य के हृदय में सृजन करता है, जिसके द्वारा वह मनुष्य, अपने पाप एवं दुर्दशा से, और स्वयं से एवं अन्य सभी प्राणियों द्वारा, उसके पाप की दशा से उसे बाहर निकालने की अक्षमता के प्रति कायल होकर, वह न केवल सुसमाचार की प्रतिज्ञा की सच्चाई को स्वीकार करता है, बल्कि पापों की क्षमा और उद्धार के लिए परमेश्वर की दृष्टि में अपने व्यक्तित्व के धर्मी स्वीकार होने एवं ठहराए जाने के लिए, ख्रीष्ट को स्वीकार करता एवं उस पर भरोसा करता है।

इब्रानियों 10:39; 2 कुरिन्थियों 4:13; इफिसियों 1:17 – 19; रोमियों 10:14, 17; प्रेरितों के काम 2:37; प्रेरितों के काम 16:30; यूहन्ना 16:8 – 9; रोमियों 5:6; इफिसियों 2:1; प्रेरितों के काम 4:12; इफिसियों 1:13; यूहन्ना 1:12; प्रेरितों के काम 16:31; प्रेरितों के काम 10:43; फिलिप्पियों 3:9; प्रेरितों के काम 15:11.

प्रश्न 73: किस प्रकार से विश्वास, किसी पापी को परमेश्वर की दृष्टि में धर्मी ठहराता है?

उत्तर: विश्वास, किसी पापी को परमेश्वर की दृष्टि में धर्मी ठहराता है, उन अनुग्रहों के कारण नहीं जो सदैव उसके साथ होते हैं, न ही उन भले कामों के कारण जो उसके फल हैं, न ही इसलिए कि उसके धर्मी ठहराए जाने के लिए विश्वास का अनुग्रह, या अन्य कोई कार्य जो उस पर अध्यारोपित किया गया; परन्तु केवल इसलिए क्योंकि यह एक साधन है जिसके द्वारा वह ख्रीष्ट और उसकी धार्मिकता को ग्रहण करता है और लागू करता है।

गलातियों 3:11; रोमियों 3:28; रोमियों 4:5; रोमियों 10:10; यूहन्ना 1:12; फिलिप्पियों 3:9; गलातियों 2:16.

प्रश्न 74: लेपालकपन (adoption) क्या है?

उत्तर: लेपालकपन परमेश्वर के एकलौते पुत्र यीशु ख्रीष्ट में और उसी के लिए, परमेश्वर के सेंतमेंत अनुग्रह का एक कार्य है, जिसके द्वारा वे सब जो

धर्मी ठहराए जाते हैं, उसके सन्तानों में सम्मिलित कर ग्रहण किए जाते हैं, वह अपना नाम उन पर रखता है, उसके पुत्र का आत्मा उन्हें दिया जाता है, उसके पितृत्व वाली देखभाल और व्यवस्था के अधीन उन्हें रखा जाता है, परमेश्वर के पुत्रों की सभी सुविधाओं एवं विशेषाधिकारों में उन्हें स्वीकृत किया जाता है, सभी प्रतिज्ञाओं का उत्तराधिकारी, और महिमा में ख्रीष्ट के साथ संगी-उत्तराधिकारी उन्हें बनाया जाता है।

1 यूहन्ना 3:1; इफिसियों 1:5; गलातियों 4:4 – 5; यूहन्ना 1:12; 2 कुरिन्थियों 6:18; प्रकाशितवाक्य 3:12; गलातियों 4:6; भजन संहिता 103:13; नीतिवचन 14:26; मत्ती 6:32; इब्रानियों 6:12; रोमियों 8:17.

प्रश्न 75: पवित्रीकरण (sanctification) क्या है?

उत्तर: पवित्रीकरण परमेश्वर के अनुग्रह का एक कार्य है, जिसके द्वारा वे जिन्हें परमेश्वर ने जगत की उत्पत्ति से पहले पवित्र होने के लिए चुना है, उन्हें समय आने पर उसके आत्मा के सामर्थी कार्य के द्वारा, उन पर ख्रीष्ट की मृत्यु और पुनरुत्थान को लागू करके, उनके पूर्ण मनुष्यत्व को परमेश्वर स्वरूप में पुनः नया बनाया जाता है; उनके हृदयों में अनन्त जीवन के लिए मन-फिराव एवं अन्य सभी अनुग्रहों के बीजों को डालकर, और उन अनुग्रहों को इतना उभारा, बढ़ाया और शक्तिशाली बनाया जाता है, जिससे कि वे पाप के लिए अधिक से अधिक मरें और जीवन के नएपन की ओर बढ़ें।

इफिसियों 1:4; 1 कुरिन्थियों 6:11; 2 थिस्सलुनीकियों 2:13; रोमियों 6:4 – 6; इफिसियों 4:23 – 24; प्रेरितों के काम 11:18; 1 यूहन्ना 3:9; यहूदा 1:20; इब्रानियों 6:11 – 12; इफिसियों 3:16 – 19; कुलुस्सियों 1:10 – 11; रोमियों 6:4, 6, 14; गलातियों 5:24.

प्रश्न 76: अनन्त जीवन के लिए मन-फिराव क्या है?

उत्तर: अनन्त जीवन के लिए मन-फिराव, बचाने वाला अनुग्रह है, जिसे पापी मनुष्य के हृदय में परमेश्वर के आत्मा और वचन के द्वारा उत्पन्न किया जाता है, जिसके द्वारा दृष्टि एवं समझ के कारण, न केवल खतरे के डर से,

बल्कि अपने पापों की मलिनता और घिनौनेपन से भी, और ऐसे मन फिराने वालों के लिए ख्रीष्ट में परमेश्वर की दया की समझ पर, वह अपने पापों के लिए इतना दुःखी होता है, और उनसे इतनी घृणा करता है, जिसके कारण वह उन सब से मुड़ कर परमेश्वर के पास आता है, और नई आज्ञाकारिता के सभी मार्गों में उसके साथ चलने की निरन्तर इच्छा एवं प्रयास करता है।

2 तीमुथियुस 2:25; जकर्याह 12:10; प्रेरितों के काम 11:18, 20 – 21; यहेजकेल 18:28, 30, 32; लूका 15:17 – 18; होशे 2:6 – 7; यहेजकेल 36:31; यशायाह 30:22; योएल 2:12 – 13; यिर्मयाह 31:18 – 19; 2 कुरिन्थियों 7:11; प्रेरितों के काम 26:18; यहेजकेल 14:6; 1 राजा 8:47 – 48; भजन संहित 119:6, 59, 128; लूका 1:6; 2 राजा 23:25.

प्रश्न 77: किस बात में धर्मी ठहराए जाने (धर्मीकरण Justification) और पवित्रीकरण में अंतर है?

उत्तर: हालाँकि पवित्रीकरण अविभाज्य रूप से धर्मी ठहराए जाने के साथ जुड़ा हुआ है, फिर भी वे इस बात में वे भिन्न हैं, कि धर्मी ठहराए जाने में परमेश्वर, ख्रीष्ट की धार्मिकता को अध्यारोपित करता है; पवित्रीकरण में उसका आत्मा अनुग्रह उँडेलता है, और इसका अभ्यास करने में सक्षम बनाता है; पहले वाले में, पाप क्षमा किया जाता है; दूसरे में, पाप को वश में किया जाता है; पहले वाला सभी विश्वासियों को बदला लेने वाले परमेश्वर के क्रोध से समान रूप से मुक्त करता है, और कि इस जीवन में सिद्धता से, वे कभी भी दोषी नहीं ठहराए जाते हैं; दूसरा वाला सभी विश्वासियों में न तो समान है, और न ही इस जीवन में किसी में सिद्ध है, परन्तु सिद्धता की ओर बढ़ता है।

1 कुरिन्थियों 6:11; 1 कुरिन्थियों 1:30; रोमियों 4:6, 8; यहेजकेल 36:27; रोमियों 3:24 – 25; रोमियों 6:6, 14; रोमियों 8:33 – 34; 1 यूहन्ना 2:12 - 14; इब्रानियों 5:12 – 14; 1 यूहन्ना 1:8, 10; 2 कुरिन्थियों 7:1; फिलिप्पियों 3:12 – 14.

प्रश्न 78: विश्वासियों में पवित्रीकरण की असिद्धता कहाँ से उत्पन्न होती है?

उत्तर: विश्वासियों में पवित्रीकरण की असिद्धता उनके हर भाग में मौजूद पाप के अवशेषों एवं आत्मा के विरुद्ध शरीर की सतत लालसाओं से उत्पन्न होती है; जिसके द्वारा वे प्रायः परीक्षाओं में विफल हो जाते हैं, और कई पापों में गिर जाते हैं, उनकी सभी आत्मिक सेवाओं में बाधा आती है, और उनके सर्वोत्तम कार्य परमेश्वर की दृष्टि में अपूर्ण और अपवित्र हो जाते हैं।

रोमियों 7:18, 23; मरकुस 14:66 – 72; गलातियों 2:11 – 12; इब्रानियों 12:1; यशायाह 64:6; निर्गमन 28:38.

प्रश्न 79: क्या सच्चे विश्वासी, अपनी अपूर्णताओं, और उन अनेक परीक्षाओं और पापों के कारण जो उन पर हावी हो जाते हैं, अनुग्रह की अवस्था से दूर नहीं हो सकते?

उत्तर: सच्चे विश्वासी, परमेश्वर के अपरिवर्तनीय प्रेम, और उन्हें दृढ़ रखने के लिए उसके विधान और वाचा, ख्रीष्ट के साथ उनके अविभाज्य मिलन, उनके लिए उसकी निरन्तर प्रार्थना, और उनमें वास करने वाले परमेश्वर के आत्मा और बीज के कारण, न तो पूर्ण रूप से और न ही निर्णायक रूप से अनुग्रह की अवस्था से दूर हो सकते हैं, बल्कि उद्धार के लिए विश्वास के माध्यम से परमेश्वर के सामर्थ्य के द्वारा बचा कर रखे जाते हैं।

यिर्मयाह 31:3; 2 तीमुथियुस 2:19; इब्रानियों 13:20 – 21; 2 शमूएल 23:5; 1 कुरिन्थियों 1:8 – 9; इब्रानियों 7:25; लूका 22:32; 1 यूहन्ना 3:9; 1 यूहन्ना 2:27; यिर्मयाह 32:40; यूहन्ना 10:28; 1 पतरस 1:5.

प्रश्न 80: क्या सच्चे विश्वासियों को अचूक रीति से आश्वस्त किया जा सकता है कि वे अनुग्रह की अवस्था में हैं, और कि वे उद्धार तक इसमें अंत तक दृढ़ता से बने रहेंगे?

उत्तर: जो लोग वास्तव में ख्रीष्ट पर विश्वास करते हैं, और उसके सामने पूर्ण भले विवेक में चलने का प्रयास करते हैं, बिना असाधारण प्रकाशन के,

परमेश्वर की प्रतिज्ञाओं की सच्चाई पर आधारित विश्वास के द्वारा, और उनमें आत्मा द्वारा उन्हें उन अनुग्रहों को समझने में सक्षम बनाया जाता है जिनके लिए जीवन की प्रतिज्ञाएं की जाती हैं, और उनकी आत्माओं के साथ गवाही देते हुए कि वे परमेश्वर की बच्चे हैं, उन्हें अचूक रीति से आश्वस्त किया जा सकता है कि वे अनुग्रह की अवस्था में हैं और उद्धार तक इसमें अंत तक दृढ़ता से बने रहेंगे।

1 यूहन्ना 2:3; 1 कुरिन्थियों 2:12; 1 यूहन्ना 3:14, 18 – 19, 21, 24; 1 यूहन्ना 4:13, 16; इब्रानियों 6:11 – 12; रोमियों 8:16; 1 यूहन्ना 5:13.

प्रश्न 81: क्या सभी सच्चे विश्वासी वर्तमान में अनुग्रह की अवस्था में होने, और कि वे बचाए जाएंगे, इसके विषय में हर समय आश्वस्त हैं?

उत्तर: अनुग्रह और उद्धार का आश्वासन विश्वास का सार नहीं होने के कारण, सच्चे विश्वासियों को इसे प्राप्त करने से पहले लम्बी प्रतीक्षा करनी पड़ सकती है; और इसका आनन्द लेने के बाद, कई प्रकार के कष्टों, पापों, प्रलोभनों और परित्यागों के द्वारा यह कमजोर और बाधित हो सकता है; फिर भी वे कभी भी परमेश्वर के आत्मा की ऐसी उपस्थिति और सहायता के बिना छोड़े नहीं जाते हैं, जो उन्हें अत्यधिक निराशा में डूबने से बचाता है।

इफिसियों 1:13; यशायाह 1:10; भजन संहिता 88:1 – 18; भजन संहिता 77:1 – 12; श्रेष्ठगीत 5:2 – 3, 6; भजन संहिता 51:8, 12; भजन संहिता 31:22; भजन संहिता 22:1; 1 यूहन्ना 3:9; अय्यूब 13:15; भजन संहिता 73:15, 23; यशायाह 54:7 – 10.

प्रश्न 82: महिमा में वह संगति क्या है, जो अदृश्य कलीसिया के सदस्यों की ख्रीष्ट के साथ है?

उत्तर: महिमा में वह संगति जो अदृश्य कलीसिया के सदस्यों की ख्रीष्ट के साथ है, वह इस जीवन में, मृत्यु के तुरन्त बाद, और अन्त में पुनरुत्थान और न्याय के दिन में सिद्ध बनाए जाने में है।

2 कुरिन्थियों 3:18; लूका 23:43; 1 थिस्सलुनीकियों 4:17.

प्रश्न 83: ख्रीष्ट के साथ महिमा में वह संगति क्या है जिसका आनन्द अदृश्य कलीसिया के सदस्य इस जीवन में लेते हैं?

उत्तर: अदृश्य कलीसिया के सदस्यों को इस जीवन में ख्रीष्ट के साथ महिमा के प्रथम-फल सौंपे गए हैं, क्योंकि वे उसके सदस्य हैं जो उनका सिर है, और इसलिए उस महिमा में संबद्ध हैं जिससे वह पूर्ण रूप से युक्त है; और इसके बयाना के रूप में, परमेश्वर के प्रेम, अंतरात्मा की शांति, पवित्र आत्मा में आनन्द, और महिमा की आशा के भाव का आनन्द लेते हैं; इसके विपरीत, परमेश्वर का बदला लेने वाला क्रोध, अंतरात्मा का भय, और न्याय की भयावह अपेक्षा दुष्टों के लिए उनके पीड़ाओं का आरम्भ है, जिसे वे मृत्यु के बाद भोगेंगे।

इफिसियों 2:6; रोमियों 5:5; के साथ 2 कुरिन्थियों 1:22; रोमियों 5:1 – 2; रोमियों 14:17; उत्पत्ति 4:13; मत्ती 27:4; इब्रानियों 10:27; रोमियों 2:9; मरकुस 9:44.

प्रश्न 84: क्या सब लोग मरेंगे?

उत्तर: पाप की मजदूरी के रूप में मृत्यु की चेतावनी दी गई है, इसलिए सभी मनुष्यों के लिए एक बार मरना ठहराया गया है; क्योंकि सब ने पाप किया है।

रोमियों 6:23; इब्रानियों 9:27; रोमियों 5:12.

प्रश्न 85: मृत्यु, क्योंकि पाप की मजदूरी है, तो धर्मियों को मृत्यु से क्यों नहीं बचाया जाता है, जबकि उनके सभी पाप ख्रीष्ट में क्षमा कर दिए गए हैं?

उत्तर: धर्मी लोगों को अन्तिम दिन स्वयं मृत्यु से बचाया जाएगा, और मृत्यु में भी उसके ढंक और अभिशाप से बचाया जाता है, ताकि, यद्यपि वे मरते हैं, फिर भी यह परमेश्वर के प्रेम के कारण है, ताकि उन्हें पाप और कष्ट से

पूर्ण रूप से मुक्त किया जाए, और उन्हें महिमा में ख्रीष्ट के साथ आगे संगति के योग्य बनाया जाए, जिसमें वे फिर प्रवेश करते हैं।

1 कुरिन्थियों 15:26, 55 – 57; इब्रानियों 2:15; यशायाह 57:1 – 2; 2 राजा 22:20; प्रकाशितवाक्य 14:13; इफिसियों 5:27; लूका 23:43; फिलिप्पियों 1:23.

प्रश्न 86: ख्रीष्ट के साथ महिमा में वह संगति क्या है, जिसका आनन्द अदृश्य कलीसिया के सदस्य मृत्यु के तुरन्त बाद लेते हैं?

उत्तर: ख्रीष्ट के साथ महिमा में जिस संगति का आनन्द अदृश्य कलीसिया के सदस्य मृत्यु के तुरन्त बाद लेते हैं, वह है, कि उनके प्राण पवित्रता में सिद्ध बनाए जाते हैं और स्वर्गीय स्थानों में ग्रहण किए जाते हैं, जहाँ वे अपने शरीरों के पूर्ण छुटकारे की प्रतीक्षा करते हुए ज्योति और महिमा में परमेश्वर के मुख को निहारते हैं; जो कि मृत्यु में भी ख्रीष्ट से जुड़े होना जारी रखते हैं, और अपनी कब्र में उस दिन तक ऐसे सोते हैं, जैसे कि अपने बिस्तर पर, जब तक कि अन्तिम दिन में वे अपने प्राणों के साथ फिर से एक नहीं हो जाते हैं। जबकि दुष्ट लोगों के प्राण उनकी मृत्यु के समय नरक में डाल दिए जाते हैं, जहाँ वे पीड़ा और घोर अन्धकार में रहते हैं और उनके शरीर पुनरुत्थान एवं न्याय के महान दिन तक कब्र में ऐसे पड़े होते हैं, जैसे अपने जेलों में पड़े हों।

इब्रानियों 12:23; 2 कुरिन्थियों 5:1, 6, 8; फिलिप्पियों 1:23; प्रेरितों के काम 3:21; इफिसियों 4:10; 1 यूहन्ना 3:2; 1 कुरिन्थियों 13:12; रोमियों 8:23. भजन संहिता 16:9; 1 थिस्सलुनीकियों 4:14; यशायाह 57:2; अय्यूब 19:26 - 27; लूका 16:23 - 24; प्रेरितों के काम 1:25; यहूदा 1:6 – 7.

प्रश्न 87: पुनरुत्थान के सम्बन्ध में हमें क्या विश्वास करना है?

उत्तर: हमें विश्वास करना है, कि अन्तिम दिन धर्मी एवं अधर्मी दोनों का, मृतकों में से सार्वजनिक पुनरुत्थान होगा; जबकि वे जो तब जीवित पाए जाएंगे, वे एक ही क्षण में बदल दिए जाएंगे; और मृतकों के वही शरीर जो कब्र में रखे गए हैं, उस समय सर्वदा के लिए उनके प्राणों से फिर जोड़े

जाएंगे, एवं ख्रीष्ट की सामर्थ्य के द्वारा पुनर्जीवित किए जाएंगे। धर्मी लोगों के शरीर, ख्रीष्ट के आत्मा के द्वारा, और उनके प्रधान (सिर) के रूप में उसके पुनरुत्थान के आधार पर, सामर्थ्य, आत्मिक, अविनाशी दशा में पुनर्जीवित किए जाएंगे, और उसके महिमामय शरीर के समान बनाए जाएंगे; और दुष्टों के शरीर उसके द्वारा क्रोधित न्यायी के समान अनादर के लिए पुनर्जीवित किए जाएंगे।

प्रेरितों के काम 24:15; 1 कुरिन्थियों 15:51 – 53; 1 थिस्सलुनीकियों 4:15 – 17; यूहन्ना 5:28 – 29; 1 कुरिन्थियों 15:21 – 23, 42 – 44; फिलिप्पियों 3:21; यूहन्ना 5:27 – 29; मत्ती 25:33.

प्रश्न 88: पुनरुत्थान के तुरन्त पश्चात् क्या होगा?

उत्तर: पुनरुत्थान के तुरन्त पश्चात् स्वर्गदूतों और मनुष्यों का सार्वजनिक एवं अन्तिम न्याय होगा; उस दिन और घड़ी के विषय में कोई मनुष्य नहीं जानता है, ताकि सब जागते रहें और प्रार्थना करें, और प्रभु के आगमन के लिए सर्वदा तैयार रहें।

2 पतरस 2:4; यहूदा 1:6 – 7, 14 – 15; मत्ती 25:46; मत्ती 24:36, 42, 44; लूका 21:35 – 36.

प्रश्न 89: न्याय के दिन दुष्टों के साथ क्या किया जाएगा?

उत्तर: न्याय के दिन, दुष्टों को ख्रीष्ट के बांए हाथ पर खड़ा किया जाएगा, और, उनके विवेक के स्पष्ट साक्ष्य एवं पूर्ण दोषसिद्धि पर, उनके विरुद्ध दंड की भयावह लेकिन उचित सज़ा सुनाई जाएगी; और इसके परिणामस्वरूप उन्हें परमेश्वर के अनुग्रहकारी उपस्थिति से, और ख्रीष्ट, उसके संतों, और उसके सभी पवित्र स्वर्गदूतों के साथ महिमामय संगति से बाहर कर नरक में डाल दिया जाएगा, जहाँ वे शैतान और उसके दुष्टात्माओं के साथ शरीर और प्राण दोनों की अकथनीय पीड़ाओं से सर्वदा के लिए दंडित किए जाएंगे।

मत्ती 25:33; रोमियों 2:15 – 16; मत्ती 25:41 – 43; लूका 16:26; 2 थिस्सलुनिकियों 1:8 –

प्रश्न 90: न्याय के दिन धर्मियों के संग क्या किया जाएगा?
उत्तर: न्याय के दिन, धर्मी लोग, ख्रीष्ट के साथ बादलों में उठा लिए जाने के कारण, उसके दाहिने हाथ पर खड़े किए जाएंगे, और सब के सामने स्वीकार किए एवं दोषमुक्त करार दिए जाएंगे, ख्रीष्ट के साथ दुष्ट स्वर्गदूतों एवं मनुष्यों का न्याय करने में ख्रीष्ट के साथ जुड़ेंगे, और स्वर्ग में ग्रहण किए जाएंगे, जहाँ पर वे सभी पाप और दुःखों से पूर्ण रूप से एवं सर्वदा के लिए मुक्त किए जाएंगे; अनन्त काल तक, असंख्य संतों और पवित्र स्वर्गदूतों की संगति में, लेकिन विशेष रूप से हमारे प्रभु यीशु ख्रीष्ट के परम पिता परमेश्वर के तत्काल दर्शन एवं सुखद अनुभव में अकल्पनीय आनन्द से भरपूर, शरीर एवं प्राण दोनों में पूर्ण रूप से पवित्र बनाए एवं आनन्दित किए जाएंगे। और यही वह सिद्ध एवं पूर्ण संगति है, जिसका आनन्द अदृश्य कलीसिया के सदस्य पुनरुत्थान एवं न्याय के दिन, महिमा में ख्रीष्ट के साथ लेंगे।

1 थिस्सलुनीकियों 4:17; मत्ती 25:33; मत्ती 10:32; 1 कुरिन्थियों 6:2 – 3; मत्ती 25:34, 46; इफिसियों 5:27; प्रकाशितवाक्य 14:13; भजन संहिता 16:11; इब्रानियों 12:22 – 23; 1 यूहन्ना 3:2; 1 कुरिन्थियों 13:12; 1 थिस्सलुनीकियों 4:17 – 18.

यह देख लेने के पश्चात् कि पवित्रशास्त्र (बाइबल) मुख्य रूप से हमें सिखाता है कि परमेश्वर के विषय में क्या विश्वास करना है, अगला, यह इस बात पर विचार करने के लिए आगे बढ़ता है कि वे क्या अपेक्षा करते हैं।

1. मनुष्य का कर्तव्य

प्रश्न 91: वह कौन सा कर्तव्य है जिसे परमेश्वर मनुष्य से चाहता है?
उत्तर: उसकी प्रकट इच्छा के प्रति आज्ञाकारिता, वह कर्तव्य है, जिसे परमेश्वर मनुष्य से चाहता है।

रोमियों 12:1 – 2; मीका 6:8; 1 शमूएल 15:22.

प्रश्न 92: परमेश्वर ने मनुष्य के लिए उसकी आज्ञाकारिता के नियम के रूप में सबसे पहले क्या प्रकट किया?
उत्तर: आज्ञाकारिता का वह नियम, जिसे आदम के निर्दोष अवस्था में, और उसमें समस्त मानव जाति के लिए प्रकट किया गया था, वह भले एवं बुरे के ज्ञान के वृक्ष के फल को न खाने की विशेष आज्ञा के अतिरिक्त, नैतिक व्यवस्था थी।

उत्पत्ति 1:26 – 27; रोमियों 2:14 – 15; रोमियों 10:5; उत्पत्ति 2:17.

प्रश्न 93: नैतिक व्यवस्था क्या है?
उत्तर: नैतिक व्यवस्था मानव जाति के लिए परमेश्वर की इच्छा की घोषणा है, जो प्रत्येक मनुष्य को सम्पूर्ण व्यक्ति के ढांचे और स्वभाव, प्राण एवं शरीर में, और पवित्रता एवं धार्मिकता के उन सभी कर्तव्यों के निर्वहन में, जिन्हें उसे परमेश्वर और मनुष्य के प्रति करना है, इनमें व्यक्तिगत, सिद्ध और सतत अनुरूपता एवं आज्ञाकारिता के लिए निर्देशित और बाध्य करता है: जिसमें आज्ञापालन करने पर जीवन की प्रतिज्ञा करना, और आज्ञा उल्लंघन पर मृत्यु की चेतावनी देना है।

व्यवस्थाविवरण 5:1 – 3, 31, 33; लूका 10:26 – 27; गलातियों 3:10; 1 थिस्सलुनीकियों 5:23; लूका 1:75; प्रेरितों के काम 24:16; रोमियों 10:5; गलातियों 3:10, 12.

प्रश्न 94: क्या पाप में गिरने के पश्चात् मनुष्य के लिए नैतिक व्यवस्था का कोई उपयोग है?
उत्तर: यद्यपि पाप में गिरने के पश्चात् से, कोई भी मनुष्य नैतिक व्यवस्था के द्वारा धार्मिकता एवं जीवन को प्राप्त नहीं कर सकता है; फिर भी इसका बहुत बड़ा उपयोग है, साथ में यह सभी मनुष्य के लिए समान है, यह पुनर्जीवित नहीं हुए या पुनर्जीवित हुए लोगों के लिए अति विशिष्ट है।

रोमियों 8:3; गलातियों 2:16; 1 तीमुथियुस 1:8.

प्रश्न 95: नैतिक व्यवस्था सभी मनुष्यों के लिए किस उपयोग की है?
उत्तर: परमेश्वर के पवित्र स्वभाव एवं इच्छा, और उनके कर्तव्य के विषय में सूचित करने, और उनके अनुसार चलने के लिए बाध्य करने हेतु; उन्हें इसके आज्ञापालन में उनकी अक्षमता के विषय में, और उनके स्वभाव, हृदयों और जीवनों के पापमय प्रदूषण के विषय में कायल करने के लिए; उनके पाप और दुःख के बोध में उन्हें नम्र बनाने के लिए, और इस प्रकार ख्रीष्ट की उनकी आवश्यकता, और उसकी आज्ञाकारिता की सिद्धता को स्पष्ट रूप से देखने में उनकी सहायता करने के लिए नैतिक व्यवस्था सभी मनुष्यों के लिए उपयोगी है।

लैव्यव्यवस्था 11:44 – 45; लैव्यव्यवस्था 20:7 – 8; रोमियों 7:12; मीका 6:8; याकूब 2:10 – 11; भजन संहिता 19:11 – 12; रोमियों 3:20; रोमियों 7:7; रोमियों 3:9, 23; गलातियों 3:21 – 22; रोमियों 10:4.

प्रश्न 96: पुनर्जीवित नहीं हुए मनुष्यों के लिए नैतिक व्यवस्था का विशेष उपयोग क्या है?
उत्तर: पुनर्जीवित नहीं हुए मनुष्यों के लिए नैतिक व्यवस्था का विशेष उपयोग, उन्हें आने वाले क्रोध से बचने हेतु उनके विवेक को जगाने, और उन्हें ख्रीष्ट की ओर ले जाने के लिए है; या, उनके पाप की दशा और मार्ग में बने रहने पर, उन्हें निरुत्तर करने, और इस कारण से अभिशाप के अधीन छोड़ दिए जाने के लिए है।

1 तीमुथियुस 1:9 – 10; गलातियों 3:24; रोमियों 1:20; रोमियों 2:15; गलातियों 3:10.

प्रश्न 97: पुनर्जीवित हुए मनुष्यों के लिए नैतिक व्यवस्था का विशेष उपयोग क्या है?
उत्तर: यद्यपि वे जो पुनर्जीवित हैं, और ख्रीष्ट पर विश्वास करते हैं, उन्हें कार्यों की वाचा के रूप में नैतिक व्यवस्था से मुक्त किया गया है, ताकि

उसके द्वारा न तो वे धर्मी ठहराए जाते हैं और न ही दोषी ठहराए जाते हैं: फिर भी, सभी मनुष्यों के साथ इसके सामान्य उपयोग के अतिरिक्त, उन्हें यह दिखाने के लिए इसका विशेष उपयोग है कि, ख्रीष्ट द्वारा इसको पूरा किए जाने, और उनके स्थान पर और उनके भले के लिए इसके अभिशाप को सहने के कारण वे उससे कितना बंधे हुए है; और इस प्रकार उन्हें और अधिक कृतज्ञता के लिए उकसाने हेतु, और अपनी आज्ञाकारिता के नियम के अनुरूप स्वयं को ढालने के लिए उनकी अधिक सावधानी में इसे व्यक्त करने के लिए नैतिक व्यवस्था का विशेष उपयोग है।

रोमियों 6:14; रोमियों 7:4, 6; गलातियों 4:4 – 5; रोमियों 3:20; गलातियों 5:23; रोमियों 8:1; रोमियों 7:24 – 25; गलातियों 3:13 – 14; रोमियों 8:3 – 4; लूका 1:68 – 69, 74 – 75; कुलुस्सियों 1:12 – 14; रोमियों 7:22; रोमियों 12:2; तीतुस 2:11 – 14.

प्रश्न 98: नैतिक व्यवस्था को संक्षेप में कहाँ समझा गया है?

उत्तर: नैतिक व्यवस्था को संक्षेप में दस आज्ञाओं में समझा गया है, जिनको सिनै पर्वत पर परमेश्वर की वाणी द्वारा दिया गया था, और उसके द्वारा पत्थर की दो पट्टियों में लिखा गया था; और निर्गमन के बीसवें अध्याय में यह वर्णित है। पहली चार आज्ञाओं में परमेश्वर के प्रति हमारे कर्तव्य, और अन्य छह में मनुष्य के प्रति हमारे कर्तव्य समाहित हैं।

व्यवस्थाविवरण 10:4; निर्गमन 34:1 – 4; मत्ती 22:37 – 40.

प्रश्न 99: दस आज्ञाओं की सही समझ के लिए किन नियमों का पालन करना चाहिए?

उत्तर: दस आज्ञाओं की सही समझ के लिए निम्नलिखित नियमों का पालन करना चाहिए:

1. कि व्यवस्था खरी है, और हर एक मनुष्य को उसके सम्पूर्ण व्यक्ति में धार्मिकता हेतु उसके लिए पूर्ण अनुरूपता के लिए, और सर्वदा के लिए सम्पूर्ण आज्ञाकारिता के लिए बाँधती है; जिससे कि

प्रत्येक कर्तव्य का पूर्ण सिद्धता की माँग करने के लिए, और प्रत्येक पाप को न्यूनतम स्तर तक रोकने के लिए।

2. कि यह आत्मिक है, और इसलिए समझ, इच्छा एवं भावनाओं, एवं प्राण के अन्य सभी शक्तियों तक पहुँचता है; साथ में वचनों, कार्यों और हाव-भाव तक भी।
3. कि एक और एक ही बात, विभिन्न पहलुओं में, कई आज्ञाओं में या तो अपेक्षित की गई है या निषिद्ध की गई है।
4. अर्थात, जहाँ पर कर्तव्य की आज्ञा दी गई है, वहाँ उसके विपरीत पाप को निषिद्ध किया गया है; और, जहाँ पाप को निषिद्ध किया गया है, वहाँ विपरीत कर्तव्य की आज्ञा दी गई है: इसलिए जहाँ प्रतिज्ञा संलग्न है, वहाँ विपरीत चेतावनी सम्मिलित की गई है; और, जहाँ चेतावनी संलग्न है, वहाँ विपरीत प्रतिज्ञा सम्मिलित की गई है।
5. कि जिस बात को परमेश्वर निषिद्ध करता है, उसे कभी भी नहीं करना है; जिस बात की वह आज्ञा देता है, वही सदैव हमारा कर्तव्य है; और फिर भी प्रत्येक विशेष कर्तव्य को हर समय नहीं किया जाना चाहिए।
6. कि वह जो एक पाप या कर्तव्य के अंतर्गत आते हैं, उस प्रकार के सभी कार्यों को निषिद्ध किया गया है या आज्ञा दी गई है; साथ में सभी कारणों, साधनों, अवसरों, और उसके प्रकटन, और उसके उकसावों के साथ।
7. कि जो बात हमारे लिए निषिद्ध या आज्ञा दी गई है, हम अपने स्थानों के अनुसार यह प्रयास करने के लिए बाध्य हैं कि इसे अन्य लोगों द्वारा उनके स्थानों के कर्तव्य के अनुसार बचा जा सके या पालन किया जा सके।
8. कि जिन बातों में अन्य लोगों को आज्ञा दी गई है, उनमें हम अपने स्थान एवं बुलाहट के अनुसार, उनकी सहायता करने के लिए बाध्य हैं; और जिन बातों में उन्हें निषिद्ध किया गया है उसमें अन्य लोगों के साथ भाग लेने में सावधान रहें।

भजन संहिता 19:7; याकूब 2:10; मत्ती 5:21 – 22; रोमियों 7:14; व्यवस्थाविवरण 6:5; मत्ती 22:37 – 39; मत्ती 5:27 – 28, 33 – 34, 37 – 39, 43 – 44; कुलुस्सियों 3:5; आमोस 8:5; नीतिवचन 1:19; 1 तीमुथियुस 6:10; यशायाह 58:13; व्यवस्थाविवरण 6:13; मत्ती 4:9 – 10; मत्ती 15:4 – 6; मत्ती 5:21 – 24; इफिसियों 4:28; निर्गमन 20:12; नीतिवचन 30:17; यिर्मयाह 18:7 – 8; निर्गमन 20:7; भजन संहिता 15:1, 4 – 5; भजन संहिता 24:4 – 5; अय्यूब 13:7 – 8; रोमियों 3:8; अय्यूब 36:21; इब्रानियों 11:25; व्यवस्थाविवरण 4:8 – 9; मत्ती 12:7; मत्ती 5:21 – 22, 27 – 28; मत्ती 15:4 – 6; इब्रानियों 10:24 – 25; 1 थिस्सलुनीकियों 5:22; यहूदा 1:23; गलातियों 5:26; कुलुस्सियों 3:21; निर्गमन 20:10; लैव्यव्यवस्था 19:17; उत्पत्ति 18:19; यहोशू 24:15; व्यवस्थाविवरण 6:6 – 7; 2 कुरिन्थियों 1:24; 1 तीमुथियुस 5:22; इफिसियों 5:11.

प्रश्न 100: दस आज्ञाओं में हमें किन विशेष बातों पर विचार करना चाहिए?

उत्तर: दस आज्ञाओं में हमें प्रस्तावना पर, स्वयं आज्ञाओं के सार और उनमें से कुछ के साथ जुड़े कई कारणों पर विचार करना चाहिए, ताकि उन्हें अधिक से अधिक लागू किया जा सके।

प्रश्न 101: दस आज्ञाओं की प्रस्तावना क्या है?

उत्तर: दस आज्ञाओं की प्रस्तावना इन वचनों में निहित है, मैं तेरा परमेश्वर यहोवा हूँ, जो तुझे मिस्र देश से, अर्थात दासत्व के घर से निकाल ले आया। यहाँ परमेश्वर, यहोवा होने के नाते, अपनी सम्प्रभुता को अनन्त, अपरिवर्तनीय, और सर्वशक्तिमान परमेश्वर के रूप में प्रकट करता है; जो स्वयं अपने में और स्वयं के द्वारा अस्तित्व रखता है, और अपने सभी वचनों एवं कार्यों को अस्तित्व प्रदान करता है: और जैसे वह प्राचीन काल के इस्राएल के साथ वाचा में परमेश्वर है, इसी रीति से वह अपने सभी लोगों के साथ वाचा में बंधा हुआ है; जिस प्रकार से वह मिस्र में उनके दासत्व से उन्हें छुड़ा लाया, उसी रीति से वह हमें हमारे आत्मिक दासत्व से भी छुड़ाता है: और इस कारण से हम केवल उसे ही अपना परमेश्वर मानने, और उसकी सभी आज्ञाओं का पालन करने के लिए बाध्य हैं।

निर्गमन 20:2; यशायाह 44:6; निर्गमन 3:14; निर्गमन 6:3; प्रेरितों के काम 17:24, 28; उत्पत्ति 17:7; रोमियों 3:29; लूका 1:74 – 75; 1पतरस 1:15 – 18; लैव्यव्यवस्था 18:30;

लैव्यव्यवस्था 19:37.

प्रश्न 102: उन पहली चार आज्ञाओं का सार क्या है जिनमें परमेश्वर के प्रति हमारा कर्तव्य निहित है?

उत्तर: उन पहली चार आज्ञाओं का सार जिनमें परमेश्वर के प्रति हमारा कर्तव्य निहित है, यह है कि, प्रभु अपने परमेश्वर से हम अपने सारे मन और अपने सारे प्राण और अपनी सारी शक्ति और अपनी सारी बुद्धि के साथ प्रेम रखें।

लूका 10:27.

प्रश्न 103: पहली आज्ञा कौन सी है?

उत्तर: पहली आज्ञा यह है, कि, तू मुझे छोड़ दूसरों को ईश्वर करके न मानना।

निर्गमन 20:3.

प्रश्न 104: पहली आज्ञा में अपेक्षित कर्तव्य क्या हैं?

उत्तर: पहली आज्ञा में अपेक्षित कर्तव्य हैं, कि परमेश्वर को एकमात्र सच्चा परमेश्वर और हमारा परमेश्वर करके जानना और मानना; और इसी के अनुसार सोच-विचार करके, ध्यान-मनन करके, स्मरण करके, प्रशंसा करके, आदर करके, श्रद्धा-भक्ति से, अंगीकार करके, प्रेम करके, इच्छा करके, उसका भय मान करके उसकी आराधना एवं महिमा करना; उस पर विश्वास करना; उस पर भरोसा करना, आशा करना, प्रसन्न होना, आनन्दित होना; उसे पुकारना; उसे सम्पूर्ण मनुष्यत्व में सारी प्रशंसा और धन्यवाद देना, और सारी आज्ञाकारिता एवं समर्पण करना; सभी बातों में उसे प्रसन्न करने के लिए सावधान रहना, और जब उसे किसी बात में ठेस पहुँचे तो दुःखी होना; और उसके साथ नम्रता से चलना।

1 इतिहास 28:9; व्यवस्थाविवरण 26:17; यशायाह 43:10; यिर्मयाह 14:22; भजन संहिता

95:6 – 7; मत्ती 4:10; भजन संहिता 29:2; मलाकी 3:16; भजन संहिता 63:6; सभोपदेशक 12:1; भजन संहिता 71:19; मलाकी 1:6; यशायाह 45:23; यहोशू 24:15, 22; व्यवस्थाविवरण 6:5; भजन संहिता 123:25; यशायाह 8:13; निर्गमन 14:31; यशायाह 26:4; भजन संहिता 130:7; भजन संहिता 37:4; भजन संहिता 32:11; रोमियों 12:11; गिनती 25:11; फिलिप्पियों 4:6; यिर्मयाह 7:23; याकूब 4:7; 1 यूहन्ना 3:22; यिर्मयाह 31:18; भजन संहिता 119:136; मीका 6:8.

प्रश्न 105: पहली आज्ञा में कौन से पाप निषिद्ध है?

उत्तर: पहली आज्ञा में जो पाप निषिद्ध हैं, वे हैं, नास्तिकता, परमेश्वर को नकारने में, या परमेश्वर को न मानना; मूर्तिपूजा, एक परमेश्वर की तुलना में, या सच्चे परमेश्वर के साथ, या उसके स्थान में बहुत से देवताओं को रखना और उनकी पूजा करना; परमेश्वर, और हमारे परमेश्वर के लिए उसे रखना और उसका समर्थन करना; परमेश्वर के लिए इस आज्ञा में अपेक्षित किसी भी बात की चूक या अवहेलना करना; परमेश्वर के विषय में अज्ञानता, विस्मृति, गलतफ़हमी, झूठे विचार, अयोग्य एवं दुष्ट विचार; परमेश्वर के रहस्यों को साहसी एवं जिज्ञासु रीति से खोजना; सभी अपवित्रता, परमेश्वर से घृणा; स्वयं से प्रेम, स्वयं को चाहना, और अन्य वस्तुओं पर हमारे मन, इच्छा, या भावनाओं की अन्य सभी अनियंत्रित एवं असंयमित अवस्था, और उन्हें पूरी रीति या आंशिक रीति उस पर से हटाना; व्यर्थ सहज विश्वास, अविश्वास, विधर्म, किसी और पर विश्वास, भरोसा न करना, निराशा, असुधार्यता, और न्याय के तहत असंवेदनशीलता; हृदय की कठोरता; घमण्ड; पूर्वानुमान लगाना; शारीरिक सुरक्षा पर भरोसा; परमेश्वर की परीक्षा लेना; अवैध साधनों का उपयोग करना, और कानूनी साधनों पर भरोसा करना; शारीरिक सुख एवं आनन्द; भ्रष्ट, अंधा एवं अविवेकपूर्ण उत्साह; स्वयं को विरक्त करना, और परमेश्वर का त्याग करना; संतों, स्वर्गदूतों, या किसी अन्य प्राणी से प्रार्थना करना, या उनकी किसी भी धार्मिक रीति से आराधना करना; शैतान के साथ सभी समझौते एवं परामर्श, और उसके सुझावों पर ध्यान देना; मनुष्यों को अपने विश्वास एवं विवेक का स्वामी बनाना; परमेश्वर और उसकी आज्ञाओं की उपेक्षा करना और उनका तिरस्कार करना; उसकी आत्मा का विरोध करना एवं उसे

दुःखी करना, उसकी व्यवस्था पर असंतोष व अधीरता प्रकट करना, हम पर जो बुराइयाँ वह डालता है, उसके लिए उस पर मूर्खतापूर्ण आरोप लगाना; और हम जो कुछ भी अच्छे हैं, रखते हैं, या कर सकते हैं, उसकी प्रशंसा का श्रेय भाग्य को, मूर्तियों को, स्वयं को, या किसी अन्य प्राणी को देना।

भजन संहिता 14:1; इफिसियों 2:12; यिर्मयाह 2:27 – 28; 1 थिस्सलुनीकियों 1:9; भजन संहिता 81:11; यशायाह 43:22 – 24; यिर्मयाह 4:22; होशे 4:1, 6; यिर्मयाह 2:32; प्रेरितों के काम 17:23, 29; यशायाह 40:18; भजन संहिता 1:2; व्यवस्थाविवरण 29:29; तीतुस 1:16; इब्रानियों 12:16; रोमियों 1:30; 2 तीमुथियुस 3:2; फिलिप्पियों 2:21; 1 यूहन्ना 2:15 – 16; 1 शमूएल 2:29; कुलुस्सियों 3:2, 5; 1 यूहन्ना 4:1; इब्रानियों 3:12; गलातियों 5:20; तीतुस 3:10; प्रेरितों के काम 26:9; भजन संहिता 78:22; उत्पत्ति 4:13; यिर्मयाह 5:3; यशायाह 42:25; रोमियों 2:5; यिर्मयाह 13:15; भजन संहिता 19:13; सपन्याह 1:12; मत्ती 4:7; रोमियों 3:8; यिर्मयाह 17:5; 2 तीमुथियुस 3:4; गलातियों 4:17; यूहन्ना 16:2; रोमियों 10:2; लूका 9:54 – 55; प्रकाशितवाक्य 3:16; 3:1; यहेजकेल 14:5; यशायाह 1:4 – 5; रोमियों 10:13 – 14; होशे 4:12; प्रेरितों के काम 10:25 – 26; प्रकाशितवाक्य 19:10; मत्ती 4:10; कुलुस्सियों 2:18; रोमियों 1:25; लैव्यव्यवस्था 20:6; 1 शमूएल 28:7, 11; 1 इतिहास 10:13 – 14; प्रेरितों के काम 5:3; 2 कुरिन्थियों 1:24; मत्ती 23:9; व्यवस्थाविवरण 32:15; 2 शमूएल 12:9; नीतिवचन 13:13; प्रेरितों के काम 7:51; इफिसियों 4:30; भजन संहिता 73:2 – 3, 13 – 15, 22; अय्यूब 1:22; 1 शमूएल 6:7 – 9; दानिय्येल 5:23; व्यवस्थाविवरण 8:17; दानिय्येल 4:30; हबक्कूक 1:16.

प्रश्न 106: पहली आज्ञा में (मुझे छोड़) इन शब्दों से हमें विशेष रूप से क्या सिखाया जाता है?

उत्तर: पहली आज्ञा में, ये शब्द (मुझे छोड़) या मेरे सामने, हमें यह सिखाते हैं कि परमेश्वर, जो सभी बातों को देखता है, किसी अन्य देवता को मानने के पाप पर विशेष ध्यान देता है और बहुत क्रोधित होता है; जिससे कि इससे दूर रहने के लिए यह एक तर्क बन सके, और इसे सबसे अधिक ढिठाई वाले उकसावे के रूप में बड़ा-चढ़ा कर दिखाया जा सके; साथ ही हमें इस बात के लिए प्रेरित करने हेतु, कि हम उसकी सेवा में जो कुछ भी करें, ऐसे करें जैसे उसकी दृष्टि में कर रहे हैं।

यहेजकेल 8:5 – 18; भजन संहिता 44:20 – 21; 1 इतिहास 28:9.

प्रश्न 107: दूसरी आज्ञा कौन सी है?

उत्तर: दूसरी आज्ञा है, तू अपने लिए कोई मूर्ति गढ़कर न बनाना, अथवा न किसी की प्रतिमा बनाना जो ऊपर आकाश में, या नीचे धरती पर या धरती के नीचे जल में है। न तो तू उन को दण्डवत् करना और न ही उनकी उपासना करना; क्योंकि मैं तेरा परमेश्वर यहोवा जलन रखने वाला परमेश्वर हूँ; जो मुझ से बैर करते हैं उनकी सन्तान को तीसरी और चौथी पीढ़ी तक बापदादों की दुष्टता का दण्ड देता हूँ। जो मुझ से प्रेम रखते हैं और मेरी आज्ञाओं का पालन करते हैं, उन हज़ारों-हज़ार पर करुणा करता हूँ।

निर्गमन 20:4 – 6.

प्रश्न 108: दूसरी आज्ञा में अपेक्षित कर्तव्य क्या हैं?

उत्तर: दूसरी आज्ञा में अपेक्षित कर्तव्य हैं, ऐसे सभी धार्मिक आराधना एवं अध्यादेशों को प्राप्त करना, मानना और पवित्र एवं सम्पूर्ण रखना, जैसे कि परमेश्वर ने अपने वचन में ठहराए हैं; विशेष रूप से ख्रीष्ट के नाम में प्रार्थना करना और धन्यवाद देना; वचन का पढ़ा जाना, प्रचार किया जाना, और सुनना; पवित्र संस्कारों का संचालन एवं उनका ग्रहण किया जाना; कलीसियाई प्रशासन एवं अनुशासन; सेवा और उसका प्रबन्ध; धार्मिक उपवास; परमेश्वर के नाम में शपथ लेना और उसकी मन्नत मानना: और साथ में सब प्रकार की झूठी आराधना को अस्वीकार करना, उससे घृणा करना, उसका विरोध करना; और प्रत्येक व्यक्ति के स्थान एवं बुलाहट के अनुसार, मूर्तिपूजा के सभी स्मारकों को दूर करना।

व्यवस्थाविवरण 32:46 – 47; मत्ती 28:20; प्रेरितों के काम 2:42; 1 तीमुथियुस 6:13 – 14; फिलिप्पियों 4:6; इफिसियों 5:20; व्यवस्थाविवरण 17:18 – 19; प्रेरितों के काम 15:21; 2 तीमुथियुस 4:2; याकूब 1:21 – 22; प्रेरितों के काम 10:33; मत्ती 28:19; 1 कुरिन्थियों 11:23 – 30; मत्ती 18:15 – 17; मत्ती 16:19; 1 कुरिन्थियों 5:17 – 18; 1 कुरिन्थियों 9:7 – 15; योएल 2:12 – 13; 1 कुरिन्थियों 7:5; व्यवस्थाविवरण 6:13; यशायाह 19:21; भजन संहिता 76:11; प्रेरितों के काम 17:16 – 17; भजन संहिता 16:4; व्यवस्थाविवरण 7:5; यशायाह 30:22.

प्रश्न 109: दूसरी आज्ञा में कौन से पाप निषिद्ध हैं?

उत्तर: दूसरी आज्ञा में निषिद्ध पाप हैं, किसी भी ऐसी धार्मिक आराधना की योजना बनाना, परामर्श देना, आदेश देना, उपयोग करना और किसी भी रीति से अनुमोदन करना जिसे स्वयं परमेश्वर द्वारा ठहराया नहीं गया है; झूठे धर्म को सहन करना; परमेश्वर का, त्रीएक परमेश्वर के किसी भी व्यक्ति का या सब का, हमारे मन में, या बाहरी रूप से किसी प्रकार की छवि या चित्र को बनाना या किसी भी प्रकार के प्राणी की समानता में बनाना; उन सब की, या उनमें परमेश्वर की या उनके द्वारा परमेश्वर की आराधना करना; नकली देवताओं का कोई भी चित्र बनाना, और उनकी सभी आराधना, या उनकी सेवा करना; सभी अंधविश्वास वाले उपकरण, परमेश्वर की आराधना को भ्रष्ट करना, इसमें कुछ जोड़ना या इसमें से कुछ हटाना, चाहे वह आविष्कार किया गया हो और हमारे द्वारा लिया गया हो, या दूसरों की परम्परा द्वारा प्राप्त किया गया हो, भले ही वह प्राचीनता, प्रथा, भक्ति, भले अभिप्राय, के किसी भी नाम के अंतर्गत हो या कोई भी अन्य दिखावा; आराधना में क्रय-विक्रय करना; अपवित्रीकरण करना; आराधना एवं अध्यादेश जिन्हें परमेश्वर ने नियुक्त किया है उनकी सभी प्रकार की उपेक्षा, अवमानना, बाधा डालना, और विरोध करना।

गिनती 15:39; व्यवस्थाविवरण 13:6 – 8; होशे 5:11; मीका 6:16; 1 राजा 11:33; 1 राजा 12:33; व्यवस्थाविवरण 12:30 – 32; व्यवस्थाविवरण 13:6 – 12; जकर्याह 13:2 – 3; प्रकाशितवाक्य 2:2, 14 – 15, 20; प्रकाशितवाक्य 17:12, 16 – 17; व्यवस्थाविवरण 4:15 – 19; प्रेरितों के काम 17:29; रोमियों 1:21 – 23, 25; दानिय्येल 3:18; गलातियों 4:8; निर्गमन 32:5; निर्गमन 32:8; 1 राजा 18:26, 28; यशायाह 65:11; प्रेरितों के काम 17:22; कुलुस्सियों 2:21 – 23; मलाकी 1:7 – 8, 14; व्यवस्थाविवरण 4:2; भजन संहिता 106:39; मत्ती 15:9; 1 पतरस 1:18; यिर्मयाह 44:17; यशायाह 65:3 – 5; गलातियों 1:13 – 14; 1 शमूएल 13:11 – 12; 1 शमूएल 15:21; प्रेरितों के काम 8:18; रोमियों 2:22; मलाकी 3:8; निर्गमन 4:24 – 26; मत्ती 22:5; मलाकी 1:7, 13; मत्ती 23:13; प्रेरितों के काम 13:44 – 45; 1 थिस्सलुनीकियों 2:15 – 16.

प्रश्न 110: दूसरी आज्ञा के साथ, इसे और अधिक रीति से लागू करने के लिए कौन से तर्क संलग्न हैं?

उत्तर: दूसरी आज्ञा के साथ जो तर्क, इसे और अधिक रीति से लागू करने के लिए संलग्न हैं, वे इन शब्दों में निहित हैं, क्योंकि मैं तेरा परमेश्वर यहोवा जलन रखने वाला परमेश्वर हूँ; जो मुझ से बैर करते हैं उनकी सन्तान को तीसरी और चौथी पीढ़ी तक बापदादों की दुष्टता का दण्ड देता हूँ; जो मुझ से प्रेम रखते हैं और मेरी आज्ञाओं का पालन करते हैं, उन हज़ारों-हज़ार पर करुणा करता हूँ; इसके अतिरिक्त, हमारे ऊपर परमेश्वर की सम्प्रभुता, और हममें उपयुक्तता, उसकी अपनी आराधना के लिए उसकी जीवंत धुन, और सभी झूठी आराधना, जो कि एक आत्मिक वेश्या-वृति के रूप में है, उसके प्रति उसका बदला लेने वाला क्रोध; इस आज्ञा का उल्लंघन करने वालों को उससे घृणा करने वालों के रूप में गिनना, और उन्हें कई पीढ़ियों तक दण्डित करने की चेतावनी देना; और इसका पालन करने वालों को उससे प्रेम करने और उसकी आज्ञापालन करने वालों के रूप में गिनना, और उनसे उनकी कई पीढ़ियों तक करुणा दिखाने की प्रतिज्ञा करना।

निर्गमन 20:5 – 6; भजन संहिता 45:11; प्रकाशितवाक्य 15:3 – 4; निर्गमन 34:13 – 14; 1 कुरिन्थियों 10:20 – 22; यिर्मयाह 7:18 – 20; यहेजकेल 16:26 – 27; व्यवस्थाविवरण 32:16 – 20; होशे 2:2; व्यवस्थाविवरण 5:29.

प्रश्न 111: तीसरी आज्ञा कौन सी है?

उत्तर: तीसरी आज्ञा है, तू अपने परमेश्वर यहोवा का नाम व्यर्थ न लेना: क्योंकि जो यहोवा का नाम व्यर्थ ले वह उसको निर्दोष न ठहराएगा।

निर्गमन 20:7.

प्रश्न 112: तीसरी आज्ञा में क्या अपेक्षित है?

उत्तर: तीसरी आज्ञा अपेक्षा करती है, कि परमेश्वर का नाम, उसकी उपाधियाँ, उसके गुण, आदेश, वचन, संस्कार, प्रार्थना, शपथ, वादे, भविष्य-निर्धारण, उसके कार्य, और जो कुछ भी अस्तित्व में है जिसके

द्वारा वह अपने आप को प्रकट करता है, उसका विचार, ध्यान-मनन, वचन, एवं लेखन में पवित्रता और श्रद्धापूर्वक उपयोग करना चाहिए; इसको एक पवित्र कार्य, और उत्तरदायी बातचीत के द्वारा परमेश्वर की महिमा, और अपनी एवं दूसरों की भलाई के लिए करना चाहिए।

मत्ती 6:9; व्यवस्थाविवरण 28:58; भजन संहिता 29:2; भजन संहिता 68:4; प्रकाशितवाक्य 15:3 – 4; मलाकी 1:14; सभोपदेशक 5:1; भजन संहिता 138:2; 1 कुरिन्थियों 11:24 – 25, 28 – 29; 1 तीमुथियुस 2:8; यिर्मयाह 4:2; सभोपदेशक 5:2, 4 – 6; प्रेरितों के काम 1:24, 26; अय्यूब 36:24; मलाकी 3:16; भजन संहिता 8:1, 3 – 4, 9; कुलुस्सियों 3:17; भजन संहिता 105:2, 5; भजन संहिता 102:18; 1 पतरस 3:15; मीका 4:5; फिलिप्पियों 1:27; 1 कुरिन्थियों 10:31; यिर्मयाह 32:39; 1 पतरस 2:12.

प्रश्न 113: तीसरी आज्ञा में कौन से पाप निषिद्ध हैं?

उत्तर: तीसरी आज्ञा में जो पाप निषिद्ध हैं, वे हैं, कि जैसा अपेक्षित है वैसे परमेश्वर के नाम का उपयोग न करना; और अनभिज्ञता, व्यर्थ, श्रद्धाहीन, भ्रष्ट, अंधविश्वास, या दुष्टता का उल्लेख करते हुए या किसी अन्य रीति से उसकी उपाधियों, गुणों, आदेशों या कार्यों का उपयोग करते हुए परमेश्वर की निंदा, झूठी गवाही के द्वारा परमेश्वर के नाम का दुरुपयोग करना; सभी प्रकार के पापमय श्राप, शपथ, मन्नतें, और भविष्य जानना; अपनी शपथ एवं मन्नतों का, यदि वे वैध हैं, तो उल्लंघन करना; और उनका पालन करना यदि वे अवैध हैं; परमेश्वर के विधानों (decrees) और प्रबन्धन के कार्यों (providences) पर कुड़कुड़ाना और झगड़ा करना, उनमें उत्सुकतापूर्वक ताक-झाँक करना, और उनका गलत रीति से प्रयोग करना; अपवित्र ठट्ठा, जिज्ञासु या लाभहीन प्रश्नों, व्यर्थ विवाद या झूठे सिद्धांतों का दावा करने के लिए उसके वचन, या उसके किसी भी भाग की गलत व्याख्या करना, गलत अनुप्रयोग करना या किसी भी रीति से विकृत करना; तंत्र-मंत्र, या पापमय वासनाओं एवं प्रयोगों के लिए इसका, प्राणियों का, या परमेश्वर के नाम के अंतर्गत निहित किसी भी वस्तु का दुरुपयोग करना; परमेश्वर के सत्य, अनुग्रह और कार्यों को बदनाम करना, तिरस्कार करना, निन्दा करना, या किसी भी रीति से विरोध करना; पाखंड में, या कपट उद्देश्यों

के लिए मसीही धर्म को पेशा बनाना; अनुपयुक्त, मूर्खतापूर्ण, निष्फल और अपमानजनक पालन, या धर्म-पथभ्रष्ट के द्वारा उसके प्रति लज्जित होना, या उसे लज्जित करना।

मलाकी 2:2; प्रेरितों के काम 17:23; नीतिवचन 30:9; मलाकी 1:6 – 7, 12; मलाकी 3:14; 1 शमूएल 4:3 – 5; यिर्मयाह 7:4, 9 – 10, 14, 31; कुलुस्सियों 2:20 – 22; 2 राजा 18:30, 35; निर्गमन 5:2; भजन संहिता 139:20; यशायाह 5:12; 2 राजा 19:22; लैव्यव्यवस्था 24:11; जकर्याह 5:4; जकर्याह 8:17; 1 शमूएल 17:43; 2 शमूएल 16:5; यिर्मयाह 5:7; यिर्मयाह 23:10; व्यवस्थाविवरण 23:18; प्रेरितों के काम 23:12, 14; एस्तेर 3:7; एस्तेर 9:24; भजन संहिता 22:18; भजन संहिता 24:4; यहेजकेल 17:16, 18 – 19; मरकुस 6:26; 1 शमूएल 25:22, 32 – 34; रोमियों 9, 19 – 20; व्यवस्थाविवरण 29:29; रोमियों 3:5, 7; रोमियों 6:1 – 2; सभोपदेशक 8:11; सभोपदेशक 9:3; भजन संहिता 39:1 – 13; मत्ती 5:21 – 28; यहेजकेल 13:22; 2 पतरस 3:16; मत्ती 22:24 – 31; यशायाह 22:13; यिर्मयाह 23:34, 36, 38; 1 तीमुथियुस 1:4, 6 – 7; 1 तीमुथियुस 6:4 – 5, 20; 2 तीमुथियुस 4:3 – 4; रोमियों 13:13 – 14; 1 राजा 21:9 – 10; यहूदा 1:4; प्रेरितों के काम 13:45; 1 यूहन्ना 3:12; भजन संहिता 1:1; 2 पतरस 3:3; 1 पतरस 4:4; प्रेरितों के काम 13:45 – 46, 50; प्रेरितों के काम 4:18; प्रेरितों के काम 19:9; 1 थिस्सलुनीकियों 2:16; इब्रानियों 10:29; 2 तीमुथियुस 3:5; मत्ती 23:14; मत्ती 6:1 – 2, 5, 16; मरकुस 8:38; भजन संहिता 73:14 – 15; 1 कुरिन्थियों 6:5 – 6; इफिसियों 5:15 – 17; यशायाह 5:4; 2 पतरस 1:8 – 9; रोमियों 2:23 – 24; गलातियों 3:1, 3; इब्रानियों 6:6; 2 तीमुथियुस 2:14; तीतुस 3:9; व्यवस्थाविवरण 18:10 – 14; प्रेरितों के काम 19:13.

प्रश्न 114: तीसरी आज्ञा के साथ कौन से तर्क संलग्न हैं?

उत्तर: तीसरी आज्ञा के साथ संलग्न तर्क, इन शब्दों, “अपने परमेश्वर यहोवा” और “क्योंकि जो यहोवा का नाम व्यर्थ लेता है वह उसको निर्दोष न ठहराएगा” में है, क्योंकि वह यहोवा हमारा परमेश्वर है, इसलिए उसका नाम हमारे द्वारा अपवित्र या किसी भी रीति से दुरुपयोग नहीं होना चाहिए; विशेष रूप से इसलिए क्योंकि इस आज्ञा का उल्लंघन करने वालों को वह दोषमुक्त नहीं करेगा और नहीं बचाएगा, क्योंकि वह उन्हें अपने धर्मी दण्ड से बचने नहीं देगा, भले ही ऐसे कई लोग मनुष्यों द्वारा अपराधी ठहराने और उनके दण्ड से बच जाएं।

निर्गमन 20:7; लैव्यव्यवस्था 19:12; यहेजकेल 36:21 – 23; व्यवस्थाविवरण 28:58 – 59; जकर्याह 5:2 – 4; 1 शमूएल 2:12, 17, 22, 24; 1 शमूएल 3:13.

प्रश्न 115: चौथी आज्ञा क्या है?

उत्तर: चौथी आज्ञा है, तू विश्रामदिन को पवित्र मानने के लिए स्मरण रखना। छः दिन तो तू काम-काज करना; परन्तु सातवाँ दिन तेरे परमेश्वर यहोवा के लिए विश्रामदिन है; उसमें न तो तू किसी भाँति का काम-काज करना, और न तेरा बेटा, न तेरी बेटी, न तेरा दास, न तेरी दासी, न तेरे पशु, न कोई परदेशी जो तेरे फाटकों के भीतर हो। क्योंकि छः दिन में यहोवा ने आकाश, और पृथ्वी, और समुद्र, और जो कुछ उनमें हैं, सब को बनाया, और सातवें दिन विश्राम किया; इस कारण यहोवा ने विश्रामदिन को आशीष दी और उसको पवित्र ठहराया।

निर्गमन 20:8 – 11.

प्रश्न 116: चौथी आज्ञा में क्या अपेक्षित है?

उत्तर: चौथी आज्ञा सभी मनुष्यों से परमेश्वर के प्रति ऐसे निर्धारित समयों को पवित्र करने या पवित्र रखने की अपेक्षा करती है जिन्हें उसने अपने वचन में ठहराया है, जो कि स्पष्ट रूप से सात दिनों में से एक पूरा दिन है; जो कि संसार के आरम्भ से ख्रीष्ट के पुनरुत्थान तक सप्ताह का सातवाँ दिन था, और उसके पश्चात् से सप्ताह का पहला दिन है, और इसी रीति से संसार के अंत तक यह जारी रहेगा; जो कि मसीही सब्त है और नए नियम में इसे प्रभु का दिन कहा गया है।

व्यवस्थाविवरण 5:12 – 14; उत्पत्ति 2:2 – 3; 1 कुरिन्थियों 16:1 – 2; प्रेरितों के काम 20:7; मत्ती 5:15 – 18; यशायाह 56:2, 4, 6 – 7; प्रकाशितवाक्य 1:10.

प्रश्न 117: सब्त या प्रभु के दिन को कैसे पवित्र मानना है?

उत्तर: सब्त या प्रभु के दिन को पूरे दिन भर पवित्र विश्राम के द्वारा पवित्र मानना चाहिए, न केवल ऐसे कार्यों से जो हर समय पापमय होते हैं, बल्कि ऐसे सांसारिक रोज़गारों एवं मनोरंजन से भी जो अन्य दिनों में वैध होते हैं;

और परमेश्वर की सार्वजनिक एवं निजी आराधना के कार्यों में (आवश्यकता एवं दया के कार्यों में लगने वाले समय को छोड़कर) पूरा समय बिताने को अपना उल्लास बनाना है: और, इस उद्देश्य के लिए, हमें अपने हृदयों को तैयार करना चाहिए, और ऐसी दूरदर्शिता, परिश्रम एवं संयम के साथ, अपने सांसारिक व्यवसाय का निबटारा करना, या समय से पूरा करना चाहिए, ताकि हम उस दिन के कर्तव्यों के लिए अधिक स्वतंत्र और योग्य हो सकें।

निर्गमन 20:8, 10; निर्गमन 16:25 – 28; नहेम्याह 13:15 – 22; यिर्मयाह 17:21 – 22; मत्ती 12:1 – 13; यशायाह 58:13; लूका 4:16; प्रेरितों के काम 20:7; 1 कुरिन्थियों 16:1 – 2; भजन संहिता 92 शीर्षक; यशायाह 66:23; लैव्यव्यवस्था 23:3; निर्गमन 20:8; लूका 23:54, 56; निर्गमन 16:22, 25 – 26, 29; नहेम्याह 13:19.

प्रश्न 118: विश्रामदिन या सब्त का पालन करने का दायित्व विशेष रूप से परिवारों के मुखिया एवं प्रधान लोगों के लिए क्यों निर्देशित किया गया है?

उत्तर: विश्रामदिन या सब्त का पालन करने का दायित्व विशेष रूप से परिवारों के मुखिया एवं अन्य प्रधान लोगों के लिए इसलिए निर्देशित किया गया है, क्योंकि वे न केवल स्वयं इसका पालन करने के लिए बाध्य है, बल्कि यह देखने के लिए भी बाध्य हैं कि जो लोग उनके अधीन हैं, वे भी इसका पालन करते हैं; और क्योंकि वे प्रायः अपने स्वयं के कार्यों के द्वारा उन्हें विश्रामदिन का पालन करने में बाधा डालने के लिए प्रवृत्त होते हैं।

निर्गमन 20:10; यहोशू 24:15; नहेम्याह 13:15, 17; यिर्मयाह 17:20 – 22; निर्गमन 23:12.

प्रश्न 119: चौथी आज्ञा में कौन से पाप निषिद्ध हैं?

उत्तर: चौथी आज्ञा में निषिद्ध पाप हैं, अपेक्षित कर्तव्यों की सभी चूक, उन्हें लापरवाही, उपेक्षापूर्ण, निष्फल रीति से करना, और उनके कारण हताश होना; आलस्य, और उस कार्य को करने के द्वारा जो स्वयं में पापमय है;

और हमारे सांसारिक रोजगारों एवं मनोरंजन के विषय में सभी अनावश्यक कार्यों, शब्दों एवं विचारों से, इस दिन को पूर्ण रूप से अपवित्र करना।

यहेजकेल 22:26; प्रेरितों के काम 20:7, 9; यहेजकेल 33:30 – 32; आमोस 8:5; मलाकी 1:13; यहेजकेल 23:38; यिर्मयाह 17:24, 27; यशायाह 58:13.

प्रश्न 120: चौथी आज्ञा के साथ इसे और अधिकाई से लागू करने के लिए क्या कारण संलग्न हैं?

उत्तर: चौथी आज्ञा के साथ, इसे और अधिकाई से लागू करने के लिए, संलग्न कारण इसकी न्याय-संगतता से लिए गए हैं, हमारे स्वयं के कार्यों के लिए सात में से छह दिनों की अनुमति परमेश्वर द्वारा दिया जाना, और अपने लिए केवल एक दिन को आरक्षित करना, यह इन शब्दों में है, छः दिन तो तू सब कामकाज करना: उस दिन में परमेश्वर द्वारा एक विशेष औचित्य को चुनौती देने के कारण, सातवां दिन तेरे परमेश्वर यहोवा का विश्रामदिन है: परमेश्वर के उदाहरण के कारण, जिसने छः दिन में आकाश, और पृथ्वी, और समुद्र, और जो कुछ उनमें हैं, सब को बनाया, और सातवें दिन विश्राम किया: और उस आशीष के कारण जिससे परमेश्वर ने उस दिन को आशीषित किया, न केवल उसकी सेवा के लिए इसे पवित्र करने में, बल्कि इसे हमारे द्वारा पवित्र मानने में हमारे लिए आशीष के एक साधन के रूप में इसे अभिषिक्त करने में, जिसके कारण यहोवा ने विश्रामदिन को आशीष दी और उसको पवित्र ठहराया।

निर्गमन 20:9; निर्गमन 20:10; निर्गमन 20:11.

प्रश्न 121: चौथी आज्ञा के आरम्भ में स्मरण शब्द क्यों रखा गया है?

उत्तर: चौथी आज्ञा के आरम्भ में स्मरण शब्द इसलिए रखा गया है, आंशिक रूप से, इसे स्मरण रखने के बड़े लाभ के कारण से, क्योंकि इस प्रकार इसका पालन करने के लिए हमारी तैयारी में हमें सहायता मिलती है; और इसका पालन करने में, बाकी सभी आज्ञाओं का पालन करना बेहतर है,

और सृष्टि एवं उद्धार के दो महान लाभों के लिए कृतज्ञता के साथ स्मरण को जारी रखना, जिनमें मसीही धर्म का संक्षिप्त सार सम्मिलित है; और आंशिक रूप से, क्योंकि हम इसे भूलने के लिए बहुत तत्पर रहते हैं, क्योंकि इसके लिए प्राकृतिक ज्ञान बहुत कम है, और फिर भी यह अन्य समयों पर, वैध बातों में हमारी स्वाभाविक स्वतंत्रता को रोकता है; कि यह सात दिनों में केवल एक बार आता है, और बीच में कई सांसारिक कार्य होते हैं, और जो प्रायः हमारे मस्तिष्क को इसके विषय में सोचने से, या तो इसकी तैयारी करने के लिए, या इसे पवित्र मानने से रोक देते हैं; और यह कि शैतान अपने साधनों के साथ इसकी महिमा, और यहाँ तक कि इसके स्मरण को मिटाने, और सभी अधर्म और अपवित्रता को लाने का बहुत प्रयास करता है।

निर्गमन 20:8; निर्गमन 16:23; लूका 23:54, 56; मरकुस 15:42; नहेम्याह 13:19; भजन संहिता 92 शीर्षक, भजन संहिता 92:13 – 14; यहेजकेल 20:12, 19 – 20; उत्पत्ति 2:2 – 3; भजन संहिता 118:22, 24; प्रेरितों के काम 4:10 – 11; प्रकाशितवाक्य 1:10; यहेजकेल 22:26; नहेम्याह 9:14; निर्गमन 34:21; व्यवस्थाविवरण 5:14 – 15; आमोस 8:5; सभोपदेशक 1:7; यिर्मयाह 17:21 – 23; नहेम्याह 13:15 – 23.

प्रश्न 122: उन छः आज्ञाओं का सार क्या है जिनमें मनुष्य के प्रति हमारा कर्तव्य निहित है?

उत्तर: उन छः आज्ञाओं का सार जिनमें मनुष्य के प्रति हमारा कर्तव्य निहित है, वह है, अपने पड़ोसी से अपने समान प्रेम करना, और दूसरों के साथ वही व्यवहार करना जो हम चाहते हैं कि वे हमारे साथ करें।

मत्ती 22:39; मत्ती 7:12.

प्रश्न 123: पाँचवीं आज्ञा क्या है?

उत्तर: पाँचवीं आज्ञा है, तू अपने पिता और अपनी माता का आदर करना, जिससे जो देश तेरा परमेश्वर यहोवा तुझे देता है उसमें तू बहुत दिन तक रहने पाए।

निर्गमन 20:12.

प्रश्न 124: पाँचवीं आज्ञा में पिता और माता का किन से अभिप्राय है?
उत्तर: पाँचवीं आज्ञा में पिता और माता से अभिप्राय न केवल प्राकृतिक माता-पिता से है, बल्कि उन सब से है जो आयु एवं योग्यताओं में वरिष्ठ हैं; और विशेष रूप से ऐसे लोग, जो परमेश्वर की व्यवस्था के अनुसार, अधिकार के स्थान पर हमारे ऊपर हैं, चाहे वे परिवार में, कलीसिया में, या देश में हैं।

नीतिवचन 23:22, 25; इफिसियों 6:1 – 2; 1 तीमुथियुस 5:1 – 2; उत्पत्ति 4:20 – 22; उत्पत्ति 45:8; 2 राजा 5:13; 2 राजा 2:12; 2 राजा 13:14; गलातियों 4:19; यशायाह 49:23.

प्रश्न 125: वरिष्ठ लोगों को पिता और माता के रूप में क्यों नामित किया गया है?
उत्तर: प्राकृतिक माता-पिता के समान, अपने से कम आयु के लोगों के प्रति उनके सभी कर्तव्यों की शिक्षा देने के लिए, और उनके कई सम्बन्धों के अनुसार, उनके प्रति प्रेम एवं कोमलता व्यक्त करने के लिए, वरिष्ठ लोगों को पिता और माता के रूप में नामित किया गया है; और अपने से कम आयु के लोगों को वरिष्ठ लोगों के प्रति, अपने माता-पिता के समान ही, उनके प्रति अपने कर्तव्यों को निभाने में अधिक तत्परता एवं प्रसन्नता के साथ उत्साहित करना है।

इफिसियों 6:4; 2 कुरिन्थियों 12:14; 1 थिस्सलुनीकियों 2:7 – 8, 11; गिनती 11:11 – 12; 1 कुरिन्थियों 4:14 – 16; 2 राजा 5:13.

प्रश्न 126: पाँचवीं आज्ञा का सामान्य कार्य-क्षेत्र क्या है?
उत्तर: पाँचवीं आज्ञा का सामान्य कार्य-क्षेत्र उन कर्तव्यों का पालन करना है जिन्हें हम अपने कई सम्बन्धों में कम आयु वालों, अधिक आयु वालों, समान आयु वालों के साथ, आपस में निभाने के लिए जिम्मेदार हैं।

इफिसियों 5:21; 1 पतरस 2:17; रोमियों 12:10.

प्रश्न 127: वह कौन सा सम्मान है जो कम आयु के लोग अधिक आयु के लोगों को देते हैं?

उत्तर: कम आयु के लोगों को जो सम्मान अधिक आयु वालों को देना चाहिए, वह हृदय, वचन और व्यवहार में सभी उचित आदर हैं; उनके लिए प्रार्थना एवं धन्यवाद देना है; उनके गुणों एवं तौर-तरीकों का अनुकरण करना है; उनके वैध आज्ञाओं एवं परामर्श का स्वेच्छा से पालन करना है; उनके सुधारों के प्रति उचित समर्पण करना है; उनके कई पद, और उनके स्थानों की प्रकृति के अनुसार, उनके व्यक्ति और अधिकार के प्रति निष्ठा, उनकी रक्षा एवं रखरखाव करना; उनकी दुर्बलताओं को सहना, और उन्हें प्रेम में ढांपना, ताकि वे उनके और उनकी सरकार के लिए सम्मान का कारण बन सकें।

मलाकी 1:6; लैव्यव्यवस्था 19:3; नीतिवचन 31:28; 1 पतरस 3:6; लैव्यव्यवस्था 19:32; 1 राजा 2:19; 1 तीमुथियुस 2:1 – 2; इब्रानियों 13:7; फिलिप्पियों 3:17; इफिसियों 6:1 – 2, 5 – 7; 1 पतरस 2:13 – 14; रोमियों 13:1 – 5; इब्रानियों 13:17; नीतिवचन 4:3 – 4; नीतिवचन 23:22; निर्गमन 18:19, 24; इब्रानियों 12:9; 1 पतरस 2:18 – 20; तीतुस 2:9 – 10; 1 शमूएल 26:15 – 16; 2 शमूएल 18:3; एस्तेर 6:2; मत्ती 22:21; रोमियों 13:6 – 7; 1 तीमुथियुस 5:17 – 18; गलातियों 6:6; उत्पत्ति 45:11; उत्पत्ति 47:12; 1 पतरस 2:18; नीतिवचन 23:22; उत्पत्ति 9:23; भजन संहिता 127:3 – 5; नीतिवचन 31:23.

प्रश्न 128: वरिष्ठ लोगों के विरुद्ध कम आयु वाले लोगों के पाप क्या हैं?

उत्तर: वरिष्ठ लोगों के विरुद्ध कम आयु वाले लोगों के पाप हैं, उनके प्रति अपेक्षित कर्तव्यों की उपेक्षा करना; उनके वैध परामर्शों, आदेशों, और सुधारों में उनके व्यक्ति और पदों के विरुद्ध ईर्ष्या करना, उनका तिरस्कार करना और उनके विरुद्ध विद्रोह करना; उन्हें और उनके प्रशासन को कोसना, उपहास करना, और ऐसे सभी दुर्दम्य और निंदनीय बातें करना जो शर्मनाक एवं अपमानजनक साबित होते हैं।

मत्ती 15:4 – 6; गिनती 11:28 – 29; 1 शमूएल 8:7; यशायाह 3:5; 2 शमूएल 15:1 – 12; निर्गमन 21:15; 1 शमूएल 10:27; 1 शमूएल 2:25; व्यवस्थाविवरण 21:18 – 21; नीतिवचन 30:11, 17; नीतिवचन 19:26.

प्रश्न 129: कम आयु के लोगों के प्रति वरिष्ठ लोगों से क्या कर्तव्य अपेक्षित हैं?

उत्तर: वरिष्ठ लोगों से यह अपेक्षित है कि वे परमेश्वर से प्राप्त शक्ति, और उस सम्बन्ध के अनुसार जिसमें वे बने हुए हैं, अपने से कम आयु के लोगों से प्रेम करें, उनके लिए प्रार्थना करें और उन्हें आशीर्वाद दें; उन्हें शिक्षा, परामर्श और चेतावनी दें; भला करने पर प्रशंसा करें, सराहना करें और पुरस्कृत करें; और बुरा करने पर निंदा करें, सुधारें, और ताड़ना करें; उनकी रक्षा करें, और उन्हें प्राण और शरीर के लिए सभी आवश्यक वस्तुएं प्रदान करें; और गम्भीर, बुद्धिमान, पवित्र एवं अनुकरणीय जीवन के द्वारा, परमेश्वर के लिए महिमा, स्वयं के लिए सम्मान प्राप्त करें, और इस प्रकार उस अधिकार को संरक्षित करें जिसे परमेश्वर ने उनको दिया है।

कुलुस्सियों 3:19; तीतुस 2:4; 1 शमूएल 12:23; अय्यूब 1:5; 1 राजा 8:55 – 56; इब्रानियों 7:7; उत्पत्ति 49:28; व्यवस्थाविवरण 6:6 – 7; इफिसियों 6:4; 1 पतरस 3:7; 1 पतरस 2:14; रोमियों 13:3; एस्तेर 6:3; रोमियों 13:3 – 4; नीतिवचन 29:15; 1 पतरस 2:14; अय्यूब 29:12 – 17; यशायाह 1:10, 17; इफिसियों 6:4; 1 तीमुथियुस 5:8; 1 तीमुथियुस 4:12; तीतुस 2:3 – 5; 1 राजा 3:28; तीतुस 2:15.

प्रश्न 130: वरिष्ठ लोगों के पाप क्या हैं?

उत्तर: वरिष्ठ लोगों के पाप हैं, उनसे अपेक्षित कर्तव्यों की उपेक्षा के अतिरिक्त, स्वयं की महिमा, सहजता, लाभ, या सुख-तृप्ति की अत्यधिक खोज करना; गैरकानूनी कार्यों को, या ऐसे कार्यों को करने के लिए आदेश देना जो कम आयु के लोगों के बस में नहीं है; जिस बात में बुराई है उसके लिए उन्हें परामर्श देना, उत्साहित करना, या उन बातों में उनका पक्ष लेना; जो भला है उसे करने से उन्हें मना करना, हतोत्साहित करना, या निंदा करना; अनुचित रूप से उन्हें सुधारना; उन्हें गलत बात, प्रलोभन, और खतरे के लिए लापरवाही से उजागर करना, या छोड़ देना; उन्हें क्रोध के

लिए उकसाना; या किसी भी रीति से अन्यायपूर्ण, अविवेकपूर्ण. कठोर या लापरवाह व्यवहार से उनका अपमान करना या उनके अधिकार को कम करना।

यहेजकेल 34:2 – 4; फिलिप्पियों 2:21; यूहन्ना 5:44; यूहन्ना 7:18; यशायाह 56:10 – 11; व्यवस्थाविवरण 17:17; दानिय्येल 3:4 – 6; प्रेरितों के काम 4:17 – 18; निर्गमन 5:10 – 18; मत्ती 23:2, 4; मत्ती 14:8; मरकुस 6:24; 2 शमूएल 13:28; 1 शमूएल 3:13; यूहन्ना 7:46 – 49; कुलुस्सियों 3:21; निर्गमन 5:17; 1 पतरस 2:18 – 20; इब्रानियों 12:10; व्यवस्थाविवरण 25:3; उत्पत्ति 38:11, 26; प्रेरितों के काम 18:17; इफिसियों 6:4; उत्पत्ति 9:21; 1 राजा 12:13 – 16; 1 राजा 1:6; 1 शमूएल 2:29 – 31.

प्रश्न 131: समान आयु वालों के क्या कर्तव्य हैं?

उत्तर: समान आयु वाले लोगों के कर्तव्य हैं, एक-दूसरे की गरिमा एवं मूल्य का सम्मान करना, दूसरे से बढ़कर एक-दूसरे को सम्मान देने के लिए आगे आना; और एक-दूसरे के वरदानों एवं उन्नति में, स्वयं अपना मानकर आनन्दित होना।

1 पतरस 2:17; रोमियों 12:10; रोमियों 12:15 – 16; फिलिप्पियों 2:3 – 4.

प्रश्न 132: समान आयु वालों के पाप क्या हैं?

उत्तर: एक दूसरे के आवश्यक कर्तव्यों की उपेक्षा के अतिरिक्त, समान आयु वालों के पाप हैं, एक दूसरे के मूल्य को कम करना, वरदानों से ईर्ष्या करना, एक दूसरे की उन्नति या समृद्धि पर दुःखी होना; और एक दूसरे के ऊपर प्रभुत्व जमाना।

रोमियों 13:8; 2 तीमुथियुस 3:3; प्रेरितों के काम 7:9; गलातियों 5:26; गिनती 12:2; एस्तेर 6:12 – 13; 3 यूहन्ना 1:9; लूका 22:24.

प्रश्न 133: पाँचवीं आज्ञा के साथ, उसे और अधिक बल के साथ लागू करने के लिए क्या तर्क संलग्न है?

उत्तर: पाँचवीं आज्ञा के साथ जो तर्क संलग्न है वह इन शब्दों में है, “जिस

से जो देश तेरा परमेश्वर यहोवा तुझे देता है उसमें तू बहुत दिन तक रहने पाए," यह लम्बे जीवन और समृद्धि की एक स्पष्ट प्रतिज्ञा है, जहाँ तक यह परमेश्वर की महिमा और उन लोगों की स्वयं की भलाई के लिए कार्य करेगा जो इस आज्ञा का पालन करते हैं।

निर्गमन 20:12; व्यवस्थाविवरण 5:16; 1 राजा 8:25; इफिसियों 6:2 – 3.

प्रश्न 134: छठी आज्ञा क्या है?
उत्तर: छठी आज्ञा है, तू हत्या न करना।

निर्गमन 20:13.

प्रश्न 135: छठी आज्ञा में कौन से कर्तव्य अपेक्षित हैं?
उत्तर: छठी आज्ञा में अपेक्षित कर्तव्य हैं, उन सभी विचारों एवं उद्देश्यों का विरोध करके, सभी उग्र क्रोध को वश में करके, सभी अवसरों, प्रलोभनों और ऐसी प्रथाओं से बचकर जो किसी का भी जीवन अन्यायपूर्ण रीति से छीनने की प्रवृत्त रखता है, अपने एवं दूसरे लोगों के जीवनों की रक्षा करने के लिए ऐसे सभी सावधानीपूर्वक विचार-विमर्श एवं कानूनी प्रयास करना; हिंसा के विरुद्ध न्यायपूर्ण बचाव करने के द्वारा मन की शांति व आत्मा की प्रसन्नता से परमेश्वर की योजना को धैर्यपूर्वक स्वीकार करना; मांस, दाखमधु, व्यायाम, नींद, श्रम, एवं मनोरंजन का संयमित उपयोग; परोपकारी विचार, प्रेम, करुणा, नम्रता, दयालुता; शांतिपूर्ण, सौम्य, विनम्र बोली एवं व्यवहार: सहनशील, मेल-मिलाप के लिए तत्परता, चोट को धैर्यपूर्वक सहन करना और क्षमा करना, बुराई के बदले भलाई करना; व्यथित मनुष्य को सांत्वना एवं सहायता देना, और निर्दोष की रक्षा करना एवं उसके पक्ष में बोलना।

इफिसियों 5:28 – 29; 1 राजा 18:4; यिर्मयाह 26:15 – 16; प्रेरितों के काम 23:12, 16 – 17, 21, 27; इफिसियों 4:26 – 27; 2 शमूएल 2:22; व्यवस्थाविवरण 22:8; मत्ती 4:6 – 7; नीतिवचन 1:10 – 11, 15 – 16; 1 शमूएल 24:12; 1 शमूएल 26:9 – 11; उत्पत्ति 37:21 –

22; भजन संहिता 82:4; नीतिवचन 24:11 – 12; 1 शमूएल 14:45; याकूब 5:7 – 11; इब्रानियों 12:9; 1 थिस्सलुनीकियों 4:11; 1 पतरस 3:3 – 4; भजन संहिता 37:8 – 11; नीतिवचन 17:22; नीतिवचन 25:16, 27; 1 तीमुथियुस 5:23; यशायाह 38:21; भजन संहिता 127:2; सभोपदेशक 5:12; 2 थिस्सलुनीकियों 3:10, 12; नीतिवचन 16:26; सभोपदेशक 3:4, 11; 1 शमूएल 19:4 – 5; 1 शमूएल 22:13 – 14; रोमियों 13:10; लूका 10:33 – 34; कुलुस्सियों 3:12 – 13; याकूब 3:17; 1 पतरस 3:8 – 11; नीतिवचन 15:1; न्यायियों 8:1 – 3; मत्ती 5:24; इफिसियों 4:2, 32; रोमियों 12:17, 20 – 21; 1 थिस्सलुनीकियों 5:14; अय्यूब 31:19 – 20; मत्ती 25:35 – 36; नीतिवचन 31:8 – 9.

प्रश्न 136: छठी आज्ञा में कौन से पाप निषिद्ध हैं?

उत्तर: छठी आज्ञा में निषिद्ध पाप हैं, सार्वजनिक न्याय, न्यायसंगत युद्ध, या आवश्यक बचाव के मामलों को छोड़कर, किसी भी रीति से अपने, या दूसरों के जीवन को समाप्त करना; जीवन के संरक्षण के वैध एवं आवश्यक साधनों की उपेक्षा करना या उन्हें दूर हटाना; पापमय क्रोध, घृणा, ईर्ष्या, बदला लेने की भावना; सभी अत्यधिक जुनून, ध्यान भटकाने वाली चिंताएँ; मांस, शराब, श्रम, और मनोरंजन का अत्यधिक उपयोग; उत्तेजक वचन; अत्याचार, झगड़ा करना, मारना, घायल करना, और ऐसा कुछ भी जो किसी के जीवन को नष्ट करता है।

प्रेरितों के काम 16:28; उत्पत्ति 9:6; गिनती 35:31, 33; यिर्मयाह 48:10; व्यवस्थाविवरण 20:1 – 20; निर्गमन 22:2 – 3; मत्ती 25:42 – 43; याकूब 2:15 – 16; सभोपदेशक 6:1 – 2; मत्ती 5:22; 1 यूहन्ना 3:15; लैव्यव्यवस्था 19:17; नीतिवचन 14:30; रोमियों 12:19; इफिसियों 4:31; मत्ती 6:31, 34; लूका 21:34; रोमियों 13:13; सभोपदेशक 12:12; सभोपदेशक 2:22 – 23; यशायाह 5:12; नीतिवचन 15:1; नीतिवचन 12:18; यहेजकेल 18:18; निर्गमन 1:14; गलातियों 5:15; नीतिवचन 23:29; गिनती 35:16 – 18, 21; निर्गमन 21:18 – 36.

प्रश्न 137: सातवीं आज्ञा कौन सी है?

उत्तर: सातवीं आज्ञा है, तू व्यभिचार न करना।

निर्गमन 20:14.

प्रश्न 138: सातवीं आज्ञा में कौन से कर्तव्य अपेक्षित हैं?

उत्तर: सातवीं आज्ञा में अपेक्षित कर्तव्य हैं, शरीर, मन, भावनाओं, वचनों, एवं व्यवहार में पवित्रता; और अपने एवं दूसरों में इसका संरक्षण करना; आँखों एवं सभी इंद्रियों पर सतर्क सावधानी रखना; संयम रखना, पवित्र संगति रखना, वस्त्र-पहनावे में शीलता; जिन लोगों के पास आत्म-संयम नहीं है, उन लोगों द्वारा विवाह करना, वैवाहिक प्रेम करना, और यौन-सम्बन्ध बनाना; अपने सभी कार्यों में सतत परिश्रम करना; अस्वच्छता के सभी कारणों से दूर रहना, और उसके सभी प्रलोभनों का विरोध करना।

1 थिस्सलुनीकियों 4:4; अय्यूब 31:1; 1 कुरिन्थियों 7:34; कुलुस्सियों 4:6; 1 पतरस 3:2; 1 कुरिन्थियों 7:2, 35 – 36; अय्यूब 31:1; प्रेरितों के काम 24:24 – 25; नीतिवचन 2:16 – 20; 1 तीमुथियुस 2:9; 1 कुरिन्थियों 7:2, 9; नीतिवचन 5:19 – 20; 1 पतरस 3:7; नीतिवचन 31:11, 27 – 28; नीतिवचन 5:8; उत्पत्ति 39:8 – 10.

प्रश्न 139: सातवीं आज्ञा में कौन से पाप निषिद्ध हैं?

उत्तर: अपेक्षित कर्तव्यों की उपेक्षा के अतिरिक्त, सातवीं आज्ञा में निषिद्ध पाप हैं, व्यभिचार, परस्त्रीगमन, बलात्कार, अपने परिवार वालों के साथ यौन सम्बन्ध, समलैंगिकता, और सभी प्रकार की अप्राकृतिक वासनाएं; सभी अशुद्ध कल्पनाएँ, विचार, उद्देश्य और भावनाएँ; सभी भ्रष्ट या गन्दे वार्तालाप, या उन्हें सुनना; कामुकतापूर्ण दृष्टि; निर्लज्ज या संस्कारहीन व्यवहार; अश्लील पहनावा; कानूनी विवाहों को रोकना, और गैरकानूनी विवाहों को होने देना; वेश्यालयों को चलाने की अनुमति देना व उन्हें सहन करना, और वहाँ जाना; अकेले जीवन जीने की प्रतिज्ञाओं को उलझाना; विवाह करने में अनुचित देरी करना; एक ही समय में एक से अधिक पत्नियाँ या पति रखना; अन्यायपूर्ण तलाक एवं परित्याग; आलस्य, पेटूपन, शराबीपन, दुष्ट संगति; कामुकता भरे गीत, पुस्तकें, चित्र, नृत्य, मंच नाटक; स्वयं अपने में या दूसरों में, उत्तेजना के सभी रूप, या अशुद्धता के कार्य।

नीतिवचन 5:7; इब्रानियों 13:4; गलातियों 5:19; 2 शमूएल 13:14; 1 कुरिन्थियों 5:1; रोमियों 1:24, 26 – 27; लैव्यव्यवस्था 20:15 – 16; मत्ती 5:28; मत्ती 15:19; कुलुस्सियों 3:5;

इफिसियों 5:3 – 4; नीतिवचन 7:5, 21 – 22; यशायाह 3:16; 2 पतरस 2:14; नीतिवचन 7:10, 13; 1 तीमुथियुस 4:3; लैव्यव्यवस्था 18:1 – 21; मरकुस 6:18; मलाकी 2:11 – 12; 1 राजा 15:12; 2 राजा 23:7; व्यवस्थाविवरण 23:17 – 18; लैव्यव्यवस्था 19:29; यिर्मयाह 5:7; नीतिवचन 7:24 – 27; मत्ती 19:10 – 11; 1 कुरिन्थियों 7:7 – 9; उत्पत्ति 38:26; मलाकी 2:14 – 15; मत्ती 19:5; मलाकी 2:16; मत्ती 5:32; 1 कुरिन्थियों 7:12 – 13; यहेजकेल 16:49; नीतिवचन 23:30 – 33; उत्पत्ति 39:10; नीतिवचन 5:8; इफिसियों 5:4; यहेजकेल 23:14 – 16; यशायाह 23:15 – 17; यशायाह 3:16; मरकुस 6:22; रोमियों 13:13; 1 पतरस 4:3; 2 राजा 9:30; यिर्मयाह 4:30; यहेजकेल 23:40.

प्रश्न 140: आठवीं आज्ञा कौन सी है?

उत्तर: आठवीं आज्ञा है, तू चोरी न करना।

निर्गमन 20:15.

प्रश्न 141: आठवीं आज्ञा में कौन से कर्तव्य अपेक्षित हैं?

उत्तर: आठवीं आज्ञा में अपेक्षित कर्तव्य हैं, मनुष्य और मनुष्य के बीच अनुबंधों एवं वाणिज्य में सत्यता, विश्वासयोग्यता, और न्याय का होना; सब मनुष्यों को उनका समुचित अधिकार देना; अवैध रूप से हिरासत में लिए गए समान को उसके सही स्वामी को वापस देना; अपनी क्षमताओं और दूसरों की आवश्यकता के अनुसार स्वतंत्र रूप से देना और उधार देना; सांसारिक वस्तुओं के सम्बन्ध में हमारे निर्णयों, इच्छाओं, और स्नेह का संयम होना; उन वस्तुओं को प्राप्त करने, रखने, उपयोग करने और निपटान करने के लिए दूरदर्शिता वाली देखभाल एवं अध्ययन करना, जो हमारी प्रकृति के पोषण के लिए आवश्यक एवं सुविधाजनक हैं, और हमारी स्थिति के लिए उपयुक्त हैं; न्यायोचित जीवन वृत्ति, और उस में परिश्रम करना; मितव्ययिता; अनावश्यक कानून-मुकदमा, और जमानत, या इसी के समान अन्य प्रतिबद्धताओं से बचना; और दूसरों के साथ-साथ स्वयं अपने धन एवं बाहरी सम्पत्ति को प्राप्त करने, संरक्षित करने और आगे बढ़ाने के लिए सभी उचित एवं वैध तरीकों से प्रयास करना।

भजन संहिता 15:2, 4; जकर्याह 7:4, 10; जकर्याह 8:16 – 17; रोमियों 13:7; लैव्यव्यवस्था

6:2 – 5; लूका 19:8; लूका 6:30, 38; 1 यूहन्ना 3:17; इफिसियों 4:28; गलातियों 6:10; 1 तीमुथियुस 6:6 – 9; गलातियों 6:14; 1 तीमुथियुस 5:8; नीतिवचन 27:23 – 27; सभोपदेशक 2:24; सभोपदेशक 3:12 – 13; 1 तीमुथियुस 6:17 – 18; यशायाह 38:1; मत्ती 11:8; 1 कुरिन्थियों 7:20; उत्पत्ति 2:15; उत्पत्ति 3:19; इफिसियों 4:28; नीतिवचन 10:4; यूहन्ना 6:12; नीतिवचन 21:20; 1 कुरिन्थियों 6:1 – 9; नीतिवचन 6:1 – 6; नीतिवचन 11:15; लैव्यव्यवस्था 25:35; व्यवस्थाविवरण 22:1 – 4; निर्गमन 23:4 – 5; उत्पत्ति 47:14, 20; फिलिप्पियों 2:4; मत्ती 22:39.

प्रश्न 142: आठवीं आज्ञा में कौन से पाप निषिद्ध हैं?

उत्तर: अपेक्षित कर्तव्यों की उपेक्षा के अतिरिक्त, आठवीं आज्ञा में निषिद्ध पाप हैं, चोरी, डकैती, मानव तस्करी, और चोरी की गई किसी भी वस्तु को प्राप्त करना; कपटपूर्ण व्यवहार; गलत बाट व माप; सीमा-चिह्नों को हटाना; मनुष्य और मनुष्य के बीच अनुबंधों में या भरोसे के मामलों में अन्याय एवं अविश्वासयोग्यता; अत्याचार उत्पीड़न; ज़बरदस्ती वसूली करना; सूदखोरी; रिश्वतखोरी; कष्टप्रद मुकदमे; अन्यायपूर्ण बाड़ेबंदी और निर्वासन; मूल्य बढ़ाने के लिए वस्तुओं को हड़पना, गैरकानूनी जीवन-वृत्ति, और हमारे पड़ोसी से जो कुछ उसका है उसे लेने या हड़पने, या स्वयं को समृद्ध करने के अन्य सभी अन्यायपूर्ण या पापमय तरीकों को अपनाना; लोभ लालच; सांसारिक वस्तुओं को अत्यधिक महत्व देना और प्रेम करना; उन्हें प्राप्त करने, रखने, एवं उपयोग करने में अविश्वासपूर्ण व ध्यान भटकाने वाली चिंताएँ व सोच-विचार; दूसरे लोगों की समृद्धि से ईर्ष्या करना; इसी प्रकार आलस्य, अपव्यय और जुआ खेलना; और अन्य ऐसे सभी तरीके जिनसे हम अपनी बाहरी सम्पत्ति के प्रति अनुचित पूर्वाग्रह रखते हैं, और उस सम्पत्ति के उचित उपयोग एवं सुख-विलास से स्वयं को धोखा देना, जिसे परमेश्वर ने हमें दिया है।

याकूब 2:15 – 16; 1 यूहन्ना 3:17; इफिसियों 4:28; भजन संहिता 62:10; 1 तीमुथियुस 1:10; नीतिवचन 29:24; भजन संहिता 1:18; 1 थिस्सलुनीकियों 4:6; नीतिवचन 11:1; नीतिवचन 20:10; व्यवस्थाविवरण 19:14; नीतिवचन 23:10; आमोस 8:5; भजन संहिता 37:21; लूका 16:10 – 12; यहेजकेल 22:29; लैव्यव्यवस्था 25:17; मत्ती 23:25; यहेजकेल 22:12; भजन संहिता 15:5; अय्यूब 15:34; 1 कुरिन्थियों 6:6 – 8; नीतिवचन 3:29 – 30; यशायाह 5:8; मीका 2:2; नीतिवचन 11:26; प्रेरितों के काम 19:19, 24 – 25; अय्यूब 20:19; याकूब 5:4;

नीतिवचन 21:6; लूका 12:15; 1 तीमुथियुस 6:5; कुलुस्सियों 3:2; नीतिवचन 23:5; भजना संहिता 62:10; मत्ती 6:25, 31, 34; सभोपदेशक 5:12; भजन संहिता 73:3; भजन संहिता 37:1, 7; 2 थिस्सलुनीकियों 3:11; नीतिवचन 18:9; नीतिवचन 23:20 – 21; नीतिवचन 28:19; सभोपदेशक 4:8; सभोपदेशक 6:2; 1 तीमुथियुस 5:8.

प्रश्न 143: नवीं आज्ञा कौन सी है?

उत्तर: नवीं आज्ञा है, तू अपने पड़ोसी के विरुद्ध झूठी साक्षी न देना।

निर्गमन 20:16.

प्रश्न 144: नौवीं आज्ञा अपेक्षित कर्तव्य क्या हैं?

उत्तर: नौवीं आज्ञा में अपेक्षित कर्तव्य हैं, मनुष्य और मनुष्य के बीच सत्य को, और स्वयं हमारे साथ-साथ, हमारे पड़ोसी के अच्छे नाम को संरक्षित करना एवं बढ़ावा देना: सत्य के लिए उपस्थित एवं खड़ा होना; और निर्णय एवं न्याय के मामलों में, और ऐसी ही अन्य सभी बातों में हृदय से, विश्वासयोग्यता से, स्वतंत्र रूप से, स्पष्टता से और सम्पूर्णता से सच और केवल सच बोलना; अपने पड़ोसी के प्रति परोपकारिता वाला सम्मान; उनके भले नाम से प्रेम करना, चाहना और आनन्द मनाना; उनकी दुर्बलताओं के लिए दुःखी होना और उन्हें छिपाना; उनकी योग्यताओं एवं वरदानों को स्वतंत्र रूप से स्वीकार करना, उनकी निर्दोषता का बचाव करना; उनके सम्बन्ध में अच्छी रिपोर्ट को तुरन्त स्वीकार करना और बुरी रिपोर्ट को स्वीकार करने में अनिच्छा दिखाना; भांजीमार, चापलूसों, और निन्दा करने वालों को हतोत्साहित करना; अपने भले नाम के प्रति प्रेम रखना और सावधान रहना, और आवश्यकता पड़ने पर उसकी रक्षा करना; वैध प्रतिज्ञाओं को पूरा करना; जो बातें उचित, विश्वासयोग्य, मनभावनी, और सद्गुण की हैं, उन पर ध्यान लगाना और उनका पालन करना।

जकर्याह 8:16; 3 यूहन्ना 1:12; नीतिवचन 31:8 – 9; भजन संहिता 15:2; 2 इतिहास 19:9; 1 शमूएल 19:4 – 5; यहोशू 7:19; 2 शमूएल 14:18 – 20; लैव्यव्यवस्था 19:15; नीतिवचन 14:5, 25; 2 कुरिन्थियों 1:17 – 18; इफिसियों 4:25; इब्रानियों 6:9; 1 कुरिन्थियों 13:7;

रोमियों 1:8; 2 यूहन्ना 1:4; 3 यूहन्ना 1:3 – 4; 1 कुरिन्थियों 1:4 – 5, 7; 2 तीमुथियुस 1:4 – 5; 1 शमूएल 22:14; 1 कुरिन्थियों 13:6 – 7; भजन संहिता 15:3; नीतिवचन 25:23; नीतिवचन 26:24 – 25; भजन संहिता 101:5; नीतिवचन 22:1; यूहन्ना 8:49; भजन संहिता 15:4; फिलिप्पियों 4:8; 2 कुरिन्थियों 2:4; 2 कुरिन्थियों 12:21; नीतिवचन 17:9; 1 पतरस 4:8.

प्रश्न 145: नौवीं आज्ञा में निषिद्ध पाप क्या हैं?

उत्तर: नौवीं आज्ञा में निषिद्ध पाप है, सत्य, और हमारे साथ-साथ हमारे पड़ोसी के सुनाम के लिए सभी पूर्वाग्रह पैदा करना, विशेष रूप से सार्वजनिक न्यायपालिका में; झूठी साक्षी देना; झूठे गवाहों को दुष्प्रेरित करना; किसी दुष्ट कारण के लिए न्यायालय में जानबूझकर उपस्थित होना और वकालत करना; सत्य को हराना और उस पर दबाव डालना; अन्यायपूर्ण दण्ड सुनाना; बुरे को अच्छा, और अच्छे को बुरा कहना; धर्मी के कार्य के अनुसार दुष्ट को पुरस्कृत करना, और दुष्टों के कार्य के अनुसार धर्मी को दण्ड देना; जालसाजी करना; सत्य को छिपाना; उचित कारण में अनुचित चुप्पी बनाए रखना, और जब अधर्म के लिए स्वयं हमसे निन्दा करने की, या दूसरों से शिकायत करने की माँग की जाती है तो अपनी चुप्पी को बनाए रखना; सत्य या न्याय के पूर्वाग्रह के लिए बेसमय सच बोलना, या दुर्भावनापूर्वक गलत अर्थ में, या संदिग्ध रूप में एवं इसी के समान अभिव्यक्तियों में सत्य को विकृत करना; असत्य बोलना, झूठ बोलना, बदनामी करना, चुगली करना, कलंकित करना, झूठी कहानियाँ बनाना, कानाफूसी करना, उपहास करना, निन्दा करना, उतावलापन, कठोर, एवं आंशिक रूप से अपराधी ठहराना; अभिप्रायों, वचनों, एवं कार्यों का गलत अर्थ निकालना; चापलूसी, व्यर्थ डींगे हांकना, अपने या दूसरों के विषय में बहुत ऊँचा या बहुत तुच्छ रीति से सोचना या बोलना; परमेश्वर के वरदानों एवं कृपा को नकारना; छोटे दोषों को बड़ा-चढ़ा कर दिखाना; जब स्वतंत्र रूप से पाप-स्वीकृति के लिए कहा जाता है तो पापों को छिपाना, बहाना बनाना या उन्हें कम करके आँकना; दोषों को अनावश्यक रूप से खोजना; झूठी अफवाहों को फैलाना, बुरी सूचनाओं को सुनना और उनका अनुमोदन करना और उचित बचाव के लिए अपने कानों को बंद करना;दुष्टता से संदेह करना; किसी दूसरे व्यक्ति के योग्य

श्रेय से ईर्ष्या करना या दुखी होना, उसे नीचा दिखाने का प्रयास करना या उसकी इच्छा करना, उनके अपमान एवं बदनामी पर आनन्द मनाना; तिरस्कारपूर्ण अवमानना; मूर्खतापूर्वक प्रशंसा करना; वैध प्रतिज्ञाओं का उल्लंघन; ऐसी बातों की उपेक्षा करना जो सुनाम की हों; और दूसरों की बदनामी के लिए कार्य करना या स्वयं को नहीं रोकना, या जो हम दूसरों की बदनामी में कर सकते हैं उसमें बाधा नहीं डालना।

1 शमूएल 17:28; 2 शमूएल 16:3; 2 शमूएल 1:9 – 10, 15 – 16; लैव्यव्यवस्था 19:15; हबक्कूक 1:4; नीतिवचन 19:5; नीतिवचन 6:16, 19; प्रेरितों के काम 6:13; यिर्मयाह 9:3, 5; प्रेरितों के काम 24:2, 5; भजन संहिता 12:3 – 4; भजन संहिता 52:1 – 4; नीतिवचन 17:15; 1 राजा 21:9 – 14; यशायाह 5:23; भजन संहिता 119:69; लूका 19:8; लूका 16:5 – 7; लैव्यव्यवस्था 5:1; व्यवस्थाविवरण 13:8; प्रेरितों के काम 5:3, 8 – 9; 2 तीमुथियुस 4:16; 1 राजा 1:6; लैव्यव्यवस्था 19:17; यशायाह 59:4; नीतिवचन 29:11; 1 शमूएल 22:9 – 10; भजन संहिता 52:1 – 5; भजन संहिता 56:5; यूहन्ना 2:19; मत्ती 26:60 – 61; उत्पत्ति 3:5; उत्पत्ति 26:7, 9; यशायाह 59:13; लैव्यव्यवस्था 19:11; कुलुस्सियों 3:9; भजन संहिता 50:20; भजन संहिता 15:3; याकूब 4:11; यिर्मयाह 38:4; लैव्यव्यवस्था 19:16; रोमियों 1:29 – 30; उत्पत्ति 21:9; गलातियों 4:29; 1 कुरिन्थियों 6:10; मत्ती 7:1; प्रेरितों के काम 28:4; उत्पत्ति 38:24; रोमियों 2:1; नहेम्याह 6:6 – 8; रोमियों 3:8; भजन संहिता 69:10; 1 शमूएल 1:13 – 15; 2 शमूएल 10:3; भजन संहिता 12:2 – 3; 2 तीमुथियुस 3:2; लूका 18:9, 11; रोमियों 12:16; 1 कुरिन्थियों 4:6; प्रेरितों के काम 12:22; निर्गमन 4:10 – 14; अय्यूब 27:5 – 6; अय्यूब 4:6; मत्ती 7:3 – 5; नीतिवचन 25:9 – 10; निर्गमन 23:1; नीतिवचन 29:12; प्रेरितों के काम 7:56 – 57; अय्यूब 31:13 – 14; 1 कुरिन्थियों 13:5; 1 तीमुथियुस 6:4; गिनती 11:29; मत्ती 21:15; एज्रा 4:12 – 13; यिर्मयाह 48:27; भजन संहिता 35:15 – 16, 21; मत्ती 27:28 – 29; यहूदा 1:16; प्रेरितों के काम 12:22; रोमियों 1:31; 2 तीमुथियुस 3:3; 1 शमूएल 2:24; 2 शमूएल 13:12 – 13; नीतिवचन 5:8 – 9; नीतिवचन 6:33.

प्रश्न 146: दसवीं आज्ञा कौन सी है?

उत्तर: दसवीं आज्ञा है, तू किसी के घर का लालच न करना, न तो किसी की स्त्री का लालच करना, न किसी के दास का, न ही किसी की दासी का या बैल-गदहे का, न अपने पड़ोसी की किसी वस्तु का लालच करना।

निर्गमन 20:17.

प्रश्न 147: दसवीं आज्ञा में अपेक्षित कर्तव्य क्या हैं?

उत्तर: दसवीं आज्ञा में अपेक्षित कर्तव्य हैं, हमारी स्वयं की परिस्थिति के साथ पूर्ण संतुष्टि, और अपने पड़ोसी के प्रति सम्पूर्ण हृदय से परोपकारी वाली अभिवृत्ति, जिससे कि हमारे हृदय की सभी भावनाएँ और स्नेह उसे प्रभावित करती हों, उसकी ओर प्रवृत्त होती हों, और जो कुछ उसका है उसमें उसकी वृद्धि करती हो।

इब्रानियों 13:5; 1 तीमुथियुस 6:6; अय्यूब 31:29; रोमियों 12:15; भजन संहिता 122:7 – 9; 1 तीमुथियुस 1:5; एस्तेर 10:3; 1 कुरिन्थियों 13:4 – 7.

प्रश्न 148: दसवीं आज्ञा में कौन से पाप निषिद्ध हैं?

उत्तर: दसवीं आज्ञा में निषिद्ध पाप हैं, अपनी सम्पत्ति से असंतोष रहना, अपने पड़ोसी की भलाई पर ईर्ष्या करना, एवं दुःखी होना, साथ में उसके किसी भी वस्तु के प्रति अनुचित व्यवहार एवं गलत भावना रखना।

1 राजा 21:4; एस्तेर 5:13; 1 कुरिन्थियों 10:10; गलातियों 5:26; याकूब 3:14, 16; भजना संहिता 112:9 – 10; नहेम्याह 2:10; रोमियों 7:7 – 8; रोमियों 13:9; कुलुस्सियों 3:5; व्यवस्थाविवरण 5:21.

प्रश्न 149: क्या कोई मनुष्य परमेश्वर की आज्ञाओं का पालन करने में पूर्णतः सक्षम है?

उत्तर: कोई भी मनुष्य, स्वयं अपने आप से, या इस जीवन में प्राप्त किसी भी अन्य अनुग्रह के द्वारा परमेश्वर की आज्ञाओं का पूर्ण रीति से पालन करने में सक्षम नहीं है; परन्तु वह उन्हें अपने मन, वचन और कर्म में प्रतिदिन तोड़ता है।

याकूब 3:2; यूहन्ना 15:5; रोमियों 8:3; सभोपदेशक 7:20; 1 यूहन्ना 1:8, 10; गलातियों 5:17; रोमियों 7:18 – 19; उत्पत्ति 6:5; उत्पत्ति 8:21; रोमियों 3:9 – 19; याकूब 3:2 – 13.

प्रश्न 150: क्या परमेश्वर की व्यवस्था के सभी उल्लंघन, स्वयं में और परमेश्वर की दृष्टि में समान रूप से घृणित हैं?

उत्तर: परमेश्वर की व्यवस्था के सभी उल्लंघन समान रूप से घृणित नहीं हैं; परन्तु कुछ पाप स्वयं में और अनेक विकृतियों के कारण, परमेश्वर की दृष्टि में अन्य पापों की तुलना में अधिक घृणित हैं।

यूहन्ना 19:11; यहेजकेल 8:6, 13, 15; 1 यूहन्ना 5:16; भजन संहिता 78:17, 32, 56.

प्रश्न 151: वे कौन सी विकृतियाँ हैं जो कुछ पापों को अन्यों की तुलना में अधिक घृणित बनाते हैं?

उत्तर: पापों को उनकी विकृतियाँ प्राप्त होती हैं,

1. अपराध करने वाले व्यक्ति से: यदि वे परिपक्व आयु, अधिक अनुभव या अनुग्रहयुक्त, सेवा, वरदानों, स्थान, पद में श्रेष्ठ हैं, दूसरों के लिए मार्गदर्शक है, और जिनके नमूने का अनुसरण दूसरों के द्वारा किए जाने की अधिक सम्भावना है।
2. जिन पक्षों के विरुद्ध अपराध किया गया उनसे: यदि प्रत्यक्ष रूप से परमेश्वर, उसके गुणों, एवं आराधना के विरुद्ध; ख्रीष्ट एवं उसके अनुग्रह के विरुद्ध; पवित्र आत्मा, उसकी साक्षी, एवं कार्यों के विरुद्ध; वरिष्ठ लोगों, प्रतिष्ठित व्यक्तियों, और ऐसे लोगों के विरुद्ध जिनसे हम विशेष रूप से सम्बन्धित एवं वचनबद्ध हैं; किसी भी संत, विशेषकर विश्वास में कमजोर भाइयों के विरुद्ध, उनकी आत्माओं या किसी अन्य के विरुद्ध, और सभी या अनेक लोगों की सामान्य भलाई के विरुद्ध।
3. अपराध के स्वभाव एवं संगीनता से: यदि यह व्यवस्था के स्पष्ट वचनों के विरुद्ध है, कई आज्ञाओं को तोड़ता है, इसमें कई पाप सम्मिलित हैं: यदि यह न केवल हृदय में कल्पना की गई है, बल्कि वचनों एवं कार्यों में दिखाई देती है, दूसरों को अपमानित करती है, और क्षतिपूर्ति को स्वीकार नहीं करता है: यदि यह अनुग्रह के साधनों, करुणा, न्याय, प्रकृति के प्रकाश, विवेक की दोष-सिद्धि,

सार्वजनिक एवं निजी चेतावनी, कलीसिया की डाँट, नागरिक दण्ड के विरुद्ध है; और हमारी प्रार्थनाओं, उद्देश्यों, प्रतिज्ञाओं, शपथ, वाचा और परमेश्वर या मनुष्य के साथ प्रतिबद्धता के विरुद्ध है: यदि यह जानबूझकर, अभिमानपूर्वक, निर्लज्जता से, डींग मारते हुए, दुर्भावनापूर्ण रीति से, बार-बार, हठपूर्वक, तुष्टि के साथ, निरन्तरता के साथ, या पश्चाताप के पश्चात् दोबारा किया गया है।

4. समय एवं स्थान की परिस्थितियों से: यदि प्रभु के दिन, या परमेश्वर की आराधना के अन्य समयों पर; या इनसे तुरन्त पहले या बाद में, या ऐसे निष्फल योजनाओं को रोकने या उपचार करने के लिए अन्य सहायता: यदि सार्वजनिक में, या अन्य लोगों की उपस्थित में, जिनके कारण उन लोगों के उकसाए जाने या अपवित्र होने की सम्भावना है।

यिर्मयाह 2:8; याकूब 32:7; सभोपदेशक 4:13; 1 राजा 11:4, 9; 2 शमूएल 12:14; 1 कुरिन्थियों 5:1; याकूब 4:17; लूका 12:47 – 48; यिर्मयाह 5:4 – 5; 2 शमूएल 12:7 – 9; यहेजकेल 8:11 – 12; रोमियों 2:17 – 24; गलातियों 2:11 – 14; मत्ती 21:38 – 39; 1 शमूएल 2:25; प्रेरितों के काम 5:4; भजन संहिता 51:4; रोमियों 2:4; मलाकी 1:8, 14; इब्रानियों 2:3 – 3; इब्रानियों 12:25; इब्रानियों 10:29; मत्ती 12:31 – 32; इफिसियों 4:30; इब्रानियों 6:4 – 6; यहूदा 1:8; गिनती 12:8 – 9; यशायाह 3:5; नीतिवचन 30:17; 2 कुरिन्थियों 12:15; भजन संहिता 55:12 – 15; सपन्याह 2:8, 10 – 11; मत्ती 18:6; 1 कुरिन्थियों 6:8; प्रकाशितवाक्य 17:6; 1 कुरिन्थियों 8:11 – 12; रोमियों 14:13, 15, 21; यहेजकेल 13:19; 1 कुरिन्थियों 8:12; प्रकाशितवाक्य 18:12 – 13; मत्ती 23:15; 1 थिस्सलुनीकियों 2:15 – 16; यहोशू 22:20; नीतिवचन 6:30 – 33; एज्रा 9:10 – 12; 1 राजा 11:9 – 10; कुलुस्सियों 3:5; 1 तीमुथियुस 6:10; नीतिवचन 5:8 – 12; नीतिवचन 6:32 – 33; यहोशू 7:21; याकूब 1:14 – 15; मत्ती 5:22; मीका 2:1; मत्ती 18:7; रोमियों 2:23 – 24; व्यवस्थाविवरण 22:22, 28 – 29; नीतिवचन 6:32 – 35; मत्ती 11:21 – 24; यूहन्ना 15:22; यशायाह 1:3; व्यवस्थाविवरण 32:6; आमोस 4:8 – 11; यिर्मयाह 5:3; रोमियों 1:26 – 27; रोमियों 1:32; दानिय्येल 5:22; तीतुस 3:10 – 11; नीतिवचन 29:1; तीतुस 3:10; मत्ती 18:17; नीतिवचन 27:22; नीतिवचन 23:35; भजन संहिता 78:34 – 37; यिर्मयाह 2:20; यिर्मयाह 42:5 – 6, 20, 21; सभोपदेशक 5:4 – 6; नीतिवचन 20:25; लैव्यव्यवस्था 26:25; नीतिवचन 2:17; यहेजकेल 17:18 – 19; भजन संहिता 36:4; यिर्मयाह 6:16; गिनती 15:30; निर्गमन 21:14; यिर्मयाह 3:3; नीतिवचन 7:13; भजन संहिता 52:1; 3 यूहन्ना 1:10; गिनती 14:22; जकर्याह 7:11 – 12; नीतिवचन 2:14; यशायाह 57:17; यिर्मयाह 34:8 – 11; 2 पतरस 2:20 – 22; 2 राजा 5:26; यिर्मयाह 7:10;

यशायाह 26:10; यहेजकेल 23:37 – 39; यशायाह 58:3 – 5; गिनती 25:6 – 7; 1 कुरिन्थियों 11:20 – 21; यिर्मयाह 7:8 – 10; नीतिवचन 7:14 – 15; यूहन्ना 13:27, 30; एज्रा 9:13 – 14; 2 शमूएल 16:22; 1 शमूएल 2:22 – 24.

प्रश्न 152: प्रत्येक पाप परमेश्वर के न्याय अनुसार किस दण्ड के योग्य है?
उत्तर: प्रत्येक पाप, छोटे से छोटा भी, परमेश्वर की सम्प्रभुता, भलाई एवं पवित्रता, और उसके धर्मी व्यवस्था के विरुद्ध होने के कारण, दोनों इस जीवन और आने वाले जीवन में, उसके क्रोध एवं अभिशाप के दण्ड-योग्य है और केवल ख्रीष्ट के लहू के अतिरिक्त इसका प्रायश्चित किसी भी रीति से नहीं किया जा सकता है।

याकूब 2:10 – 11; निर्गमन 20:1 – 2; हबक्कूक 1:13; लैव्यव्यवस्था 10:3; लैव्यव्यवस्था 11:44 – 45; 1 यूहन्ना 3:4; रोमियों 7:12; इफिसियों 5:6; गलातियों 3:10; विलापगीत 3:39; व्यवस्थाविवरण 28:15 – 68; मत्ती 25:41; इब्रानियों 9:22; 1 पतरस 1:18 – 19.

प्रश्न 153: परमेश्वर हमसे क्या अपेक्षा करता है कि हम उसके क्रोध एवं अभिशाप से बच सकें, जो व्यवस्था के उल्लंघन के कारण हमारे ऊपर है?
उत्तर: ताकि हम परमेश्वर के क्रोध एवं अभिशाप से बच सकें, जो व्यवस्था के उल्लंघन के कारण हमारे ऊपर है, वह हमसे परमेश्वर के प्रति पश्चाताप, और प्रभु यीशु ख्रीष्ट के प्रति हमारे विश्वास, और बाहरी अनुग्रह के साधनों के परिश्रमी उपयोग की अपेक्षा करता है, जिनके द्वारा ख्रीष्ट अपनी बिचवई के लाभों को हमें प्रदान करता है।

प्रेरितों के काम 20:21; मत्ती 3:7 – 8; लूका 13:3, 5; प्रेरितों के काम 16:30 – 31; यूहन्ना 3:16, 18; नीतिवचन 2:1 – 5; नीतिवचन 8:33 – 36.

प्रश्न 154: वे बाहरी साधन कौन से हैं, जिनके द्वारा ख्रीष्ट हमें अपनी मध्यस्थता के लाभों को प्रदान करता है?
उत्तर: वे बाहरी एवं सामान्य साधन जिनके द्वारा ख्रीष्ट अपनी कलीसिया

को अपनी मध्यस्थता के लाभों को प्रदान करता है, वे सभी उसके अध्यादेश हैं; विशेष रूप से वचन (बाइबल), पवित्र संस्कार, एवं प्रार्थना: ये सभी चुने हुए लोगों के लिए उनके उद्धार हेतु प्रभावशाली बनाए जाते हैं।

मत्ती 28:19 – 20; प्रेरितों के काम 2:42, 46 – 47.

प्रश्न 155: वचन को उद्धार के निमित्त कैसे प्रभावशाली बनाया जाता है?

उत्तर: परमेश्वर का आत्मा वचन के पढ़े जाने को, लेकिन विशेष रूप से वचन का प्रचार, पापियों को प्रबुद्ध करने, कायल करने, और नम्र बनाने के लिए एक प्रभावशाली साधन बनाता है; उन्हें स्वयं पर भरोसा करने से दूर करता है, और उन्हें ख्रीष्ट की ओर आकर्षित करता है; उन्हें उसके स्वरूप सदृश्य बनाता है, और उन्हें उसकी इच्छा के अधीन करता है; परीक्षाओं और भ्रष्टताओं के विरुद्ध उन्हें सामर्थ्य प्रदान करता है; अनुग्रह में उनको बढ़ाता है, और उद्धार के निमित्त विश्वास के द्वारा उनके हृदयों को पवित्रता एवं उन्हें आश्वासन में स्थापित करता है।

नहेम्याह 8:8; प्रेरितों के काम 26:18; भजन संहिता 19:8; 1 कुरिन्थियों 14:24 – 25; 2 इतिहास 34:18 – 19, 26 – 28; प्रेरितों के काम 2:37, 41; प्रेरितों के काम 8:27 – 39; 2 कुरिन्थियों 3:18; 2 कुरिन्थियों 10:4 – 6; रोमियों 6:17; मत्ती 4:4, 7, 10; इफिसियों 6:16 – 17; भजन संहिता 19:11; 1 कुरिन्थियों 10:11; प्रेरितों के काम 20:32; 2 तीमुथियुस 3:15 – 17; रोमियों 16:25; 1 थिस्सलुनीकियों 3:2, 10 – 11, 13; रोमियों 15:4; रोमियों 10:13 – 17; रोमियों 1:16.

प्रश्न 156: क्या परमेश्वर का वचन सभी लोगों द्वारा पढ़ा जाना चाहिए?

उत्तर: हालाँकि सभी लोगों को मण्डली के लिए सार्वजनिक रूप से वचन को पढ़ने की अनुमति नहीं है, फिर भी सभी प्रकार के लोग इसे स्वयं अपने से, और अपने परिवारों के साथ पढ़ने के लिए बाध्य हैं; इस कारण, पवित्र शास्त्र को मूल भाषा से जनसाधारण की भाषा में अनुवाद करना चाहिए।

व्यवस्थाविवरण 31:9, 11 – 13; नहेम्याह 8:2 – 3; नहेम्याह 9:3 – 5; व्यवस्थाविवरण

17:19; प्रकाशितवाक्य 1:3; यूहन्ना 5:39; यशायाह 34:16; व्यवस्थाविवरण 6:6 – 9; उत्पत्ति 18:17, 19; भजन संहिता 78:5 – 7; 1 कुरिन्थियों 14:6, 9, 11 – 12, 15 – 16, 24, 27 – 28.

प्रश्न 157: परमेश्वर के वचन को कैसे पढ़ा जाना चाहिए?

उत्तर: इस दृढ़ विश्वास के साथ कि यह परमेश्वर के यथार्थ वचन हैं; और केवल वही हमें उन्हें समझने के लिए सक्षम बना सकता है; उनमें प्रकट परमेश्वर की इच्छा को जानने, विश्वास करने, और आज्ञापालन की इच्छा के साथ; उनकी विषय-वस्तु एवं उनके विषय-क्षेत्र पर लगन एवं ध्यान देने के साथ; मनन, अनुप्रयोग, आत्म-त्याग एवं प्रार्थना के साथ; पवित्र शास्त्र को उच्चतम एवं श्रद्धापूर्ण आदर के साथ पढ़ा जाना चाहिए।

भजन संहिता 19:10; नहेम्याह 8:3 – 10; निर्गमन 24:7; 2 इतिहास 34:27; यशायाह 66:2; 2 पतरस 1:19 – 21; लूका 24:45; 2 कुरिन्थियों 3:13 – 16; व्यवस्थाविवरण 17:19 – 20; प्रेरितों के काम 17:11; प्रेरितों के काम 8:30, 34; लूका 10:26 – 28; भजन संहिता 1:2; भजन संहिता 119:97; 2 इतिहास 34:21; नीतिवचन 3:5; व्यवस्थाविवरण 33:3; नीतिवचन 2:1 – 6; भजन संहिता 119:18; नहेम्याह 8:6, 8.

प्रश्न 158: परमेश्वर का वचन किसके द्वारा प्रचारित किया जाना चाहिए?

उत्तर: परमेश्वर का वचन केवल उन्हीं लोगों के द्वारा प्रचारित किया जाना चाहिए जो पर्याप्त रूप से इसके लिए वरदान-युक्त हैं, और साथ में इस पद के लिए विधिवत् अनुमोदित एवं बुलाए गए हैं।

1 तीमुथियुस 3:2, 6; इफिसियों 4:8 – 11; होशे 4:6; मलाकी 2:7; 2 कुरिन्थियों 3:6; यिर्मयाह 14:15; रोमियों 10:15; इब्रानियों 5:4; 1 कुरिन्थियों 12:28 – 29; 1 तीमुथियुस 3:10; 1 तीमुथियुस 4:14; 1 तीमुथियुस 5:22.

प्रश्न 159: परमेश्वर के वचन का प्रचार उन लोगों द्वारा कैसे किया जाना चाहिए जिन्हें इस कार्य के लिए बुलाया गया है?

उत्तर: जिन लोगों को वचन की सेवकाई में परिश्रम करने के लिए बुलाया गया है, उन्हें समय और असमय, यत्न के साथ; स्पष्ट शब्दों में, मनुष्य के

ज्ञान के लुभावने वाली बातों में नहीं, परन्तु आत्मा और सामर्थ्य में; विश्वासयोग्यता से, परमेश्वर के सम्पूर्ण अभिप्राय को पूरी रीति से बता कर; बुद्धिमानी से, उन्हें सुनने वालों की आवश्यकताओं एवं क्षमताओं के अनुसार लागू करके; उत्साहपूर्वक, परमेश्वर और उसके लोगों के प्राणों के प्रति उत्कट प्रेम के साथ; सच्चाई से, परमेश्वर की महिमा, और उसके लोगों के मन-फिराव, आत्मिक उन्नति, और उद्धार का लक्ष्य रखते हुए, विश्वासयोग्य वचन का प्रचार करना चाहिए।

तीतुस 2:1, 8; प्रेरितों के काम 18:25; 2 तीमुथियुस 4:2; 1 कुरिन्थियों 14:19; 1 कुरिन्थियों 2:4; यिर्मयाह 23:28; 1 कुरिन्थियों 4:1 – 2; प्रेरितों के काम 20:27; कुलुस्सियों 1:28; 2 तीमुथियुस 2:15; 1 कुरिन्थियों 3:2; इब्रानियों 5:12 – 14; लूका 12:42; प्रेरितों के काम 18:25; 2 कुरिन्थियों 5:13 – 14; फिलिप्पियों 1:15 – 17; कुलुस्सियों 4:12; 2 कुरिन्थियों 12:15; 2 कुरिन्थियों 2:17; 2 कुरिन्थियों 4:2; 1 थिस्सलुनीकियों 2:4 – 6; यूहन्ना 7:18; 1 कुरिन्थियों 9:19 – 22; 2 कुरिन्थियों 12:19; इफिसियों 4:12; 1 तीमुथियुस 4:16; प्रेरितों के काम 26:16 – 18.

प्रश्न 160: जो लोग परमेश्वर के वचन का प्रचार सुनते हैं उनसे क्या अपेक्षा की जाती है?

उत्तर: जो लोग परमेश्वर के वचन का प्रचार सुनते हैं, उनसे यह अपेक्षा की जाती है कि वे लगन, तैयारी, और प्रार्थना के साथ उसे सुनें; जो कुछ वे पवित्रशास्त्र से सुनते हैं उसकी जाँच करें; परमेश्वर के वचन के रूप में सत्य को विश्वास, प्रेम, नम्रता, और मन की तत्परता के साथ ग्रहण करें; उस पर मनन, एवं विचार-विमर्श करें; उसे अपने मनों में रखें, और इसके फल को अपने जीवन में लाएँ।

नीतिवचन 8:34; 1 पतरस 2:1 – 2; लूका 8:18; भजन संहिता 119:18; इफिसियों 6:18 – 19; प्रेरितों के काम 17:11; इब्रानियों 4:2; 2 थिस्सलुनीकियों 2:10; याकूब 1:21; प्रेरितों के काम 17:11; 1 थिस्सलुनीकियों 2:13; लूका 9:44; इब्रानियों 2:1; लूका 24:14; व्यवस्थाविवरण 6:6 – 7; नीतिवचन 2:1; भजन संहिता 119:11; लूका 8:15; याकूब 1:25.

प्रश्न 161: मसीही संस्कार उद्धार के प्रभावशाली साधन कैसे बनते हैं?

उत्तर: मसीही संस्कार, न तो उनमें स्वयं किसी शक्ति से, या जिनके द्वारा उनका संचालन किया जाता है उनकी धर्मनिष्ठा या अभिप्राय से प्राप्त किसी सद्गुण से; परन्तु केवल पवित्र आत्मा के कार्य और ख्रीष्ट की आशीष से, जिसके द्वारा इनकी स्थापना की गई है, उद्धार के प्रभावशाली साधन बनते हैं।

1 पतरस 3:21; प्रेरितों के काम 8:13, 23; 1 कुरिन्थियों 3:6 – 7; 1 कुरिन्थियों 12:13.

प्रश्न 162: मसीही संस्कार क्या है?

उत्तर: मसीही संस्कार ख्रीष्ट द्वारा अपनी कलीसिया में स्थापित एक पवित्र विधि है, जो अनुग्रह की वाचा के अंतर्गत आने वाले लोगों के लिए उसकी मध्यस्थता के लाभों को अभिप्रेत करने, छाप लगाने और प्रकट करने के लिए है; उनके विश्वास को दृढ़ करने एवं बढ़ाने के लिए, और सभी अनुग्रहों के लिए; उन्हें आज्ञाकारिता के लिए बाध्य करने के लिए; एक दूसरे के साथ उनके प्रेम और सहभागिता की गवाही देने एवं संजोए रखने के लिए; और उन्हें उन लोगों से अलग करने के लिए जो वाचा से बाहर के हैं।

उत्पत्ति 17:7; निर्गमन 12:1 – 51; मत्ती 28:19; मत्ती 26:26 – 28; रोमियों 4:11; 1 कुरिन्थियों 11:24 – 25; रोमियों 15:8; निर्गमन 12:48; प्रेरितों के काम 2:38; 1 कुरिन्थियों 10:16; रोमियों 4:11; गलातियों 3:27; रोमियों 6:3 – 4; 1 कुरिन्थियों 10:21; इफिसियों 4:2 – 5; 1 कुरिन्थियों 12:13; इफिसियों 2:11; उत्पत्ति 34:14.

प्रश्न 163: मसीही संस्कार के भाग क्या हैं?

उत्तर: मसीही संस्कार के दो भाग हैं: पहला, स्वयं ख्रीष्ट द्वारा ठहराए जाने के अनुसार उपयोग किया जाने वाला एक बाहरी एवं अनुभव-गम्य चिह्न; दूसरा है, इसके द्वारा हृदय में प्रकट किया जाने वाला आंतरिक एवं आत्मिक अनुग्रह।

मत्ती 3:11; 1 पतरस 3:21; रोमियों 2:28 – 29.

प्रश्न 164: नए नियम के तहत ख्रीष्ट ने अपनी कलीसिया में कितने मसीही संस्कार स्थापित किए हैं?

उत्तर: नए नियम के तहत ख्रीष्ट ने अपनी कलीसिया में केवल दो मसीही संस्कार स्थापित किए हैं, बपतिस्मा एवं प्रभु भोज।

मत्ती 28:19; 1 कुरिन्थियों 11:20, 23; मत्ती 26:26 – 28.

प्रश्न 165: बपतिस्मा क्या है?

उत्तर: बपतिस्मा नए नियम का एक मसीही संस्कार है, जिसमें ख्रीष्ट ने पिता, और पुत्र और पवित्र आत्मा के नाम में पानी से धोने को ठहराया है, जो कि स्वयं उसमें साटे जाने का, उसके लहू के द्वारा पापों की क्षमा का, और उसकी आत्मा के द्वारा नए-जन्म का; लेपालकपन का, और अनन्त जीवन के लिए पुनरुत्थान का एक चिह्न और छाप है; और जिसके द्वारा जिन लोगों को बपतिस्मा दिया जाता है, वे दृश्यमान कलीसिया में विधिपूर्वक ग्रहण किए जाते हैं, और सम्पूर्णता से केवल प्रभु के होने के लिए स्वतंत्र रूप से एवं अंगीकार किए गए प्रतिबद्धता में सम्मिलित होते हैं।

मत्ती 28:19; 2 कुरिन्थियों 11:20, 23; मत्ती 26:26 – 28; मत्ती 5:26; गलातियों 3:26 – 27; 1 कुरिन्थियों 15:29; रोमियों 6:5; 1 कुरिन्थियों 12:13; रोमियों 6:4.

प्रश्न 166: किन लोगों को बपतिस्मा दिया जाना चाहिए?

उत्तर: बपतिस्मा किसी भी ऐसे व्यक्ति को नहीं दिया जाना चाहिए, जो दृश्यमान कलीसिया से बाहर है, और इस प्रकार प्रतिज्ञा की गई वाचा से अनभिज्ञ है, जब तक वे ख्रीष्ट पर अपने विश्वास एवं उसके प्रति अपनी आज्ञाकारिता का अंगीकार नहीं करते हैं; लेकिन शिशुओं को भी बपतिस्मा दिया जाना चाहिए जो ऐसे माता-पिता के वंशज हैं, जिनमें या तो दोनों, या उनमें से एक ख्रीष्ट पर अपने विश्वास एवं उसके प्रति अपनी आज्ञाकारिता को अंगीकार करते हैं, और इस मायने में वे वाचा के भीतर हैं।

प्रेरितों के काम 8:36 – 37; प्रेरितों के काम 2:38; उत्पत्ति 17:7, 9; गलातियों 3:9, 14; कुलुस्सियों 2:11 – 12; प्रेरितों के काम 2:38 – 39; रोमियों 4:11 – 12; 1 कुरिन्थियों 7:14; मत्ती 28:19; लूका 18:15 – 16; रोमियों 11:16.

प्रश्न 167: किस प्रकार हमारा बपतिस्मा हमारे द्वारा बेहतर बनाया जाना चाहिए?

उत्तर: हमारे बपतिस्मा को बेहतर बनाने का आवश्यक लेकिन बहुत उपेक्षित कर्तव्य, हमारे द्वारा जीवन भर निभाना है, विशेष रूप से परीक्षा के समय में, और जब हम इसे दूसरों को दिए जाने के समय उपस्थित होते हैं, तो इसकी प्रकृति पर, और उन उद्देश्यों पर जिनके लिए ख्रीष्ट ने इसे स्थापित किया, इसके द्वारा प्रदान किए गए एवं छाप लगाई गई विशेषाधिकारों एवं लाभों पर, और उसमें की गई हमारी गम्भीर प्रतिज्ञा पर गम्भीरता एवं कृतज्ञता से विचार करके; हमारे पापपूर्ण गंदगी, बपतिस्मा के अनुग्रह और हमारे वचनबद्धताओं के अनुरूप जीवन न जीकर, और इसके विपरीत चलने के कारण, दीन बनकर; पापों की क्षमा के आश्वासन, और इस मसीही संस्कार में हमें दिए गए अन्य सभी आशीषों के सुनिश्चित होने में आत्मिक उन्नति करने के द्वारा; ख्रीष्ट की मृत्यु और पुनरुत्थान से शक्ति प्राप्त करके, जिसमें हम पाप को मारने, और अनुग्रह में जीवित होने के लिए बपतिस्मा लेते हैं; और उन लोगों के समान विश्वास के द्वारा जीवन जीने, पवित्रता एवं धार्मिकता में बातचीत का प्रयास करने के द्वारा, जिन्होंने ख्रीष्ट के लिए अपना जीवन अर्पण कर दिया है; और जैसे एक ही शरीर में एक ही आत्मा के द्वारा बपतिस्मा पाने के रूप में, भाईचारे के प्रेम में चलना है।

कुलुस्सियों 2:11 – 12; रोमियों 6:4, 6, 11; रोमियों 6:3 – 5; 1 कुरिन्थियों 1:11 – 13; रोमियों 6:2 – 3; रोमियों 4:11 – 12; 1 पतरस 3:21; रोमियों 6:3 – 5; गलातियों 3:26 – 27; रोमियों 6:22; प्रेरितों के काम 2:38; 1 कुरिन्थियों 12:13, 25 – 27.

प्रश्न 168: प्रभु भोज क्या है?

उत्तर: प्रभु भोज नए नियम का एक मसीही संस्कार है, जिसमें, यीशु ख्रीष्ट

के द्वारा ठहराए जाने के अनुसार रोटी और दाखरस को देने और ग्रहण करने के द्वारा, उसकी मृत्यु को दिखाया जाता है; और वे जो योग्य रीति से, अपने आत्मिक पोषण और अनुग्रह में वृद्धि के लिए, उसके शरीर एवं लहू का भोजन करते हैं; उसके साथ अपने एक किए जाने और सहभागिता के सुनिश्चित करते हैं; और एक ही रहस्यमय शरीर के सदस्यों के रूप में, परमेश्वर के लिए, और एक दूसरे के साथ अपने आपसी प्रेम और संगति के लिए, गवाही देते एवं अपने कृतज्ञता को नवीनीकृत करते, और सम्बद्ध होते हैं।

लूका 22:20; मत्ती 26:26 – 28; 1 कुरिन्थियों 11:23 – 26; 1 कुरिन्थियों 10:16; 1 कुरिन्थियों 11:24; 1 कुरिन्थियों 10:14 – 16, 21; 1 कुरिन्थियों 10:17.

प्रश्न 169: ख्रीष्ट ने प्रभु भोज के संस्कार में रोटी और दाखरस देने एवं ग्रहण करने की विधि को कैसे ठहराया है?

उत्तर: प्रभु भोज के इस संस्कार के संचालन करने में, ख्रीष्ट ने अपने वचन के सेवकों को नियुक्त किया है, कि वे इसकी स्थापना के वचन, धन्यवाद, और प्रार्थना के द्वारा, रोटी एवं दाखरस को सामान्य उपयोग से अलग कर पवित्र करें; रोटी को लेकर और तोड़कर, प्रभु भोज लेने वाले कलीसिया के सदस्यों को रोटी एवं दाखरस दोनों देना है: जिन्हें कि इसी वचन के द्वारा कृतज्ञता के साथ स्मरण करते हुए, रोटी लेनी है और खानी है, और दाखरस पीना है, कि ख्रीष्ट का शरीर उनके लिए तोड़ा एवं दिया गया, और उसका लहू उनके लिए बहाया गया।

1 कुरिन्थियों 11:23 – 24; मत्ती 26:26 – 28; मरकुस 14:22 – 24; लूका 22:19 – 20.

प्रश्न 170: वे जो प्रभु भोज में योग्य रीति से भाग लेते हैं, उसमें ख्रीष्ट के शरीर और लहू का पोषण कैसे करते हैं?

उत्तर: ख्रीष्ट का शरीर एवं लहू, शारीरिक या भौतिक रूप से, प्रभु भोज में रोटी एवं दाखरस में, उनके साथ या उनके नीचे विद्यमान नहीं है; और

फिर भी ग्रहण करने वाले के विश्वास के लिए वह आत्मिक रूप से विद्यमान है, उनके बाहरी इन्द्रियों के लिए स्वयं ये तत्व वास्तविक एवं सच्चाई से हैं; इसलिए वे जो प्रभु भोज के संस्कार में योग्य रीति से भाग लेते हैं, वे उसमें ख्रीष्ट के शरीर और लहू में पोषण लेते हैं, न कि शारीरिक या भौतिक रूप से, बल्कि आत्मिक रीति से; फिर भी सच्चाई एवं वास्तविकता से, जब वे विश्वास के द्वारा क्रूस पर चढ़ाए गए ख्रीष्ट, और उसकी मृत्यु के सभी लाभों को ग्रहण करते एवं स्वयं पर लागू करते हैं।

प्रेरितों के काम 3:21; मत्ती 26:26, 28; 1 कुरिन्थियों 11:24 – 29; 1 कुरिन्थियों 10:16.

प्रश्न 171: जो प्रभु भोज के संस्कार को ग्रहण करते हैं, उन लोगों को इसमें भाग लेने से पहले स्वयं को कैसे तैयार करना चाहिए?

उत्तर: वे लोग जो प्रभु भोज के संस्कार को ग्रहण करते हैं, उन्हें भाग लेने से पहले, ख्रीष्ट में स्वयं के होने के विषय में; अपने पापों एवं अभिलाषाओं के विषय में; अपने ज्ञान, विश्वास, पश्चाताप, परमेश्वर और भाइयों के प्रति प्रेम, सभी मनुष्यों के लिए परोपकार, उन लोगों को क्षमा करना जिन्होंने उनके साथ बुरा किया है, उसकी सच्चाई एवं पैमाने के विषय में; ख्रीष्ट के लिए अपनी इच्छाओं के विषय में, एवं अपनी नई आज्ञाकारिता के विषय में; और गम्भीर मनन, एवं उत्कट प्रार्थना के द्वारा इन अनुग्रहों के अभ्यास को नवीनीकृत करने के विषय में स्वयं की जाँच करने के द्वारा, इसके लिए स्वयं की तैयारी करनी चाहिए।

1 कुरिन्थियों 11:28; 2 कुरिन्थियों 13:5; 1 कुरिन्थियों 5:7; निर्गमन 12:15; 1 कुरिन्थियों 11:29; 2 कुरिन्थियों 13:5; मत्ती 26:28; जकर्याह 12:10; 1 कुरिन्थियों 11:31; 1 कुरिन्थियों 10:16 – 17; प्रेरितों के काम 2:46 – 47; 1 कुरिन्थियों 5:8; 1 कुरिन्थियों 1:18, 20; मत्ती 5:23 – 24; यशायाह 55:1; यूहन्ना 7:37; 1 कुरिन्थियों 5:7 – 8; 1 कुरिन्थियों 11:25 – 26, 28; इब्रानियों 10:21 – 22, 24; भजन संहिता 26:6; 1 कुरिन्थियों 11:24 – 25; 2 इतिहास 30:18 – 19; मत्ती 26:26.

प्रश्न 172: क्या कोई ऐसा व्यक्ति प्रभु भोज में भाग ले सकता है, जो ख्रीष्ट में अपने होने या अपनी उचित तैयारी के विषय में संदेह करता है?
उत्तर: जो व्यक्ति ख्रीष्ट में अपने होने, या प्रभु भोज के संस्कार के लिए अपनी उचित तैयारी के विषय में संदेह करता है, ख्रीष्ट में उसकी सच्ची रुचि हो सकती है, भले ही वह इस विषय में अभी तक आश्वस्त नहीं है; और वह परमेश्वर के लोगों की गिनती में है, यदि वह इसकी कमी की आशंका से उचित रीति से प्रभावित है, और निष्कपट रूप से ख्रीष्ट में पाए जाने, और पाप से दूर रहने की इच्छा रखता है: इस स्थिति में (क्योंकि कमजोर और संदेह करने वाले मसीही लोगों के लिए भी प्रतिज्ञाएं की गई हैं, और इस संस्कार को स्थापित किया गया है) उसे अपने अविश्वास पर विलाप करना चाहिए, और संदेहों का समाधान करने के लिए परिश्रम करना चाहिए; और, ऐसा करने से, वह प्रभु भोज में सम्मिलित हो सकता है और उसे होना चाहिए, ताकि वह विश्वास में और अधिक दृढ़ बन सके।

यशायाह 1:10; 1 यूहन्ना 5:13; भजन संहिता 88:1 – 18; भजन संहिता 77:1 – 12; योना 2:4, 7; यशायाह 54:7 – 10; मत्ती 5:3 – 4; भजन संहिता 31:22; भजन संहिता 73:13, 22 – 23; फिलिप्पियों 3:8 – 9; भजन संहिता 10:17; भजन संहिता 42:1 – 2, 5, 11; 2 तीमुथियुस 2:19; यशायाह 1:10; भजन संहिता 66:18 – 20; यशायाह 40:11, 29, 31; मत्ती 11:28; मत्ती 12:20; मत्ती 26:30; मत्ती 26:28; मरकुस 9:24; प्रेरितों के काम 2:37; प्रेरितों के काम 16:30; रोमियों 4:11; 1 कुरिन्थियों 11:28.

प्रश्न 173: क्या ऐसे लोगों को जो विश्वास का अंगीकार करते हैं, और प्रभु भोज में भाग लेने की इच्छा रखते हैं, प्रभु भोज लेने से रोका जा सकता है?
उत्तर: ऐसे लोग जो अपने विश्वास का अंगीकार करने, और प्रभु भोज में भाग लेने की इच्छा रखने के बावजूद अज्ञानी या निंदनीय पाए जाते हैं, उन्हें उस अधिकार के द्वारा जिसे ख्रीष्ट ने अपनी कलीसिया को दिया है, इस संस्कार को लेने से रोका जा सकता है और रोकना भी चाहिए, जब तक कि शिक्षा न प्राप्त कर लें, और अपने सुधार को प्रकट न करें।

1 कुरिन्थियों 11:27 – 34; मत्ती 7:6; 1 कुरिन्थियों 5:1 – 13; यहूदा 1:23; 1 तीमुथियुस 5:22; 2 कुरिन्थियों 2:7.

प्रश्न 174: प्रभु भोज को मनाते समय, इस संस्कार को ग्रहण करने वाले लोगों से क्या अपेक्षा की जाती है?

उत्तर: प्रभु भोज के संस्कार को ग्रहण करने वाले लोगों से यह अपेक्षित है, कि, इसके मानते समय वे इस विधि में पूरी पवित्र श्रद्धा एवं हृदय के साथ परमेश्वर पर ध्यान-मनन करें, इस संस्कार के तत्वों एवं विधि का पूरी एकाग्रचित्त के साथ अनुपालन करें, प्रभु के शरीर को विचारशीलता से पहचानें, और प्रेमपूर्वक उसकी मृत्यु और पीड़ाओं पर ध्यान लगाएं;और इस प्रकार स्वयं का मूल्यांकन करने और पाप के लिए दुःखी होने में; ख्रीष्ट के लिए सच्ची भूख एवं प्यास होने में, विश्वास के द्वारा उस पर पोषण करने में, उसकी सम्पूर्णता को प्राप्त करने में, उसके कार्यों पर भरोसा करने में, उसके प्रेम में आनन्द करने में, उसके अनुग्रह के लिए धन्यवाद देने में; परमेश्वर के साथ अपनी वाचा को नवीनीकृत करने, और सभी संतों से प्रेम करने में, इसके द्वारा प्राप्त अनुग्रहों पर सशक्त अभ्यास करने के लिए स्वयं को उभारें।

लैव्यव्यवस्था 10:3; इब्रानियों 12:28; भजन संहिता 5:7; 1 कुरिन्थियों 11:17, 26 – 27; निर्गमन 24:8; मत्ती 26:28; 1 कुरिन्थियों 11:29; लूका 22:19; 1 कुरिन्थियों 11:26; 1 कुरिन्थियों 10:3 – 5, 11, 14; 1 कुरिन्थियों 11:31; जकर्याह 12:10; प्रकाशितवाक्य 22:17; यूहन्ना 6:35; यूहन्ना 1:16; फिलिप्पियों 3:9; भजन संहिता 63:4 – 5; 2 इतिहास 30:21; भजन संहिता 22:26; यिर्मयाह 1:5; भजन संहिता 1:5; प्रेरितों के काम 2:42.

प्रश्न 175: प्रभु भोज के संस्कार को ग्रहण करने के पश्चात् मसीही लोगों का क्या कर्तव्य है?

उत्तर: प्रभु भोज के संस्कार को ग्रहण करने के पश्चात् मसीही लोगों का कर्तव्य है, गम्भीरता से विचार करना कि उन्होंने इसमें भाग लेते समय कैसा व्यवहार किया, और क्या इससे उन्हें कोई लाभ प्राप्त हुआ; यदि उन्हें जागृति एवं सांत्वना मिली, तो इसके लिए परमेश्वर को धन्य दें, इसके जारी

रहने के लिए प्रार्थना करें, फिर से पाप में गिरने के प्रति सावधान रहें, अपनी प्रतिज्ञाओं को पूरी करें, और इस विधि में बार-बार उपस्थित होने के लिए स्वयं को प्रोत्साहित करें: परन्तु यदि उन्हें इससे कोई तत्काल लाभ नहीं प्राप्त हुआ है, तो इस संस्कार के लिए अपनी तैयारी, और आचरण के लिए अधिक सटीक रूप से समीक्षा करें; इन दोनों में ही, यदि वे स्वयं को परमेश्वर और स्वयं अपने विवेक के समक्ष स्वीकार कर सकते हैं, तो उन्हें उचित समय पर इसके फल की प्रतीक्षा करनी होगी: लेकिन यदि वे देखते हैं कि वे दोनों ही बातों में असफल रहे हैं, तो उन्हें विनम्र बनना होगा, और फिर अगली बार इसमें अधिक सावधानी एवं एकाग्रचित्त होकर भाग लेना होगा।

भजन संहिता 28:7; भजन संहिता 85:8; 1 कुरिन्थियों 11:17, 30 – 31; 2 इतिहास 30:21 – 23, 25 – 26; प्रेरितों के काम 2:42, 46 – 47; भजन संहिता 36:10; श्रेष्ठगीत 3:4; 1 इतिहास 29:18; 1 कुरिन्थियों 10:3 – 5, 12; भजन संहिता 1:14; 1 कुरिन्थियों 11:25 – 26; प्रेरितों के काम 2:42, 46; श्रेष्ठगीत 5:1 – 6; सभोपदेशक 5:1 – 6; भजन संहिता 73:1 – 2; भजन संहिता 42:5; भजन संहिता 43:3 – 5; 2 इतिहास 30:18 – 19; यशायाह 1:16, 18; 2 कुरिन्थियों 7:11; 1 इतिहास 15:12 – 14.

प्रश्न 176: बपतिस्मा और प्रभु भोज के मसीही संस्कार किस बात पर सहमत हैं?

उत्तर: बपतिस्मा और प्रभु भोज के मसीही संस्कार इस बात पर सहमत हैं कि दोनों का कर्ता परमेश्वर है; दोनों का आत्मिक भाग ख्रीष्ट और उसके लाभ हैं; दोनों ही एक ही वाचा की छाप हैं, उन्हें सुसमाचार के सेवकों ही के द्वारा दिया जाना चाहिए, और किसी भी अन्य व्यक्ति के द्वारा नहीं; और ख्रीष्ट की कलीसिया में उसके दूसरे आगमन तक इन्हें जारी रखा जाना है।

मत्ती 28:19; 1 कुरिन्थियों 11:23; रोमियों 6:3 – 4; 1 कुरिन्थियों 10:16; रोमियों 4:11; कुलुस्सियों 2:12; मत्ती 26:27 – 28; यूहन्ना 1:33; मत्ती 28:19; 1 कुरिन्थियों 11:23; 1 कुरिन्थियों 4:1; इब्रानियों 5:4; मत्ती 28:19 – 20; 1 कुरिन्थियों 11:26.

प्रश्न 177: बपतिस्मा और प्रभु भोज के मसीही संस्कार किस बात में भिन्न हैं?

उत्तर: बपतिस्मा और प्रभु भोज इस बात में भिन्न है, कि बपतिस्मा केवल एक बार, पानी से दिया जाना चाहिए, जो हमारे फिर से जीवित होने और ख्रीष्ट में साटे जाने का चिह्न एवं छाप है, और यह शिशुओं के लिए भी है; जबकि प्रभु भोज को बार-बार रोटी एवं दाखरस के तत्वों में, दिया जाना चाहिए, जो कि हमारे प्राण के लिए आत्मिक पोषण के रूप में ख्रीष्ट का प्रतिनिधित्व करता एवं दिखाता है, और उसी में हमारे बने रहने और आत्मिक विकास की पुष्टि करने के लिए, और यह केवल उन लोगों के लिए है, जो अधिक उम्र के हैं और स्वयं की जाँच करने की क्षमता रखते हैं।

मत्ती 3:11; तीतुस 3:5; गलातियों 3:27; उत्पत्ति 17:7, 9; प्रेरितों के काम 2:38 – 39; 1 कुरिन्थियों 7:14; 1 कुरिन्थियों 11:23 – 26; 1 कुरिन्थियों 10:16; 1 कुरिन्थियों 11:28 – 29.

प्रश्न 178: प्रार्थना क्या है?

उत्तर: प्रार्थना, ख्रीष्ट के नाम में, उसके आत्मा की सहायता से; अपने पापों के अंगीकार, और उसकी दया के लिए कृतज्ञता वाली स्वीकृति के साथ, अपनी इच्छाओं को परमेश्वर के समक्ष अर्पण करना है।

भजन संहिता 62:8; यूहन्ना 16:23; रोमियों 8:26; भजन संहिता 32:5 – 6; दानिय्येल 9:4; फिलिप्पियों 4:6.

प्रश्न 179: क्या हमें केवल परमेश्वर पिता से ही प्रार्थना चाहिए?

उत्तर: चूंकि केवल परमेश्वर पिता ही हृदयों को जाँचने, निवेदनों को सुनने, पापों को क्षमा करने, और सभी की इच्छाओं को पूरा करने के योग्य है; और केवल जिस पर विश्वास किया जाना चाहिए, और जिसकी मसीही श्रद्धा व विश्वास के साथ आराधना की जानी चाहिए; प्रार्थना, जो इस आराधना का एक विशेष भाग है, सभी को केवल उसी से करनी चाहिए, और किसी अन्य से नहीं।

1 राजा 8:39; प्रेरितों के काम 1:24; रोमियों 8:27; भजन संहिता 65:2; मीका 7:18; भजन संहिता 145:18 – 19; रोमियों 10:14; मत्ती 4:10; 1 कुरिन्थियों 1:2; भजन संहिता 50:15; रोमियों 10:14.

प्रश्न 180: ख्रीष्ट के नाम में प्रार्थना करने का क्या अर्थ है?

उत्तर: ख्रीष्ट के नाम में प्रार्थना करने का अर्थ है, उसकी आज्ञा के पालन में, उसकी प्रतिज्ञाओं पर पूर्ण भरोसा करके, उसके नाम के निमित्त दया की बिनती करनी है; उसके नाम के मात्र उल्लेख से ही नहीं, परन्तु प्रार्थना करने के लिए हमारे प्रोत्साहन को, और प्रार्थना में स्वीकृति के लिए हमारे साहस, बल, और आशा को ख्रीष्ट और उसकी मध्यस्थता के द्वारा प्राप्त करना है।

यूहन्ना 14:13 – 14; यूहन्ना 16:24; दानिय्येल 9:17; मत्ती 7:21; इब्रानियों 4:14 – 16; 1 यूहन्ना 5:13 – 15.

प्रश्न 181: हमें ख्रीष्ट के नाम में प्रार्थना क्यों करनी चाहिए?

उत्तर: मनुष्य की पापपूर्णता, और इसके फलस्वरूप परमेश्वर से उसकी दूरी इतनी बड़ी है, कि बिना बिचवई के हम उसकी उपस्थिति तक नहीं पहुँच सकते हैं; और स्वर्ग या पृथ्वी पर इस महिमामय कार्य के लिए ख्रीष्ट के अलावा किसी को भी न तो नियुक्त किया गया है, न ही कोई इसके योग्य है, इसलिए हमें केवल उसके नाम के अलावा किसी अन्य नाम से प्रार्थना नहीं करनी चाहिए।

यूहन्ना 14:6; यशायाह 59:2; इफिसियों 3:12; यूहन्ना 6:27; इब्रानियों 7:25 – 27; 1 तीमुथियुस 2:5; कुलुस्सियों 3:17; इब्रानियों 13:15.

प्रश्न 182: प्रार्थना करने में पवित्र आत्मा हमारी सहायता कैसे करता है?

उत्तर: क्योंकि हम नहीं जानते कि प्रार्थना किस रीति से करनी चाहिए, इसलिए पवित्र आत्मा हमारी दुर्बलताओं में सहायता करता है, हमें यह समझने में सक्षम बनाता है कि किसके लिए, और क्या, और कैसे प्रार्थना

करनी चाहिए; और हमारे हृदयों में उन समझ, अनुरागों और अनुकंपाओं को उपजाने एवं जागृत करने के द्वारा, जो उस कर्तव्य के सही क्रियान्वित करने के लिए आवश्यक हैं (हालाँकि न तो सभी व्यक्तियों में, और न ही हर समय एक ही मात्रा में)।

रोमियों 8:26 – 27; भजन संहिता 10:17; जकर्याह 12:10.

प्रश्न 183: हमें किसके लिए प्रार्थना करनी चाहिए?
उत्तर: पृथ्वी पर ख्रीष्ट की सम्पूर्ण कलीसिया के लिए; अधिकारियों एवं सेवकों के लिए; अपने लिए; हमारे भाइयों के लिए, वरन् अपने शत्रुओं के लिए भी; और सभी प्रकार के जीवित मनुष्यों के लिए, या जो हमारे पश्चात् जीवित रहेंगे; परन्तु मृतकों के लिए नहीं, और न ही उन लोगों के लिए जो मृत्यु तक ले जाने वाले पाप को करने के लिए जाने जाते हैं।

इफिसियों 6:18; भजन संहिता 28:9; 1 तीमुथियुस 2:1 – 2; कुलुस्सियों 4:3; उत्पत्ति 32:11; याकूब 5:16; मत्ती 5:44; 1 तीमुथियुस 2:1 – 2; यूहन्ना 17:20; 2 शमूएल 7:29; 2 शमूएल 12:21 – 23; 1 यूहन्ना 5:16.

प्रश्न 184: हमें किन बातों के लिए प्रार्थना करनी चाहिए?
उत्तर: हमें परमेश्वर की महिमा, कलीसिया की समृद्धि, स्वयं हमारी या अन्य लोगों की भलाई से सम्बन्धित सभी बातों के लिए प्रार्थना करनी चाहिए; परन्तु उन बातों के लिए प्रार्थना नहीं करनी चाहिए जो गैरकानूनी हैं।

मत्ती 6:9; भजन संहिता 51:18; भजन संहिता 122:6; मत्ती 7:11; भजन संहिता 125:4; 1 यूहन्ना 5:14.

प्रश्न 185: हमें प्रार्थना कैसे करनी चाहिए?
उत्तर: परमेश्वर के वैभव का डर उत्पन्न करने वाली समझ, अपनी अयोग्यता, कमियों, एवं पापों के गहन भाव के साथ; पश्चातापी, कृतज्ञता, एवं स्वतंत्र हृदय से आभार के साथ; समझ, विश्वास, निष्कपटता,

उत्सुकता, प्रेम, और दृढ़ उद्यमशीलता के साथ, उसकी इच्छा के प्रति विनम्र समर्पण के साथ उसकी बाट जोहते हुए, हमें प्रार्थना करनी चाहिए।

सभोपदेशक 5:1; उत्पत्ति 18:27; उत्पत्ति 32:10; लूका 15:17 – 19; लूका 18:13 – 14; भजन संहिता 51:17; फिलिप्पियों 4:6; 1 शमूएल 1:15; 1 शमूएल 2:1; 1 कुरिन्थियों 14:15; मरकुस 11:24; याकूब 1:6; भजन संहिता 145:18; भजन संहिता 17:1; याकूब 5:16; 1 तीमुथियुस 2:8; इफिसियों 6:18; मीका 7:7; मत्ती 26:39.

प्रश्न 186: प्रार्थना के कर्तव्य में हमारा मार्गदर्शन करने के लिए परमेश्वर ने क्या नियम दिया है?

उत्तर: प्रार्थना के कर्तव्य में हमारा मार्गदर्शन करने के लिए परमेश्वर का सम्पूर्ण वचन उपयोगी है; लेकिन मार्गदर्शन का विशेष नियम, प्रार्थना का वह प्रारूप है, जिसे हमारे उद्धारकर्ता ख्रीष्ट ने अपने शिष्यों को सिखाया था, जिसे आम भाषा में 'प्रभु की प्रार्थना' कहते हैं।

1 यूहन्ना 5:14; मत्ती 6:9 – 13; लूका 11:2 – 4.

प्रश्न 187: प्रभु की प्रार्थना का उपयोग किस प्रकार किया जाना चाहिए?

उत्तर: प्रभु की प्रार्थना एक प्रारूप के रूप में, केवल दिशा-निर्देशन के लिए ही नहीं है, जिसके अनुसार हमें अन्य प्रार्थनाएँ करनी चाहिए; परन्तु इसका उपयोग प्रार्थना के रूप में भी किया जा सकता है, ताकि प्रार्थना के कर्तव्य को सही रूप में करने के लिए आवश्यक समझ, विश्वास, श्रद्धा और अन्य शालीनताओं के साथ इसे किया जा सके।

मत्ती 6:9; लूका 11:2.

प्रश्न 188: प्रभु की प्रार्थना में कितने भाग हैं?

उत्तर: प्रभु की प्रार्थना में तीन भाग हैं; प्रस्तावना, निवेदन, और समापन।

प्रश्न 189: प्रभु की प्रार्थना की प्रस्तावना हमें क्या शिक्षा देती है?
उत्तर: प्रभु की प्रार्थना की प्रस्तावना (जो इन शब्दों में निहित है, हे हमारे पिता तू जो स्वर्ग में है) हमें शिक्षा देती है, कि जब हम प्रार्थना करते हैं, तो परमेश्वर के पिता तुल्य भलाई पर विश्वास, और उसमें हमारी रुचि के साथ; श्रद्धा और बालकों जैसे सभी स्वभावों, स्वर्गीय अनुरागों, और उसके सम्प्रभु शक्ति, गौरव, और अनुग्रहकारी कृपालुता के विषय में उचित समझ के साथ; साथ ही अन्य लोगों के साथ, एवं अन्य लोगों के लिए प्रार्थना करने हेतु हम उसके निकट आएं।

मत्ती 6:9; लूका 11:13; रोमियों 8:15; यशायाह 64:9; भजन संहिता 123:1; विलापगीत 3:41; यशायाह 63:15 – 16; नहेम्याह 1:4 – 6; प्रेरितों के काम 12:5.

प्रश्न 190: पहले निवेदन में हम किस बात के लिए प्रार्थना करते हैं?
उत्तर: पहले निवेदन में, (जो है, तेरा नाम पवित्र माना जाए,) परमेश्वर का सही से सम्मान करने के लिए, स्वयं हम में और सभी मनुष्यों में उपस्थित पूर्ण असमर्थता एवं अनिच्छा को स्वीकार करते हुए, हम प्रार्थना करते हैं, कि परमेश्वर अपने अनुग्रह के द्वारा हमें एवं दूसरों को उसकी उपाधियाँ, गुणों, आदेशों, वचनों, कार्यों और जो कुछ भी वह स्वयं को ज्ञात कराने में प्रसन्न होता है, उसे जानने, स्वीकार करने और अत्यधिक सम्मान देने के लिए; और मन, वचन, एवं कर्म में उसकी महिमा करने के लिए हमें सक्षम बनाएं और हमें सम्मिलित करे: और कि वह नास्तिकता, अज्ञानता, मूर्तिपूजा, अपवित्रता, और जो कुछ भी उसके लिए अपमानजनक है, उसे रोके और दूर करे; और अपने सर्वोच्च दिव्य प्रबंधन के द्वारा सभी वस्तुओं को अपनी महिमा के लिए निर्देशित एवं व्यवस्थित करे।

मत्ती 6:9; 2 कुरिन्थियों 3:5; भजन संहिता 51:15; भजन संहिता 67:2 – 3; भजन संहिता 83:18; भजन संहिता 86:10 – 13, 15; 2 थिस्सलुनीकियों 3:1; भजन संहिता 147:19 – 20; भजन संहिता 138:1 – 3; 2 कुरिन्थियों 2:14 – 15; भजन संहिता 145:1 – 21; भजन संहिता 8; भजन संहिता 103:1; भजन संहिता 19:14; फिलिप्पियों 1:9, 11; भजन संहिता 67:1 – 4; इफिसियों 1:17 – 18; भजन संहिता 97:7; भजन संहिता 74:18, 22 – 23; 2 राजा 19:15 – 16; 2 इतिहास 20:6, 10 – 12; भजन संहिता 83:1 – 18; भजन संहिता 140:4 – 8.

प्रश्न 191: दूसरे निवेदन में हम किस बात के लिए प्रार्थना करते हैं?

उत्तर: दूसरे निवेदन में, (जो है, तेरा राज्य आए) हम स्वयं को और समस्त मानवजाति को स्वभाव से ही पाप एवं शैतान के प्रभुत्व के अधीन मानते हुए, हम प्रार्थना करते हैं कि पाप और शैतान का राज्य नष्ट हो जाए, सम्पूर्ण संसार में, बुलाए गए यहूदियों को, प्रवेश पाने वाली अन्यजातियों की पूर्ण संख्या को सुसमाचार प्रचार किया जाए; कलीसिया को सुसमाचार के सभी अधिकारियों एवं अध्यादेशों से सुसज्जित किया जाए, भ्रष्टाचार से शुद्ध किया जाए, नागरिक मजिस्ट्रेटों द्वारा समर्थित एवं बनाए रखा जाए; जिससे कि ख्रीष्ट के आदेशों को शुद्ध रूप से बांटा जा सके, और उन को लोगों के मन फिराव के लिए प्रभावी बनाया जा सके, जो अभी भी अपने पापों में हैं, और जिन लोगों ने पहले ही मन परिवर्तन कर लिया है, उनकी पुष्टि, सांत्वना एवं उन्नति की जा सके: कि ख्रीष्ट हमारे हृदयों में यहाँ पर राज्य करे, और अपने दूसरे आगमन, और सदा के लिए उसके साथ राज्य करने के समय को जल्द पूरा करे: और पूरे संसार में अपनी शक्ति के साम्राज्य को क्रियान्वित करने के लिए वह प्रसन्न होगा, जिससे कि ये उद्देश्य सबसे अच्छी रीति से निर्देशित हो सकें।

मत्ती 6:10; इफिसियों 2:2 – 3; भजन संहिता 68:1, 18; प्रकाशितवाक्य 12:10 – 11; 2 थिस्सलुनीकियों 3:1; रोमियों 10:1; यूहन्ना 17:9, 20; रोमियों 11:25 – 26; भजन संहिता 67:1 – 7; मत्ती 9:38; 2 थिस्सलुनीकियों 3:1; मलाकी 1:11; सपन्याह 3:9; 1 तीमुथियुस 2:1 – 2; प्रेरितों के काम 4:29 – 30; इफिसियों 3:14 – 20; प्रकाशितवाक्य 22:20; यशायाह 64:1 – 2; प्रकाशितवाक्य 4:8 – 11; इफिसियों 6:18 – 20; रोमियों 15:29 – 30, 32; 2 थिस्सलुनीकियों 1:11; 2 थिस्सलुनीकियों 2:16 – 17.

प्रश्न 192: तीसरे निवेदन में हम किस बात के लिए प्रार्थना करते हैं?

उत्तर: तीसरे निवेदन में, (जो है, तेरी इच्छा जैसे स्वर्ग में पूरी होती है, पृथ्वी पर भी हो) यह स्वीकार करते हुए कि स्वभाव ही से हम और सभी मनुष्य न केवल परमेश्वर की इच्छा को जानने और पालन करने में पूर्ण रूप से असमर्थ एवं अनिच्छुक हैं, बल्कि उसके वचन के विरुद्ध विद्रोह करने, उसके दिव्य प्रबंधन के विरुद्ध शिकायत करने और बड़बड़ाने की प्रवृत्ति

रखते हैं, और पूर्ण रूप से शरीर, और शैतान की लालसा को पूरा करने को इच्छुक रहते हैं: हम यह प्रार्थना करते हैं, कि परमेश्वर अपने आत्मा के द्वारा हमसे और अन्य लोगों से हृदय की सभी अज्ञानता, कमजोरी, अनिच्छा, और विकृति को दूर करे; और अपने अनुग्रह के द्वारा, उसी विनम्रता, प्रसन्नता, विश्वासयोग्यता, उद्यमशीलता, उत्साह, ईमानदारी, और निरन्तरता के साथ सभी बातों में उसकी इच्छा को जानने, पालन करने, और समर्पित होने के लिए हमें सक्षम एवं इच्छुक बनाए, जैसे स्वर्ग में स्वर्गदूत करते हैं।

मत्ती 6:10; रोमियों 7:18; अय्यूब 21:14; 1 कुरिन्थियों 2:14; रोमियों 8:7; निर्गमन 17:7; गिनती 14:2; इफिसियों 2:2; इफिसियों 1:17 – 18; इफिसियों 3:16; मत्ती 26:40 – 41; यिर्मयाह 31:18 – 19; भजन संहिता 119:1, 8, 35 – 36; प्रेरितों के काम 21:14; मीका 6:8; भजन संहिता 100:2; अय्यूब 1:21; 2 शमूएल 15:25 – 26; यशायाह 38:3; भजन संहिता 119:4 – 5; रोमियों 12:11; भजन संहिता 119:80; भजन संहिता 119:112; यशायाह 6:2 – 3; भजन संहिता 103:20 – 21; मत्ती 18:10.

प्रश्न 193: चौथे निवेदन में हम किस बात के लिए प्रार्थना करते हैं?

उत्तर: चौथे निवेदन में, (जो है, दिन भर की रोटी आज हमें दे,) यह स्वीकार करते हुए, कि आदम में, और अपने स्वयं के पाप के कारण, हमने इस जीवन के सभी दृश्यमान आशीषों पर अपना अधिकार खो दिया है, और परमेश्वर द्वारा उनसे हमें पूरी रीति से वंचित कर दिए जाने, और उनके उपयोग में उन्हें हमारे लिए शापित कर दिए जाने के योग्य हैं; और न तो वे स्वयं से हमारा भरण-पोषण करने में सक्षम हैं, न ही हम इस योग्य हैं, और न ही अपने परिश्रम के द्वारा उन्हें प्राप्त करने में सक्षम हैं; परन्तु गैरकानूनी रूप से उनकी इच्छा करने, प्राप्त करने, और उपयोग करने के लिए प्रवृत्त हैं: हम अपने लिए और दूसरे लोगों के लिए प्रार्थना करते हैं, कि दोनों वे और हम, वैध साधनों के उपयोग में दिन-प्रतिदिन परमेश्वर के दिव्य प्रबंधन पर आश्रित होते हुए, उसके मुफ्त वरदान का, और जैसे उसके पिता वाली बुद्धि को सर्वश्रेष्ठ प्रतीत हो, उनके पर्याप्त भाग का आनन्द उठा सकें, और हमारे द्वारा उनके पवित्र एवं सुखदाई उपयोग में, और उनमें हमारी संतुष्टि

में, यह हमारे लिए निरन्तर जारी रहे एवं आशीषित बनी रहे; और उन सभी वस्तुओं से हम दूर रहें जो हमारे सांसारिक भरण-पोषण एवं सुख के विपरीत हैं।

मत्ती 6:11; उत्पत्ति 2:17; उत्पत्ति 3:17; रोमियों 8:20 – 22; यिर्मयाह 5:25; व्यवस्थाविवरण 28:15 – 68; व्यवस्थाविवरण 8:3; उत्पत्ति 32:10; व्यवस्थाविवरण 8:17 – 18; यिर्मयाह 6:13; मरकुस 7:21 – 22; होशे 12:7; याकूब 4:3; उत्पत्ति 43:12 – 14; उत्पत्ति 28:20; इफिसियों 4:28; 2 थिस्सलुनीकियों 3:11 – 12; फिलिप्पियों 4:6; 1 तीमुथियुस 4:3 – 5; 1 तीमुथियुस 6:6 – 8; नीतिवचन 30:8 – 9.

प्रश्न 194: पाँचवें निवेदन में हम किस बात के लिए प्रार्थना करते हैं?
उत्तर: पाँचवें निवेदन में, (जो है, जिस प्रकार हम ने अपने अपराधियों को क्षमा किया है, वैसे ही तू भी हमारे अपराधों को क्षमा कर,) यह स्वीकार करते हुए, कि हम और अन्य सभी लोग दोनों मूल और वास्तविक पाप के दोषी हैं, और इस प्रकार परमेश्वर के न्याय तले अपराधी बन गए है; और न तो हम, न ही कोई अन्य प्राणी, उस अपराध के विषय में परमेश्वर के न्याय को सन्तुष्ट कर सकता है: हम अपने एवं अन्य लोगों के लिए प्रार्थना करते हैं, कि परमेश्वर अपने सेंतमेंत वाले अनुग्रह से, ख्रीष्ट के आज्ञापालन एवं सन्तुष्टि के द्वारा, विश्वास के द्वारा समझने एवं लागू किए जाने से, हमें पाप के दोष एवं दण्ड से छुटकारा देगा, अपने प्रिय में हमें स्वीकार करेगा, अपने कृपा एवं अनुग्रह को हम पर बनाए रखेगा, हमारे प्रतिदिन के अपराधों को क्षमा करेगा, और प्रतिदिन हमें अधिक से अधिक क्षमा का आश्वासन देने में, शान्ति एवं आनन्द से भरेगा; जिसे हम तब माँगने के लिए बहुत साहसी बनाए जाते हैं, और आशा करने के लिए प्रोत्साहित किए जाते हैं, जब हममें यह गवाही होती है, कि हम भी लोगों के अपराधों को अपने हृदय से क्षमा करते हैं।

मत्ती 6:12; रोमियों 3:9 – 22; मत्ती 18:24 – 25; भजन संहिता 130:3 – 4; रोमियों 3:24 - 26; इब्रानियों 9:22; इफिसियों 1:6 – 7; 2 पतरस 1:2; होशे 14:2; यिर्मयाह 14:7; रोमियों 15:13; भजन संहिता 51:7 – 10, 12; लूका 11:4; मत्ती 6:14 – 15; मत्ती 18:35.

प्रश्न 195: छठवें निवेदन में हम किस बात के लिए प्रार्थना करते हैं?

उत्तर: छठवें निवेदन में, (जो है, हमें परीक्षा में न ला, परन्तु बुराई से बचा,) यह स्वीकार करते हुए कि सबसे बुद्धिमान, धर्मी एवं अनुग्रहकारी परमेश्वर, विभिन्न पवित्र एवं उचित उद्देश्यों के लिए, बातों को इस प्रकार व्यवस्थित कर सकता है कि हम पर हमला हो सकता है, हम असफल हो सकते हैं, और कुछ समय के लिए परीक्षाओं के द्वारा कैदी बनाए जा सकते हैं; कि शैतान, यह संसार, और शरीर, हमें परमेश्वर से दूर करने और फँसाने के लिए प्रबल रूप से तैयार खड़े हैं; और कि हम, अपने पापों की क्षमा के पश्चात् भी, अपनी भ्रष्टता, कमजोरी और सतर्कता की कमी के कारण, न केवल परीक्षा में पड़ने के अधीन हैं, बल्कि स्वयं को परीक्षा में डालने के लिए भी तत्पर हैं; परन्तु स्वयं हम भी उनका विरोध करने, और उनसे बाहर निकलने, और उन्हें सुधारने में असमर्थ एवं अनिच्छुक हैं; और उनकी शक्ति के अधीन छोड़ दिए जाने के योग्य हैं: इसलिए हम प्रार्थना करते हैं, कि परमेश्वर संसार और जो कुछ उसमें हैं सब पर ऐसा शासन करे, शरीर को वश में करे, और शैतान पर रोक लगाए, सब बातों को व्यवस्थित करे, अनुग्रह के सभी साधनों को प्रदान करे एवं उन्हें आशीषित करे, और उनके उपयोग में सतर्क रहने के लिए हमें जागृत करे, जिससे कि हम और उसके सभी लोगों को उसके दिव्य प्रबंधन के द्वारा पाप की परीक्षा में पड़ने से बचाया जा सके; या, यदि परीक्षा होती है, तो उसके आत्मा के द्वारा हमें परीक्षा की घड़ी में स्थिर रहने के लिए सशक्त रूप से सहारा दिया एवं सक्षम बनाया जा सके; या जब गिरे होते है, तो फिर से उठाया जाए और परीक्षा से उबारा जाए, और इस प्रकार इसका पवित्र उपयोग एवं सुधार किया जाए: जिससे कि हमारे पवित्रीकरण और उद्धार को सिद्ध किया जा सके, शैतान हमारे पैरो के नीचे कुचला जाए, और हम पूर्ण रूप से पाप, परीक्षा एवं सभी बुराई से सदा के लिए मुक्त हो जाएं।

मत्ती 6:13; 2 इतिहास 32:31; 1 इतिहास 21:1; लूका 21:34; मरकुस 4:19; याकूब 1:14; गलातियों 5:17; मत्ती 26:41; मत्ती 26:69 – 72; गलातियों 2:11 – 14; 2 इतिहास 18:3; 2 इतिहास 19:2; रोमियों 7:23 – 24; 1 इतिहास 21:1 – 4; 2 इतिहास 16:7 – 10; भजन संहिता 81:11 – 12; यूहन्ना 17:15; भजन संहिता 51:10; भजन संहिता 119:133; 2 कुरिन्थियों 12:7

– 8; 1 कुरिन्थियों 10:12 – 13; इब्रानियों 13:20 – 21; मत्ती 26:41; भजन संहिता 19:13; इफिसियों 3:14 – 17; 1 थिस्सलुनीकियों 3:13; यहूदा 1:24; भजन संहिता 51:12; 1 पतरस 5:8 – 10; 2 कुरिन्थियों 13:7, 9; रोमियों 16:20; जकर्याह 3:2; लूका 12:31 – 32; यूहन्ना 17:15; 1 थिस्सलुनीकियों 5:23.

प्रश्न 196: प्रभु की प्रार्थना का उपसंहार हमें क्या शिक्षा देता है?

उत्तर: प्रभु की प्रार्थना का उपसंहार, (जो है, क्योंकि राज्य, और पराक्रम, और महिमा सदा तेरे ही हैं। आमीन।) हमें अपने निवेदनों को तर्कों के साथ पुष्टि करना सिखाता है, जिन्हें केवल परमेश्वर से लिया जाना है, न कि हम में से, या किसी भी अन्य प्राणी में किसी योग्यता से: और हमारी प्रार्थनाओं के साथ स्तुति जोड़ने के लिए, केवल परमेश्वर को अनन्त सम्प्रभुता, सर्वशक्तिमानता और गौरवशाली श्रेष्ठता देते हुए; इसके सम्बन्ध में, चूंकि वह हमारी सहायता करने में योग्य एवं इच्छुक है, इसलिए हम विश्वास के द्वारा उससे बिनती करने के लिए साहसी है कि वह ऐसा करेगा, और शान्त रह कर उस पर भरोसा करने के लिए, कि वह हमारे निवेदनों को पूरा करेगा। और, अपनी इस इच्छा एवं आश्वासन की गवाही देने के लिए, हम कहते हैं, आमीन।

मत्ती 6:13; रोमियों 15:30; दानिय्येल 9:4, 7 – 9, 16 – 19; फिलिप्पियों 4:6; 1 इतिहास 29:10 – 13; इफिसियों 3:20 – 21; लूका 11:13; 2 इतिहास 20:6, 11; 2 इतिहास 14:11; 1 कुरिन्थियों 14:16; प्रकाशितवाक्य 22:20 – 21.

वेस्टमिन्स्टर संक्षिप्त मसीही धर्म-प्रश्नोत्तरी

Acknowledgment:

Help has been taken from Rev. Charles Angert Study book on the WSC

एन्गर्ट, रेव्ह. चार्ल्स. *मसीही विश्वास और जीवन का आधार: वेस्टमिनस्टर संक्षिप्त धर्मशिक्षा प्रश्नावली पर आधारित अध्ययन पुस्तिका*

PCPNetwork of South Asia 2012.

वेस्टमिन्स्टर संक्षिप्त मसीही धर्म-प्रश्नोत्तरी

प्र. 1. मनुष्य का प्रमुख उद्देश्य क्या है?

उ. मनुष्य का प्रमुख उद्देश्य सदा सर्वदा के लिए परमेश्वर की महिमा करना और उसमें आनन्दित रहना है।

1 कुरिन्थियों 10:31; रोमियों 11:36; भजन संहिता 73:25 – 28.

प्र. 2. हमारी अगवाई करने के लिये, कि हम कैसे उसकी महिमा कर सकते हैं और कैसे उसमें आनन्दित रह सकते हैं, परमेश्वर ने हमें कौन सा नियम दिया है?

उ. परमेश्वर का वचन जो कि पुराने एवं नए नियम के पवित्रशास्त्र में निहित है, यही हमारी अगवाई के लिए एकमात्र नियम है, कि हम कैसे परमेश्वर की महिमा कर सकते हैं और कैसे उसमें आनन्दित रह सकते हैं।

2 तीमुथियुस 3:16; इफिसियों 2:20; 1 यूहन्ना 1:3 – 4.

प्र. 3. पवित्रशास्त्र (बाइबल) मुख्य रूप से क्या सिखाते हैं?

उ. पवित्रशास्त्र (बाइबल) मुख्य रूप से यह सिखाते हैं, कि मनुष्य को परमेश्वर के विषय में क्या विश्वास करना है, और परमेश्वर मनुष्य से कौन से कर्तव्य चाहता है।

2 तीमुथियुस 1:13; 2 तीमुथियुस 3:16.

प्र. 4. परमेश्वर क्या है?

उ. परमेश्वर एक आत्मा है, जो अपने अस्तित्व, बुद्धि, शक्ति, पवित्रता, न्याय, भलाई और सत्य में अनन्त, अनादि और अपरिवर्तनीय है।

यूहन्ना 4:24; अय्यूब 11:7 – 9 भजन 90:2; याकूब 1:17; निर्गमन 3:14; भजन संहिता 147:5; प्रकाशितवाक्य 4:8; 15:4; निर्गमन 34:6 – 7.

प्र. 5. क्या एक से अधिक परमेश्वर हैं?

उ. नहीं, केवल एक ही जीवित और सच्चा परमेश्वर है।

व्यवस्थाविवरण 6:4; यिर्मयाह 10:10.

प्र. 6. परमेश्वरत्व में कितने व्यक्ति हैं?

उ. परमेश्वरत्व में तीन व्यक्ति हैं, पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा। ये तीनों एक ही परमेश्वर हैं, जो तत्व में एक हैं, और शक्ति व महिमा में बराबर हैं।

1 यूहन्ना 5:7; मत्ती 28:19.

प्र. 7. परमेश्वर के विधान (decrees) क्या हैं?

उ. परमेश्वर के विधान (decrees), उसकी अपनी इच्छा के मत के अनुसार उसकी सनातन मनसा हैं; जिनके द्वारा, उस ने, जो कुछ होता है, उसको अपनी महिमा के लिए पहले ही से ठहराया है।

इफिसियों 1:4, 11; रोमियों 9:22 – 23.

प्र. 8. परमेश्वर अपने विधानों (decrees) को कैसे पूरा करता है?

उ. परमेश्वर अपने विधानों को सृष्टि के कार्यों और अपने देख-रेख के प्रबन्धन वाले कार्यों के द्वारा पूरा करता है।

भजन संहिता 148:8; यशायाह 40:26; दानिय्येल 4:35; प्रेरितों के काम 4:24 – 28; प्रकाशितवाक्य 4:11.

प्र. 9. सृष्टि के रचने का कार्य क्या है?

उ. सृष्टि के रचने का कार्य यह है कि परमेश्वर ने सारी सृष्टि को, बिना

किसी वस्तु के, अपने सामर्थ्य के वचन के द्वारा, छः दिन के अन्तराल में, और सब कुछ बहुत ही अच्छा बनाया।

उत्पत्ति 1; इब्रानियों 11:3.

प्र. 10. परमेश्वर ने मनुष्य की सृष्टि कैसे की?

उ. परमेश्वर ने मनुष्य को नर और नारी करके, अपने स्वरूप के अनुसार, ज्ञान, धार्मिकता और पवित्रता में बनाया, और उन्हें सब प्राणी जीवों पर अधिकार दिया।

उत्पत्ति 1:26 – 28; कुलुस्सियों 3:10; इफ़िसियों 4:24.

प्र. 11. परमेश्वर के देख-रेख वाले प्रबंधन (Providence) के कार्य क्या हैं?

उ. परमेश्वर के देख-रेख वाले प्रबंधन (Providence) के कार्य उस की परम पवित्रता, बुद्धि और शक्ति से अपनी सारी सृष्टि व उनके सभी कार्यों को संभालना व उन का संचालन करना है।

भजन संहिता 145:17; भजन संहिता 104:24; यशायाह 28:29; इब्रानियों 1:3; भजन संहिता 103:19; मत्ती 10:29 – 31.

प्र. 12. परमेश्वर ने मनुष्य के साथ, जिस दशा में उसकी सृष्टि हुई थी, कौन से देख-रेख वाले प्रबंधन के विशेष कार्य ठहराये?

उ. जब परमेश्वर ने मनुष्य की सृष्टि की, तो उसने पूर्ण आज्ञाकारिता की शर्त पर उसके साथ जीवन की वाचा बाँधी; और उसको भले एवं बुरे के ज्ञान के वृक्ष से खाने को मना किया, जिसको नहीं मानने का दण्ड उसने मृत्यु ठहराई।

गलातियों 3:12; उत्पत्ति 2:17.

प्र. 13. क्या हमारे प्रथम माता-पिता, उस पहली अवस्था में बने रहे, जिसमें उनकी सृष्टि हुई थी?

उ. हमारे प्रथम माता-पिता, अपनी इच्छा की स्वतंत्रता पर छोड़े जाने के कारण, परमेश्वर के विरूद्ध पाप करने के द्वारा, अपनी उस पहली अवस्था से गिर गये जिसमें उनकी सृष्टि हुई थी।

उत्पत्ति 3:6 – 8, 13; सभोपदेशक 7:29.

प्र. 14. पाप क्या है?

उ. परमेश्वर की व्यवस्था को तोड़ना, या उस के अनुरूप न होना, दोनों बातें पाप हैं।

1 यूहन्ना 3:4.

प्र. 15. वह पाप क्या था, जिसके कारण हमारे प्रथम माता-पिता उस पहली अवस्था से गिर गये जिसमें उनकी सृष्टि हुई थी?

उ. वह पाप, जिसके कारण हमारे प्रथम माता-पिता उस पहली अवस्था से जिसमें उनकी सृष्टि हुई थी गिर गये; उस फल का खाना था जिसे परमेश्वर ने खाने के लिए मना किया था।

उत्पत्ति 3:6, 12.

प्र. 16. क्या आदम के प्रथम अपराध में सब मानव जाति पाप में गिर गई?

उ. हाँ। क्योंकि, जो वाचा आदम के साथ बाँधी गई थी, वह न केवल उसके लिए थी, बल्कि उसके वंशजों के लिए भी थी; इसलिए समस्त मानव जाति ने, जो स्वाभाविक रीति से आदम से उत्पन्न हुए, आदम के प्रथम अपराध में, पाप किया, और उस के साथ पाप में गिर गये।

उत्पत्ति 2:16 – 17; रोमियों 5:12; 1 कुरिन्थियों 15:21 – 22.

प्र. 17. पाप में गिरावट मनुष्य को किस अवस्था में ले आया?

उ. पाप में गिरावट मनुष्य को पाप और कष्ट की अवस्था में ले आया।

रोमियों 5:12.

प्र. 18. जिस अवस्था में मनुष्य गिर गया, उसकी पापमयता किन बातों में निहित है?

उ. जिस अवस्था में मनुष्य गिर गया, उसकी पापमयता इन बातों में निहित है: आदम के प्रथम पाप का दोष, पहले वाली धार्मिकता से रहित होना, एवं उसके सम्पूर्ण स्वभाव का भ्रष्ट हो जाना, इन सब को सामान्य रूप से मूल पाप कहा जाता है; तथा वे सारे पाप कर्म जो इससे उत्पन्न होते हैं।

रोम 5:12, 19; रोम 5:10 – 20; इफ़िसियों 2:1 – 3; याकूब 1:14 – 15; मत्ती 15:19.

प्र. 19. जिस अवस्था में मनुष्य गिर गया, उसमें क्या कष्ट हैं?

उ. समस्त मानव जाति पाप में अपने गिरावट के कारण परमेश्वर की संगति से रहित हो गयी, तथा उसके क्रोध व श्राप की भागी बन गयी, और इस कारण इस जीवन के सभी क्लेश, मृत्यु और अनंतकाल की नरक की पीड़ा के अधीन ठहरा दी गयी है।

उत्पत्ति 3:8, 10, 24; इफ़िसियों 2:2 – 3; गलातियों 3:10; सभोपदेशक 3:39; रोमियों 6:23; मत्ती 25:41, 46.

प्र. 20. क्या परमेश्वर ने समस्त मानव जाति को इस पाप और कष्ट की अवस्था में नष्ट होने के लिए छोड़ दिया?

उ. परमेश्वर ने, महज अपनी भली इच्छा के कारण, अनादि काल से, कुछ लोगों को अनंत जीवन देने के लिए चुन लिया, तथा एक छुड़ाने वाले (Redeemer) के द्वारा उन्हें पाप और कष्ट की अवस्था से बचाने, एवं उन्हें उद्धार की अवस्था में लाने के लिए, परमेश्वर ने अनुग्रह की वाचा बाँधी।

इफ़िसियों 1:4; रोमियों 3:20 – 22; गलातियों 3:21 – 22.

प्र. 21. परमेश्वर के चुने हुओं का छुड़ानेवाला (Redeemer) कौन है?

उ. परमेश्वर के चुने हुओं का एकमात्र छुड़ानेवाला प्रभु यीशु ख्रीष्ट है, जो परमेश्वर का सनातन पुत्र होते हुए, मानव बना, और इस प्रकार दो अलग-अलग स्वभावों और एक व्यक्ति में, वह परमेश्वर एवं मनुष्य था, और निरंतर हमेशा रहेगा।

1 तीमुथियुस 2:5 – 6; यूहन्ना 1:14;. गलातियों 4:4; रोमियों 9:5; लूका 1:35; कुलुस्सियों 2:9; इब्रानियों 7:24 – 25.

प्र. 22. ख्रीष्ट, परमेश्वर का पुत्र होते हुए, किस रीति से मनुष्य बना?

उ. परमेश्वर का पुत्र, ख्रीष्ट, वास्तविक शरीर व यथार्थ विवेकी आत्मा को धारण करके मनुष्य बना, और पवित्र आत्मा की सामर्थ्य से कुंवारी मरियम की कोख में गर्भधारण होकर उससे पैदा हुआ, फिर भी वह निष्पाप है।

इब्रानियों 2:14, 16; इब्रानियों 10:5; मत्ती 26:38; लूका 1:27, 31, 35, 42; गलातियों 4:4; इब्रानियों 4:15; इब्रानियों 7:26.

प्र. 23. हमारा छुड़ानेवाला होकर, ख्रीष्ट कौन से पदों के कार्य को पूरा करता है?

उ. हमारा छुड़ानेवाला होकर, ख्रीष्ट अपने अपमान एवं प्रतिष्ठा दोनों ही अवस्था में नबी, याजक और राजा के पदों के कार्य को पूरा करता है।

प्रेरितों के काम 3:21 – 22; इब्रानियों 12:25 के साथ 2 कुरिन्थियों 13:3; इब्रानियों 5:5 – 7; इब्रानियों 7:25; भजन संहिता 2:6; यशायाह 9:6 – 7; मत्ती 21:5; भजन संहिता 2:8 – 11.

प्र. 24. ख्रीष्ट नबी के पद के कार्य को कैसे पूरा करता है?

उ. ख्रीष्ट अपने वचन एवं आत्मा के द्वारा, हमारे उद्धार के लिए परमेश्वर की इच्छा को हम पर प्रकट करके, नबी के पद के कार्य को पूरा करता

है।

यूहन्ना 1:18; 1 पतरस 1:10 – 12; यूहन्ना 15:15; यूहन्ना 20:31.

प्र. 25. ख्रीष्ट याजक के पद के कार्य को कैसे पूरा करता है?
उ. परमेश्वर के न्याय को संतुष्ट करने एवं परमेश्वर से हमारा मेल मिलाप कराने के लिए एक ही बार स्वयं का बलिदान करके चढ़ाने, और हमारे लिए निरंतर सदा विनती करने के द्वारा, ख्रीष्ट याजक के पद के कार्य को पूरा करता है।

इब्रानियों 9:14, 28; इब्रानियों 2:17; इब्रानियों 7:24 – 25.

प्र. 26. ख्रीष्ट राजा के पद के कार्य को कैसे पूरा करता है?
उ. हमें अपनी सामर्थ्य के अधीन में लाने, हम पर प्रभुता करने और हमारी रक्षा करने में, और अपने एवं हमारे सभी शत्रुओं को रोकने और उन पर विजय प्राप्त करने के द्वारा ख्रीष्ट राजा के पद के कार्य को पूरा करता है।

प्रेरितों के काम 15:14 – 16; यशायाह 33:22; यशायाह 32:1 – 2; 1कुरि 15:25.

प्र. 27. ख्रीष्ट का अपमान (Humiliation) किन बातों में निहित है?
उ. ख्रीष्ट का अपमान इन बातों में निहित होती है, कि वह पैदा हुआ, और गरीबी में पैदा हुआ, व्यवस्था के अधीनता में किया गया, इस जीवन के कष्टों, परमेश्वर के क्रोध, और क्रूस की स्रापित मौत को उसने सहा, दफ़नाया गया व कुछ समय के लिये मौत के वश में रहा।

लूका 2:7; गलातियों 4:4; इब्रानियों 12:2 – 3; यशायाह 53:2 – 3; लूका 22:44; मत्ती 27:46; फिलिप्पियों 2:8; 1कुरि 15:3 – 4; प्रेरितों के काम 2:24 – 27, 31.

प्र. 28. ख्रीष्ट की प्रतिष्ठा (Exaltation) किन बातों में निहित होती है?
उ. ख्रीष्ट की प्रतिष्ठा इन बातों में निहित होती है कि वह मृतकों में से तीसरे दिन जी उठा, स्वर्ग में ऊपर गया, पिता परमेश्वर के दाहिने हाथ बैठा, और अन्तिम दिन संसार का न्याय करने के लिए वह आएगा।

1 कुरिन्थियों 15:4; मरकुस 16:19; इफ़िसियों 1:20; प्रेरितों के काम 1:11; प्रेरितों के काम 17:31.

प्र. 29. हम ख्रीष्ट द्वारा खरीदे गए छुटकारे के भागी किस प्रकार बनाये जाते हैं?
उ. हम ख्रीष्ट द्वारा खरीदे गए छुटकारे के भागी, उसके पवित्र आत्मा द्वारा इसे हम में प्रभावशाली रीति से लागू करने के द्वारा बनाए जाते हैं।

यूहन्ना 1:11 – 12; तीतुस 3:5 – 6.

प्र. 30. पवित्र आत्मा, ख्रीष्ट द्वारा खरीदे गए छुटकारे को, हम में किस प्रकार लागू करता है?
उ. हम में विश्वास पैदा करने, और इस प्रकार हमें, हमारी प्रभावशाली बुलाहट में, ख्रीष्ट के साथ जोड़ने के द्वारा, पवित्र आत्मा, ख्रीष्ट द्वारा खरीदे गए छुटकारे को हम में लागू करता है।

इफिसियों 1:13 – 14; यूहन्ना 6:37, 39; इफिसियों 2:8; इफिसियों 3:17; 1 कुरिन्थियों 1:9.

प्र. 31. प्रभावशाली बुलाहट क्या है?
उ. प्रभावशाली बुलाहट परमेश्वर के आत्मा का वह कार्य है, जिसके द्वारा हमारे पाप व कष्ट के विषय में हमें क़ायल करके, हमारे मनों को ख्रीष्ट के ज्ञान में प्रकाशित करके, और हमारी इच्छाओं को नया करके, वह हमें यीशु ख्रीष्ट को, जैसे वह हमें सुसमाचार में मुफ्त पेश किया गया है, अपनाने के लिए मनाता व योग्य बनाता है।

2 तीमुथियुस 1:9; 2 थिस्सलुनिकियों 2:13 – 14; प्रेरितों के काम 2:37; प्रेरितों के काम 26:18; यहेजेकेल 36:26 – 27; यूहन्ना 6:44 – 45; फिलिप्पियों 2:13.

प्र. 32. वे जो प्रभावशाली रीति से बुलाये गये हैं, इस जीवन में क्या लाभ प्राप्त करते हैं?

उ. वे जो प्रभावशाली रीति से बुलाये गये हैं, इस जीवन में धर्मी ठहराया जाना, लेपालकपन और पवित्रीकरण, तथा अन्य कई लाभों को प्राप्त करते हैं, जो इस जीवन में इनके साथ आते हैं अथवा इनसे निकलते हैं।

रोमियों 8:30; इफिसियों 1:5; 1 कुरिन्थियों 1:26, 30.

प्र. 33. धर्मी ठहराया जाना क्या है?

उ. धर्मी ठहराया जाना परमेश्वर के मुफ्त अनुग्रह की एक क्रिया है, जिसके द्वारा वह हमारे सब पापों को क्षमा करता है, और अपनी दृष्टि में हमें धर्मी स्वीकार करता है। यह सिर्फ यीशु ख्रीष्ट की धार्मिकता के कारण है जो हमारे लिये गिनी जाती है, और केवल विश्वास से प्राप्त होती है।

रोमियों 3:24 – 25; रोमियों 4:6 – 8; 2 कुरिन्थियों 5:19, 21; रोमियों 5:17 – 19; गलातियों 2:16; फ़िलिप्पियों 3:9.

प्र. 34. लेपालकपन क्या है?

उ. लेपालकपन परमेश्वर के मुफ्त अनुग्रह की एक क्रिया है, जिसके द्वारा हम परमेश्वर के पुत्रों के स्वरूप में ग्रहण किये जाते हैं, और पुत्र होने के सब लाभों का अधिकार प्राप्त करते हैं।

1 यूहन्ना 3:1; यूहन्ना 1:12; रोमियों 8:17.

प्र. 35. पवित्रीकरण क्या है?

उ. पवित्रीकरण परमेश्वर के मुफ्त अनुग्रह का वह कार्य है, जिसके द्वारा हमारा संपूर्ण मनुष्यत्व परमेश्वर के स्वरूप के अनुसार नया बनाया जाता

हैं, और पाप के लिए अधिकाधिक मरते जाने और धार्मिकता के लिए जीवन बिताने के लिये हम योग्य बनाये जाते हैं।

2 थिस्सलुनिकियों 2:13; इफ़िसियों 4:23 – 24; रोमियों 6:4, 6; रोमियों 8:1.

प्र. 36. इस जीवन में जो लाभ धर्मी ठहराया जाने, लेपालकपन व पवित्रीकरण के साथ आते या उनसे निकलते हैं, वे क्या हैं?

उ. इस जीवन में जो लाभ धर्मी ठहराया जाने, लेपालकपन व पवित्रीकरण के साथ आते या उनसे निकलते हैं, वे यह हैं, परमेश्वर के प्रेम की निश्चयता, मन की शान्ति, पवित्र आत्मा में आनन्द, अनुग्रह का बढ़ना और उसमें अपने जीवन के अंत तक स्थिर बने रहना।

रोमियों 5:1 – 2, 5; रोमियों 14:17; नीतिवचन 4:18; 1 यूहन्ना 5:13; 1 पतरस 1:5.

प्र. 37. विश्वासियों को मृत्यु के समय पर ख्रीष्ट से क्या लाभ प्राप्त होते हैं?

उ. विश्वासियों की आत्माएँ उनकी मृत्यु के समय पर पवित्रता में सिद्ध की जाती हैं, और तुरन्त महिमा में चली जाती हैं। उनके शरीर अभी भी ख्रीष्ट में जुड़े होकर अपनी क़ब्रों में पुनरुत्थान के दिन तक आराम करते हैं।

इब्रानियों 12:23; 2 कुरिन्थियों 5:1, 6, 8; फ़िलिप्पियों 1:23; लूका 23:43; 1 थिस्सलुनिकियों 4:14; यशायाह 57:2; अय्युब 19:26 – 27.

प्र. 38. विश्वासी पुनरुत्थान पर ख्रीष्ट से क्या लाभ प्राप्त करते हैं?

उ. पुनरुत्थान पर विश्वासी महिमा में जिलाए जाएँगे, और न्याय के दिन सब के सामने स्वीकार किए एवं निर्दोष ठहराये जाएँगे, और अनन्तकाल तक परमेश्वर का सम्पूर्ण आनन्द लेते हुए पूर्णतः आशीषित किए जायेंगे।

1 कुरिन्थियों 15:43; मत्ती 25:23; मत्ती 10:32; 1 यूहन्ना 3:2; 1 कुरिन्थियों 13:12; 1 थिस्सलुनिकियों 4:17 – 18.

प्र. 39.परमेश्वर मानव से क्या कर्तव्य चाहता है?

उ. परमेश्वर मानव से चाहता है, कि मानव उसकी प्रकट इच्छा के प्रति आज्ञाकारी रहे।

मीका 6:8; 1 शमूएल 15:22.

प्र. 40. अपनी आज्ञाकारिता के लिये परमेश्वर ने मानव के लिए कौन सा नियम सबसे पहला प्रकट किया?

उ. अपनी आज्ञाकारिता के लिये परमेश्वर ने मानव के लिए जिस नियम को सबसे पहले प्रकट किया, वह नैतिक व्यवस्था थी।

रोमियों 2:14-15; रोमियों 10:5.

प्र. 41. यह नैतिक व्यवस्था संक्षेप में कहाँ निहित है?

उ. यह नैतिक व्यवस्था संक्षेप में दस आज्ञाओं में निहित है।

व्यवस्थाविवरण 10:4; मत्ती 19:17.

प्र. 42. दस आज्ञाओं का सार क्या है?

उ. दस आज्ञाओं का सार यह है, कि हम परमेश्वर अपने प्रभु से अपने सारे मन और अपने सारे प्राण और अपनी सारी सामर्थ्य और अपनी सारी बुद्धि के साथ प्रेम रखें; और अपने पड़ोसी से अपने समान प्रेम रखें।

मत्ती 22:37-40.

प्र. 43. दस आज्ञाओं की भूमिका क्या है?

उ. दस आज्ञाओं की भूमिका इन शब्दों में है, "मैं तेरा परमेश्वर यहोवा हूँ, जो तुझे दासत्व के घर अर्थात् मिस्र देश से निकाल लाया है।"

निर्गमन 20:2.

प्र. 44. दस आज्ञाओं की भूमिका हमें क्या सिखाती है?
उ. दस आज्ञाओं की भूमिका हमें यह सिखाती है, कि क्योंकि यहोवा परमेश्वर है, और हमारा परमेश्वर और छुड़ानेवाला है, इसलिये हम उसकी सभी आज्ञाओं का पालन करने के लिए बाध्य है।

लूका 1:74-75; 1 पतरस 1:15-19.

प्र. 45. पहली आज्ञा क्या है?
उ. पहली आज्ञा यह है, "तू मुझे छोड़ दूसरों को ईश्वर करके न मानना।"

निर्गमन 20:3.

प्र. 46. पहली आज्ञा में क्या करना आवश्यक है?
उ. पहली आज्ञा में आवश्यक है, कि हम परमेश्वर को ही एकमात्र सच्चा परमेश्वर और अपना परमेश्वर जानें और स्वीकार करें, और इसी के अनुसार ही उसकी आराधना और महिमा करें।

1 इतिहास 28:9; व्यवस्थाविवरण 26:17; मत्ती 4:10; भजन संहिता 29:2.

प्र. 47. पहली आज्ञा में क्या मना किया गया है?
उ. पहली आज्ञा में यह मना है - सच्चे परमेश्वर का इनकार करना, या उसे सच्चे परमेश्वर और अपने परमेश्वर होने के अनुसार उसकी आराधना और महिमा न करना; एवं उस आराधना और महिमा को जिसके योग्य केवल वह है, किसी अन्य को देने के लिए यह हमें मना करता है।

भजन संहिता 14:1; रोमियों 1:21; भजन संहिता 81:10-11; रोमियों 1:25 – 26.

प्र. 48. पहली आज्ञा के इन शब्दों में, अर्थात "मुझे छोड़", हमें क्या विशेष रूप से सिखाया गया है?
उ. पहली आज्ञा में ये शब्द, "मुझे छोड़", हमें यह सिखाते हैं, कि परमेश्वर

जो सब कुछ देखता है, वह किसी दूसरे ईश्वर को मानने के पाप पर दृष्टि करता व उससे बहुत क्रोधित होता है।

यहेजेकेल 8:5 – 18; भजन संहिता 44:20 – 21.

प्र. 49. दूसरी आज्ञा क्या है?

उ. दूसरी आज्ञा यह है, "तू अपने लिये कोई मूर्ति खोदकर न बनाना, न किसी की प्रतिमा बनाना, जो आकाश में, या पृथ्वी पर, या पृथ्वी के जल में है। तू उनको दण्डवत् न करना, और न उनकी उपासना करना; क्योंकि मैं तेरा परमेश्वर यहोवा जलन रखने वाला परमेश्वर हूँ, और जो मुझ से बैर रखते हैं, उनके बेटों, पोतों, और परपोतों को भी पितरों का दण्ड दिया करता हूँ, और जो मुझ से प्रेम रखते और मेरी आज्ञाओं को मानते हैं, उन हज़ारों पर करुणा किया करता हूं।"

निर्गमन 20:4 – 6.

.

प्र. 50. दूसरी आज्ञा में क्या करना आवश्यक है?

उ. दूसरी आज्ञा में आवश्यक है कि सभी आराधना के रीति और विधियों को, जैसे परमेश्वर ने अपने वचन में ठहराये हैं, उन्हें हम ग्रहण करें, मानें और शुद्ध और सम्पूर्ण रखें।

व्यवस्थाविवरण 32:46; मत्ती 28:20; प्रेरितों के काम 2:42.

प्र. 51. दूसरी आज्ञा में क्या मना किया गया है?

उ. दूसरी आज्ञा में मूर्तियों के द्वारा, या किसी अन्य तरीके से जो परमेश्वर के वचन में नहीं ठहराया गया, परमेश्वर की आराधना करना मना है।

व्यवस्थाविवरण 4:15 – 19; निर्गमन 32:5, 8; व्यवस्थाविवरण 12:31 – 32.

प्र. 52. दूसरी आज्ञा के साथ कौन से तर्क जुड़े हैं?

उ. दूसरी आज्ञा के साथ जुड़े तर्क यह हैं कि परमेश्वर का संपूर्ण प्रभुत्त्व हमारे ऊपर है, उसका औचित्य हम में है, और उचित रीति से अपनी आराधना किए जाने की वह जलन रखता है।

भजन संहिता 95:2 – 3, 6; भजन संहिता 45:11; निर्गमन 34:13 – 14.

प्र. 53. तीसरी आज्ञा क्या है?

उ. तीसरी आज्ञा यह है कि तू अपने परमेश्वर का नाम व्यर्थ न लेना; क्योंकि जो यहोवा का नाम व्यर्थ ले वह उसको निर्दोष न ठहराएगा।

निर्गमन 20:7.

प्र. 54. तीसरी आज्ञा में क्या करना आवश्यक है?

उ. तीसरी आज्ञा में आवश्यक है कि परमेश्वर के नामों, उपाधियों, गुणों, आराधना के नियमों, वचन और कार्यों को पवित्रता और आदर के साथ उपयोग किया जाए।

मत्ती 6:9; व्यवस्थाविवरण 28:58; भजन संहिता 68:4; प्रकाशितवाक्य 15:3 – 4; मलाकी 1:11, 14; भजन संहिता 138:1 – 2; अय्युब 36:24.

प्र. 55. तीसरी आज्ञा में क्या मना किया गया है?

उ. तीसरी आज्ञा ऐसी किसी भी वस्तु को तुच्छ जानने एवं निन्दा करने से मना करती है, जिसके द्वारा परमेश्वर अपने आपको प्रकट करता है।

मलाकी 1:6 – 7, 12; मलाकी 2:2; मलाकी 3:14.

प्र. 56. तीसरी आज्ञा के साथ क्या तर्क जुड़ा है?

उ. तीसरी आज्ञा के साथ जुड़ा तर्क यह है, कि इस आज्ञा को तोड़ने वाले लोग, भले ही मनुष्यों के दण्ड से बच जाएं, तो भी यहोवा हमारा परमेश्वर

उन्हें अपने धर्मी न्याय से कदापि न बचने देगा।

1 शमूएल 2:12, 17, 22, 29; 1 शमूएल 3:13; व्यवस्थाविवरण 28:58 – 59.

प्र. 57. चौथी आज्ञा क्या है?

उ. चौथी आज्ञा यह है कि, तू विश्रामदिन को पवित्र मानने के लिए स्मरण रखना। छः दिन तो तू परिश्रम करके अपना सब काम-काज करना; परन्तु सातवाँ दिन तेरे परमेश्वर यहोवा के लिये विश्रामदिन है। उसमें न तो तू किसी भाँति का काम-काज करना, और न तेरा बेटा, न तेरी बेटी, न तेरा दास, न तेरी दासी, न तेरे पशु, न कोई परदेशी जो तेरे फाटकों के भीतर हो; क्योंकि छः दिन में यहोवा ने आकाश, और पृथ्वी, और समुद्र, और जो कुछ उनमें हैं, सब को बनाया, और सातवें दिन विश्राम किया; इस कारण यहोवा ने विश्रामदिन को आशीष दी और उसको पवित्र ठहराया।

निर्गमन 20:8 – 11.

प्र. 58. चौथी आज्ञा में क्या करना आवश्यक है?

उ. चौथी आज्ञा में उन निर्धारित समयों को पवित्र बनाए रखना आवश्यक है, जिन्हें परमेश्वर ने अपने वचन में नियुक्त किए हैं; स्पष्ट रूप से सप्ताह में एक पूरा दिन, जिसको उसने अपने लिए पवित्र विश्रामदिन ठहराया है।

व्यवस्थाविवरण 5:12 – 14.

प्र. 59. सात दिनों में से किस दिन को परमेश्वर ने साप्ताहिक विश्रामदिन ठहराया है?

उ. संसार के आरम्भ से लेकर ख्रीष्ट के जी उठने तक, परमेश्वर ने सप्ताह के सातवें दिन को साप्ताहिक विश्रामदिन नियुक्त किया था; और ख्रीष्ट के जी उठने से लेकर संसार के अन्त तक, सप्ताह के पहले दिन को नियुक्त किया है, जो कि मसीही विश्रामदिन है।

उत्पत्ति 2:2 – 3; 1 कुरिन्थियों 16:1 – 2; प्रेरितों के काम 20:7.

प्र. 60. विश्रामदिन को कैसे पवित्र रखा जाए?

उ. विश्रामदिन को ऐसे पवित्र रखा जाए, कि पूरे दिन पवित्र विश्राम करें, यहाँ तक कि ऐसे सांसारिक और मनोरंजन के कार्य, जो अन्य दिनों में उचित है, उनसे विश्राम करें; और, दया के और अति आवश्यकता के कार्यों के समय को छोड़कर, पूर्ण समय सामूहिक और व्यक्तिगत रूप से परमेश्वर की आराधना में लगाए।

निर्गमन 20:8, 10; निर्गमन 16:25 – 28; नहेम्याह 13:15 – 19, 21 – 22; लूका 4:16; प्रेरितों के काम 20:7; भजन संहिता 92 शीर्षक; यशायाह 66:23; मत्ती 12:1 – 13.

प्र. 61. चौथी आज्ञा में क्या मना किया गया है?

उ. चौथी आज्ञा में यह मना है, कि विश्रामदिन के लिए जो कर्तव्य कर्म ठहराये हुए हैं, उनको न करना, या उनको लापरवाही के साथ करना। साथ में यह भी मना किया गया है, कि आलस्य से, या पापमय कार्य करने से, या हमारे सांसारिक काम और मनोरंजन के विषय में अनावश्यक विचार, शब्द और काम करने से, उस दिन को अपवित्र करना।

यहेजेकेल 22:26; आमोस 8:5; मलाकी 1:13; प्रेरितों के काम 20:7, 9; यहेजेकेल 23:38; यिर्मयाह 17:24 – 26; यशायाह 58:13.

प्र. 62. चौथी आज्ञा के साथ क्या तर्क जुड़े हैं?

उ. चौथी आज्ञा के साथ जुड़े तर्क ये हैं: कि परमेश्वर ने हमारे काम धन्धों के लिए सप्ताह के छ: दिन हमें दिये हैं; सातवें दिन को उसने अपने लिए ठहराया है; उसने आप ही सातवें दिन सृष्टि की उत्पत्ति करने से विश्राम कर हमें विश्राम करने का एक नमूना दिया; और उसने विश्रामदिन को आशीषित ठहराया।

निर्गमन 20:9, 11.

प्र. 63. पाँचवी आज्ञा क्या है?

उ. पाँचवी आज्ञा यह है कि, तू अपने पिता और अपनी माता का आदर करना, जिससे जो देश तेरा परमेश्वर यहोवा तुझे देता है, उसमें तू बहुत दिन तक रहने पाए।

निर्गमन 20:12.

प्र. 64. पाँचवी आज्ञा में क्या करना आवश्यक है?

उ. पाँचवी आज्ञा में आवश्यक है कि हम प्रत्येक जन को उनके पद और सम्बन्ध के अनुसार, चाहे वे हम से बड़े, छोटे, या हमारे बराबर के हों, उनके आदर को बना कर रखें और उनके प्रति कर्तव्य को पूरा करें।

इफ़िसियों 5:21; 1 पतरस 2:17; रोमियों 12:10.

प्र. 65. पाँचवी आज्ञा में क्या मना किया गया है?

उ. पाँचवी आज्ञा हर एक व्यक्ति के विभिन्न पदों और हमारे साथ उनके सम्बन्धों के अनुसार, उनके प्रति आदर और कर्तव्य की उपेक्षा करना या उनके विरूद्ध कुछ भी करने को मना करती है।

मत्ती 15:4 – 6; यहेजेकेल 34:2 – 4; रोमियों 13:8.

प्र. 66. पाँचवी आज्ञा के साथ क्या तर्क जुड़ा है?

उ. पाँचवी आज्ञा के साथ जुड़ा तर्क यह है, कि वे सभी जो इस आज्ञा का पालन करते हैं, उन्हें लम्बी आयु और सफलता की प्रतिज्ञा की गयी है (जब तक इससे परमेश्वर की महिमा व उनकी भलाई होती है)।

व्यवस्थाविवरण 5:16; इफ़िसियों 6:2 – 3.

प्र. 67. छठी आज्ञा क्या है?

उ. छठी आज्ञा यह है कि तू खून न करना।

निर्गमन 20:13.

प्र. 68. छठी आज्ञा में क्या करना आवश्यक है?

उ. छठी आज्ञा में आवश्यक है, कि हम, अपने जीवन और दूसरों के जीवन की सुरक्षा के लिये, सब उचित प्रयास करते रहें।

इफ़िसियों 5:28 – 29; 1 राजा 18:4.

प्र. 69. छठी आज्ञा में क्या मना किया गया है?

उ. छठी आज्ञा हमारे स्वयं के जीवन या अपने पड़ोसी के जीवन को अन्यायपूर्वक समाप्त करने, या किसी भी ऐसे कार्य को करने के लिए मना करती है, जिससे ऐसा हो सकता है।

प्रेरितों के काम 16:28; उत्पत्ति 9:6.

प्र. 70. सातवीं आज्ञा क्या है?

उ. सातवीं आज्ञा यह है कि, तू व्यभिचार न करना।

निर्गमन 20:14.

प्र. 71. सातवीं आज्ञा में क्या करना आवश्यक है?

उ. सातवीं आज्ञा में आवश्यक है कि हम स्वयं अपनी और अपने पड़ोसी की यौन पवित्रता को हृदय, बातचीत और व्यवहार में सुरक्षित बनाये रखें।

1 कुरिन्थियों 7:2 – 3, 5, 34, 36; कुलुस्सियों 4:6; 1 पतरस 3:2.

प्र. 72. सातवीं आज्ञा में क्या मना किया गया है?

उ. सातवीं आज्ञा सभी कामुकता वाले विचारों, शब्दों और कार्यों को मना करती है।

मत्ती 15:19; मत्ती 5:28; इफ़िसियों 5:3 – 4.

प्र. 73.आठवीं आज्ञा क्या है?

उ. आठवीं आज्ञा यह है कि, तू चोरी न करना।

निर्गमन 20:15.

प्र. 74. आठवीं आज्ञा में क्या करना आवश्यक है?

उ. आठवीं आज्ञा में आवश्यक है, कि अपने और दूसरों के, धन-सम्पति एवं बाहरी कल्याण को उचित रीति से कमाना और बढ़ाना।

उत्पत्ति 30:30; 1 तीमुथियुस 5:8; लैव्यवस्था 25:35; व्यवस्थाविवरण 22:1 – 5; निर्गमन 23:4 – 5; उत्पत्ति 47:14, 20.

प्र. 75. आठवीं आज्ञा में क्या मना किया गया है?

उ. आठवीं आज्ञा में ऐसी कोई भी बात मना है, जो हमारे स्वयं के या दूसरों के धन-सम्पत्ति या बाहरी कल्याण को अनुचित रीति से बाधित करती है।

नीतिवचन 21:17; नीतिवचन 23:20 – 21; नीतिवचन 28:19; इफ़िसियों 4:28.

प्र. 76. नवीं आज्ञा क्या है?

उ. नवीं आज्ञा यह है कि, तू अपने पड़ोसी के विरूद्ध झूठी साक्षी न देना।

निर्गमन 20:16.

प्र. 77. नवीं आज्ञा में क्या करना आवश्यक है?

उ. नवीं आज्ञा में आवश्यक है, कि मनुष्य-मनुष्य के बीच सत्य को बनाये रखें और प्रोत्साहित करें, और अपने एवं अपने पड़ोसी के अच्छे नाम को बनाये रखें एवं प्रोत्साहित करें, विशेषकर जब न्यायालय में साक्षी देते हैं।

जकर्याह 8:16; 3 यूहन्ना 1:12; नीतिवचन 14:5, 25.

प्र. 78. नवीं आज्ञा में क्या मना किया गया है?

उ. नवीं आज्ञा ऐसी कोई भी बात मना करती है, जो सत्य को विकृत करे, अथवा जो हमारे स्वयं या हमारे पड़ोसी के अच्छे नाम के लिये हानिकारक हो।

1 शमूएल 17:28; लैव्यवस्था 19:16; भजन संहिता 15:3.

प्र. 79. दसवीं आज्ञा क्या है?

उ. दसवीं आज्ञा यह है कि, तू अपने पड़ोसी के धर का लालच न करना; न तो अपने पड़ोसी की स्त्री का लालच करना, और न उसके किसी के दास-दासी या बैल-गदहे का, न अपने पड़ोसी की किसी वस्तु का लालच करना।”

निर्गमन 20:17.

प्र. 80. दसवीं आज्ञा में क्या करना आवश्यक है?

उ. दसवीं आज्ञा में आवश्यक है, कि अपनी स्वयं की दशा पर पूर्ण संतोष रखना, और दूसरों, और जो भी कुछ उनका है, उसके प्रति उचित और प्रेम वाली आत्मिक मंशा (स्वभाव) रखना।

इब्रानियों 13:5; 1 तीमुथियुस 6:6; अय्युब 31:29; रोमियों 12:15; 1 तीमुथियुस 1:5; 1 कुरिन्थियों 13:4 – 7.

प्र. 81. दसवीं आज्ञा में क्या मना किया गया है?

उ. दसवीं आज्ञा में अपनी दशा के बारे में सभी असन्तुष्टी, अपने पड़ोसी की अच्छी दशा पर दुखित होना या जलन रखना, और, जो भी कुछ उसका है, उसके प्रति अनुचित कार्य करना व लगाव रखना मना है।

1 राजा 21:4; एस्तर 5:13; 1 कुरिन्थियों 10:10; गला 5:26; याकूब 3:14, 16; रोमियों 7:7 – 8; रोमियों 13:9; व्यवस्थाविवरण 5:21.

प्र. 82. क्या कोई मनुष्य इस योग्य है, कि वह सिद्धता परमेश्वर की आज्ञाओं को पूरा कर सके?

उ. पाप में गिरावट के बाद कोई भी मनुष्य मात्र, इस जीवन में इस योग्य नहीं, कि सिद्धता से परमेश्वर की आज्ञाओं को पूरा कर सके, वरन प्रत्येक व्यक्ति प्रतिदिन विचार, बातों और कार्यों में उनका उल्लंघन करता है।

सबोपदेशक 7:20; 1 यूहन्ना 1:8, 10; गलातियों 5:17; उत्पत्ति 6:5; उत्पत्ति 8:21; रोम 3:9 – 21; याकुब 3:2 – 13.

प्र. 83. क्या परमेश्वर की व्यवस्था के सभी उल्लंघन एक समान घृणित हैं?

उ. नहीं! कुछ पाप अपने आप में, और कई भ्रष्ट विकृतियों के कारण, अन्य पापों की अपेक्षा परमेश्वर की दृष्टि में अधिक घृणित हैं।

यहेजेकेल 8:6, 13, 15; 1 यूहन्ना 5:16; भजन संहिता 78:17, 32, 56.

प्र. 84. प्रत्येक पाप का प्रतिफल क्या है?

उ. प्रत्येक पाप का प्रतिफल, इस जीवन और आने वाले जीवन में, परमेश्वर का क्रोध व श्राप है।

इफ़िसियों 5:6; गला 3:10; विलापगीत 3:39; मत्ती 25:41.

प्र. 85. परमेश्वर हमसे क्या चाहता है, कि, पाप के कारण हम पर आये, उसके क्रोध व श्राप से हम बच सकें?

उ. पाप के कारण हम पर आये उसके क्रोध व श्राप से बचने के लिए, परमेश्वर चाहता है, कि हम यीशु ख्रीष्ट पर विश्वास करें, जीवन के लिए मन फिराएँ, और उन सभी बाहरी साधनों का, जिनसे ख्रीष्ट हमें छुटकारे (उद्धार)

का लाभ पहुँचाता है, उत्साहपूर्वक उपयोग करें।

प्रेरितों के काम 20:21; नीतिवचन 2:1 – 5; नीतिवचन 8:33 – 36; यशायाह 55:3.

प्र. 86 .यीशु ख्रीष्ट पर विश्वास क्या है?

उ. यीशु ख्रीष्ट पर विश्वास उद्धार देने वाला ऐसा अनुग्रह है, जिसके द्वारा हम उद्धार के लिये केवल उसी को ऐसे स्वीकार और उस पर ऐसा भरोसा करते हैं, जैसे वह सुसमाचार में हमारे लिए प्रस्तुत किया गया है।

इब्रानियों 10:39; यूहन्ना 1:12; यशायाह 26:3 – 4; फ़िलिप्पियों 3:9; गला 2:16.

प्र. 87. जीवन के लिए मन फिराव क्या है?

उ. जीवन के लिए मन फिराव, उद्धार देने वाला ऐसा अनुग्रह है, जिसके द्वारा एक पापी व्यक्ति, पाप का वास्तविक आभास पाकर, और ख्रीष्ट में परमेश्वर की दया को पहचानकर, अपने पाप के प्रति शोक एवं घृणा के साथ, उस (पाप) से पूर्ण उद्देश्य और प्रयास के साथ नई आज्ञा पालन करके परमेश्वर की ओर फिरता है।

प्रेरितों के काम 11:18; प्रेरितों के काम 2:37 – 38; योएल 2:12; यिर्मयाह 3:22; यिर्मयाह 31:18 – 19; यहेजेकेल 36:31; 2 कुरिन्थियों 7:11; यशायाह 1:16 – 17.

प्र. 88. वे बाहरी साधन क्या हैं, जिनके द्वारा ख्रीष्ट हमें छुटकारे के लाभों को पहुँचाता है?

उ. वे बाहरी व साधारण साधन, जिनके द्वारा ख्रीष्ट हमें छुटकारे के लाभों पहुँचाता है, उसकी ठहराई हुई विधियाँ, विशेष रूप से उसका वचन (बाइबल), पवित्र मसीही संस्कार और प्रार्थना हैं ; ये सब उद्धार के लिए उसके चुने हुए लोगों में प्रभावी बनाए जाते हैं।

मत्ती 28:18 – 20; प्रेरितों के काम 2:42, 46 – 47.

प्र. 89. वचन (बाइबल) को किस प्रकार से उद्धार के लिए प्रभावशाली बनाया जाता है?

उ. परमेश्वर का आत्मा, पापियों को क़ायल करने एवं उनके मन फिराने के लिये, और उन्हें उद्धार के लिए विश्वास के द्वारा पवित्रता एवं दिलासा में बढ़ाने के लिए, वचन (बाइबल) के पढ़े जाने को, विशेष रूप से वचन के प्रचार किए जाने को एक प्रभावशाली साधन बनाता है।

नहेम्याह 8:8; 1 कुरिन्थियों 14:24 – 25; प्रेरितों के काम 26:18; भजन संहिता 19:8; प्रेरितों के काम 20:32; रोमियों 15:4; 2 तीमुथियुस 3:15 – 17; रोमियों 10:13 – 17; रोमियों 1:16.

प्र. 90. वचन (बाइबल) को किस प्रकार पढ़ना और सुनना चाहिए, जिससे कि वह उद्धार के लिए प्रभावी बन जाये?

उ. उद्धार के निमित वचन को प्रभावी बनने के लिए, हमें परिश्रमशीलता, तैयारी, एवं प्रार्थना के साथ इस पर सावधानीपूर्वक मनन करना चाहिए; हमें प्रेम और विश्वास के साथ उसे स्वीकार करना, अपने हृदयों में रख छोड़ना, और अपने जीवन में उसे लागू करना चाहिए।

नीतिवचन 8:34; 1 पतरस 2:1 – 2; भजन संहिता 119:18; इब्रानियों 4:2; 2 थिस्सलुनिकियों 2:10; भजन संहिता 119:11; लूका 8:15; याकूब 1:25.

प्र. 91. मसीही संस्कार (Sacraments) किस प्रकार उद्धार के लिये प्रभावी साधन बनते हैं?

उ. मसीही संस्कार (Sacraments) उद्धार के लिए प्रभावी साधन बन जाते हैं, इस कारण से नहीं कि उनमें या उन लोगों में जो उनका प्रबंधन करते हैं, कोई विशेष व श्रेष्ठ शक्ति है, परंतु इसके विपरीत केवल ख्रीष्ट की आशीष और उसकी आत्मा का उन लोगों में कार्य करने से, जो उन पवित्र संस्कारों में विश्वास के साथ भाग लेते हैं।

1 पतरस 3:21; मत्ती 3:11; 1 कुरिन्थियों 3:6 – 7; 1 कुरिन्थियों 12:13.

प्र. 92. मसीही संस्कार (Sacrament) क्या है?
उ. मसीही संस्कार (Sacrament), ख्रीष्ट द्वारा नियुक्त किया गया, एक पवित्र संस्कार है, जिसमें इंद्रियों से अनुभव योग्य चिन्हों द्वारा, ख्रीष्ट और नई वाचा की आशीषें, विश्वासियों के लिए प्रस्तुत, प्रमाणित एवं लागू की जाती हैं।

उत्पत्ति 17:7, 10; निर्गमन 12; 1 कुरिन्थियों 11:23, 26.

प्र. 93. नये नियम के मसीही संस्कार (Sacraments) कौन से हैं?
उ. नये नियम के मसीही संस्कार (Sacraments) बपतिस्मा और प्रभु भोज हैं।

मत्ती 28:19; मत्ती 26:26 – 28.

प्र. 94. बपतिस्मा क्या हैं?
उ. बपतिस्मा, पिता और पुत्र और पवित्र आत्मा के नाम में जल से स्नान का एक मसीही संस्कार (Sacrament) है, जो ख्रीष्ट में हमारे साटे (Ingrafting) जाने, और अनुग्रह की वाचा के लाभों को प्राप्त करने, और प्रभु के होने के लिए हमारे जुड़ाव को दिखाता एवं प्रमाणित करता है।

मत्ती 28:19; रोमियों 6:4; गलातियों 3:27.

प्र. 95. किन लोगों को बपतिस्मा देना उचित है?
उ. बपतिस्मा किसी भी उस व्यक्ति को नहीं दिया जाना चाहिए जो किसी सदृश्य कलीसिया का सदस्य नहीं है, जब तक कि वे ख्रीष्ट में अपने विश्वास का और उसकी आज्ञापालन का अंगीकार न कर लें; लेकिन सदृश्य कलीसिया के सदस्यों के बच्चों को भी बपतिस्मा दिया जाना चाहिए।

प्रेरितों के काम 8:36 – 37; प्रेरितों के काम 2:38 – 39; उत्पत्ति 17:10 के साथ कुलुस्सियों 2:11 – 12; 1 कुरिन्थियों 7:14.

प्र. 96. प्रभु भोज क्या है?

उ. प्रभु भोज एक मसीही संस्कार (Sacrament) है, जिसमें रोटी एवं दाखरस को देने एवं ग्रहण करने के द्वारा, ख्रीष्ट की आज्ञा के अनुसार, उसकी मृत्यु को दिखाया व प्रचार किया जाता है; जो लोग उचित रीति से प्रभु भोज को ग्रहण करते हैं, वे उसके सभी लाभों के साथ, अपने आत्मिक पोषण एवं अनुग्रह में बढ़ने के लिए, ख्रीष्ट की देह एवं लहू में, शारीरिक व भौतिक रूप से नहीं, बल्कि विश्वास के द्वारा सहभागिता करते हैं।

1 कुरिन्थियों 11:23 – 26; 1 कुरिन्थियों 10:16.

प्र. 97. प्रभु भोज को उचित रीति से लेने के लिये क्या आवश्यक है?

उ. प्रभु भोज को उचित रीति से प्राप्त करने वालों के लिए यह आवश्यक है, कि वे प्रभु की देह को पहचानने के लिए अपने ज्ञान, उसमें पोषण पाने के लिए अपने विश्वास, और अपने पश्चाताप, प्रेम और नई आज्ञाकारिता के लिए स्वयं की जाँच करें। नहीं तो, यदि वे अनुचित रीति से प्रभु भोज प्राप्त करते हैं, तो इसके खाने और पीने से अपने ऊपर दण्ड को लेकर आते हैं।

1 कुरिन्थियों 11:28 – 29; 2 कुरिन्थियों 13:5; 1 कुरिन्थियों 11:31; 1 कुरिन्थियों 10:16 – 17; 1 कुरिन्थियों 5:7 – 8.

प्र. 98. प्रार्थना क्या है?

उ. प्रार्थना, ख्रीष्ट के नाम में, अपने पापों का अंगीकार करने और परमेश्वर की दया के प्रति धन्यवाद के साथ स्वीकृति के साथ, अपनी इच्छाओं को उन बातों के लिए परमेश्वर के सम्मुख समर्पित करना है, जो उसकी इच्छा के अनुसार है।

भजन संहिता 62:8; 1 यूहन्ना 5:14; यूहन्ना 16:23; भजन संहिता 32:5 – 6; दानिय्येल 9:4; फिलिप्पियों 4:6.

प्र. 99. प्रार्थना में हमारे अगुआई करने के लिये परमेश्वर ने क्या नियम दिया है?

उ. परमेश्वर का सम्पूर्ण वचन प्रार्थना करने में हमारे अगुआई के लिये सहायक है; परन्तु अगआई का विशेष नियम ख्रीष्ट द्वारा उसके चेलों को सिखाई गई प्रार्थना है, जिसे सामान्यतः "प्रभु की प्रार्थना" कहते हैं।

1 यूहन्ना 5:14; मत्ती 6:9 – 13 के साथ लूका 11:2 – 4.

प्र. 100. प्रभु की प्रार्थना की प्रस्तावना हमें क्या सिखाती है?

उ. प्रभु की प्रार्थना की प्रस्तावना [यानी "हे हमारे पिता तू जो स्वर्ग में है"] हमें यह सिखाती है, कि हम पूर्ण पवित्र आदर और भरोसे के साथ परमेश्वर के निकट आएँ, जैसे बच्चा पिता के पास जाता है, क्योंकि वह हमारी सहायता करने को सामर्थी और तैयार है। साथ में यह भी सिखाती है, कि हमें दूसरों के साथ और दूसरों के लिए प्रार्थना करनी चाहिए।

मत्ती 6:9; रोमियों 8:15; लूका 11:13; प्रेरितों के काम 12:5; 1 तीमुथियुस 2:1 – 2.

प्र. 101. हम पहली विनती में क्या प्रार्थना करते हैं?

उ. पहली विनती में [यानी "तेरा नाम पवित्र माना जाये"] हम प्रार्थना करते हैं, कि परमेश्वर हमें और दूसरों को इस योग्य बनाए, कि सभी बातों में, जिनके द्वारा वह अपने आपको प्रगट करता है, हम उसकी महिमा करें, और यह कि वह सभी बातों को अपनी महिमा के लिए कार्यान्वित करेगा।

मत्ती 6:9; भजन संहिता 67:2 – 3; भजन संहिता 83.

प्र. 102. हम दूसरी विनती में क्या प्रार्थना करते हैं?

उ. दूसरी विनती में [यानी "तेरा राज्य आये"] हम यह प्रार्थना करते हैं, कि शैतान का राज्य नाश किया जाये; और यह कि अनुग्रह का राज्य बढ़ाया जाए, हम और दूसरे लोग इसमें लाए जायें और इसमें रखे जायें, और यह

कि महिमा का राज्य शीघ्र आये।

मत्ती 6:10; भजन संहिता 68:1, 18; प्रकाशितवाक्य 12:10 – 11; 2 थिस्सलुनिकियों 3:1; रोमियों 10:1; यूहन्ना 17:9, 20; प्रकाशितवाक्य 22:20.

प्र. 103. हम तीसरी विनती में क्या प्रार्थना करते हैं?

उ. तीसरी विनती में [यानी "तेरी इच्छा जैसे स्वर्ग में पूरी होती है वैसे ही पृथ्वी पर भी पूरी हो"] हम यह प्रार्थना करते हैं, कि परमेश्वर, अपने अनुग्रह के द्वारा, हमें सभी बातों में उसकी इच्छा को पहचानने, आज्ञा मानने और उसके आधीन रहने के लिए योग्य एवं इच्छुक बनाए, जैसे कि स्वर्ग में स्वर्गदूत करते हैं।

मत्ती 6:10; भजन संहिता 67; भजन संहिता 119:36; मत्ती 26:39; 2 शमूएल 15:25; अय्युब 1:21; भजन 103:20 – 21.

प्र. 104. हम चौथी विनती में क्या प्रार्थना करते हैं?

उ. चौथी विनती में [यानी "हमारे दिन भर की रोटी आज हमें दे"] हम प्रार्थना करते हैं, कि परमेश्वर के मुफ़्त दान से, हम इस जीवन की अच्छी वस्तुओं का एक पर्याप्त हिस्सा प्राप्त करें, और उनके साथ परमेश्वर की आशीषों का आनन्द मनाएँ।

मत्ती 6:11; नीतिवचन 30:8 – 9; उत्पत्ति 28:20; 1 तीमुथियुस 4:4 - 5.

प्र. 105. हम पांचवीं विनती में क्या प्रार्थना करते हैं?

उ. पांचवीं विनती में, [यानी "जैसे हम अपने अपराधियों को क्षमा करते हैं वैसे ही हमारे अपराधों को क्षमा कर"] हम प्रार्थना करते हैं, कि परमेश्वर, ख्रीष्ट के निमित्त, हमारे सब पापों को सेंत-मेंत क्षमा करे; हम हियाव के साथ इसे माँग पाते हैं, क्योंकि उसके अनुग्रह के द्वारा, हम दूसरों को हृदय से क्षमा करने के योग्य बनाये जाते हैं।

मत्ती 6:12; भजन संहिता 51:1 – 2, 7, 9; दानिय्येल 9:17 – 19; लूका 11:4; मत्ती 18:35.

प्र. 106. हम छठवीं विनती में क्या प्रार्थना करते हैं?

उ. छठवीं विनती में, [यानी "हमें परीक्षा में न ला, परंतु बुराई से बचा"] हम यह प्रार्थना करते हैं, कि परमेश्वर हमें या तो पाप में पड़ने की परीक्षा से बचाए, या जब हमारी परीक्षा होती है, तब वह हमें सम्भाले और पाप से बचा कर रखे।

मत्ती 6:12; मत्ती 26:41; 2 कुरिन्थियों 12:7 – 8.

प्र. 107. प्रभु की प्रार्थना का निष्कर्ष हमें क्या सिखाता है?

उ. प्रभु की प्रार्थना का निष्कर्ष [अर्थात "क्योंकि राज्य और पराक्रम और महिमा सदा तेरे ही हैं। आमीन।"] हमें यह सिखाता है, कि हम प्रार्थना में अपना प्रोत्साहन केवल परमेश्वर से लें, और अपनी प्रार्थनाओं में, उस के राज्य, पराक्रम और महिमा के लिये (उसे श्रेय देते हुए) उसकी प्रशंसा करें; और हमारी प्रार्थना के सुने जाने की लालसा और निश्चितता की साक्षी में हम कहते हैं, आमीन [अर्थात ऐसा ही हो]।

मत्ती 6:13; दानिय्येल 9:4 – 9, 16 – 19; 1 इतिहास 29:10 – 13; 1 कुरिन्थियों 14:16; प्रकाशितवाक्य 22:20 – 21.

अध्याय 1. पवित्रशास्त्र (बाइबल) के विषय में

1. यद्यपि प्रकृति का ज्ञान, और सृष्टि एवं दिव्य प्रबन्धन के कार्य, अब तक परमेश्वर की भलाई, बुद्धि, और सामर्थ्य को प्रकट करते हैं, जिससे मनुष्य निरुत्तर हो जाते हैं;क फिर भी वे परमेश्वर के उस ज्ञान पर कार्य करने में, और उसकी उस इच्छा को पूरा करने में अपर्याप्त हैं, जो कि उद्धार के लिए आवश्यक है;ख इसलिए विभिन्न समयों पर, और विविध तरीकों से, कलीसिया के लिए स्वयं को प्रकट करने, और अपनी इच्छा को घोषित करने में प्रभु को प्रसन्नता हुई;ग और उसके पश्चात्, सत्य के बेहतर संरक्षण एवं प्रचार के लिए, और शरीर की भ्रष्टता, और शैतान एवं संसार के द्वेष के विरुद्ध, कलीसिया की अधिक पक्की स्थापना एवं शान्ति के लिए, उसे सम्पूर्ण रूप से लेख के रूप में समर्पित किया;घ जो पवित्रशास्त्र (बाइबल) को अति आवश्यक बनाता है;ङ क्योंकि अपने लोगों के लिए परमेश्वर द्वारा अपनी इच्छा को प्रकट करने के वे पूर्व तरीके अब समाप्त हो गए हैं।च

क. भजन संहिता 19:1 – 3; रोमियों 1:19 – 20; 1:32; के साथ रोमियों 2:1; 2:14 – 15. ख. 1 कुरिन्थियों 1:21; 2:13 – 14; ग. इब्रानियों 1:1. घ. नीतिवचन 22:19 – 21; यशायाह 8:19 – 20; मत्ती 4:4, 7, 10; लूका 1:3 – 4; रोमियों 15:4. ङ. 2 तीमुथियुस 3:15; 2 पतरस 1:19. च. इब्रानियों 1:1 – 2.

www.rtf-usa.com
rtfdirector@gmail.com